RNI No. MPHIN/2008/25073 डाक प्रेषण : प्रतिमाह की 7 तारीख डाक पंजीयन क्रमांक मालवा डिवीजन/324/2019-2021

प्रेषक : मुकेश वर्मा (प्रधान संपादक)
'समावर्तन' (हिन्दी मासिक)
माधवी, 129, दशहरा मैदान
उज्जैन (म.प्र.) 456 010

पुस्त–प्रेष्य

यहां पते चिपकाएं

स्वामी, प्रकाशक और मुद्रक अजय भट्टाचार्य द्वारा आकृति ऑफसेट, 5 नईपेठ, उज्जैन से मुद्रित एवं माधवी 129, दशहरा मैदान, उज्जैन से प्रकाशित। सम्पादक : श्रीराम दवे।

ISSN - 2348-8638

समावर्तन®

मासिक पत्रिका

वर्ष 12 ■ अंक 08 ■ पूर्णांक 140 ■ नवम्बर 2019 ■ ₹150/–

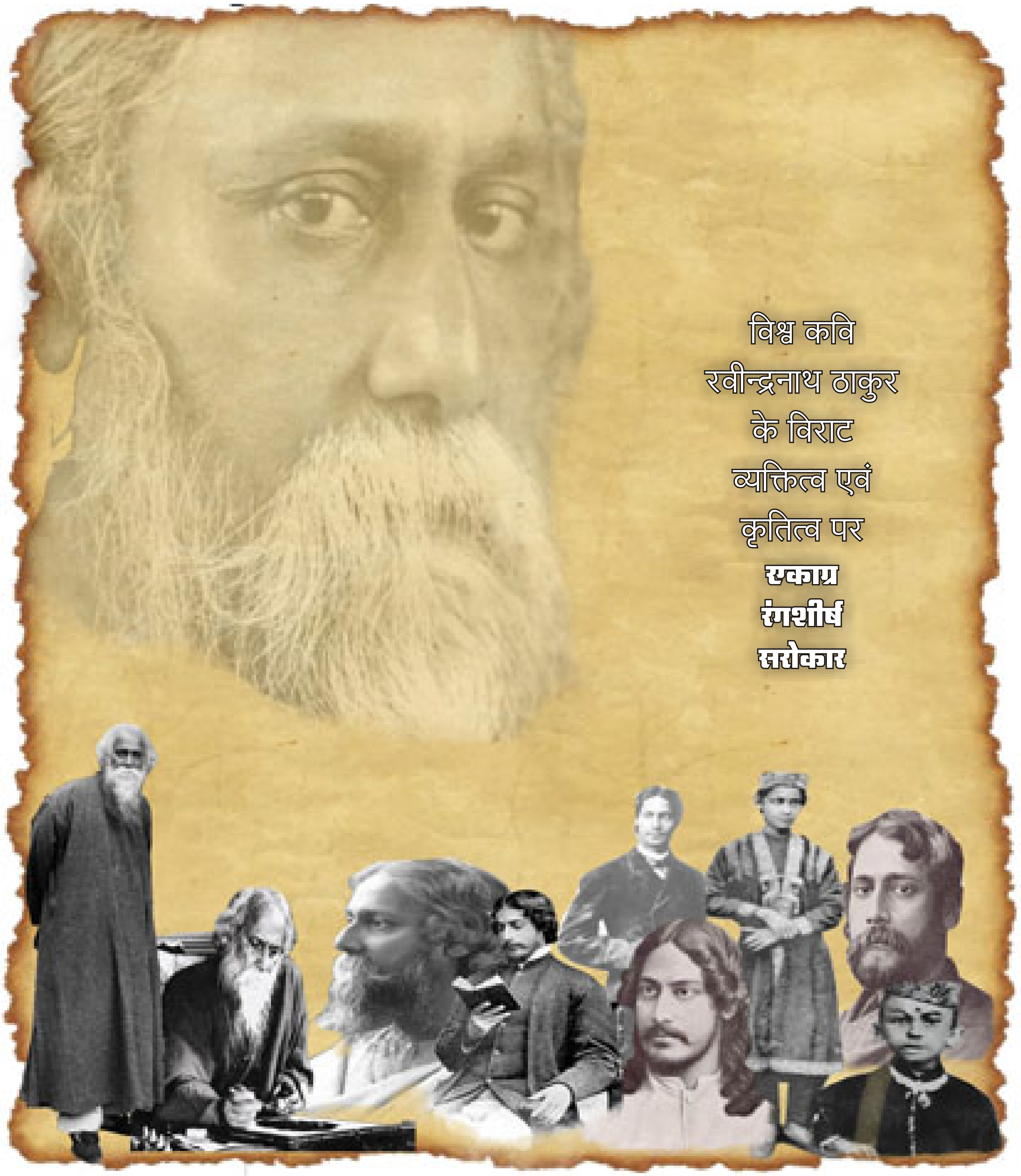

वर्ष 12 ■ अंक 08 ■ पूर्णांक 140 ■ नवम्बर 2019 ■ रू. 150/-

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नयीदिल्ली द्वारा मान्यता प्राप्त
दुष्यंत कुमार स्मारक पाण्डुलिपि संग्रहालय भोपाल द्वारा कमलेश्वर पुरस्कार वर्ष -2010
महाराष्ट्र राज्य हिन्दी साहित्य अकादमी द्वारा मान्यता प्राप्त

ISSN - 2348-8638

समावर्तन®

मासिक पत्रिका

सम्पादक मण्डल

संस्थापक : सम्पादन समन्वयक
प्रभातकुमार भट्टाचार्य, उज्जैन

अध्यक्ष : सम्पादक मण्डल
रमेश दवे, भोपाल
मो. 94065 23071

निदेशक प्रबन्धन
रमेश सोनी, इन्दौर
मो. 99264 97611

प्रधान सम्पादक
मुकेश वर्मा, भोपाल
मो. 94250 14166

मुख्य सम्पादक
निरंजन श्रोत्रिय, गुना
मो. 98270 07736

सम्पादक
श्रीराम दवे, उज्जैन
मो. 94259 15010

कार्यकारी सम्पादक
हरीशकुमार सिंह, उज्जैन
मो. 94254 81195

प्रबन्ध सम्पादक
सदाशिव कौतुक, इन्दौर
मो. 98930 34149

कला सम्पादक
अक्षय आमेरिया, उज्जैन
फो. 0734 2561120

जनसम्पर्क अधिकारी
प्रकाश बांठिया, उज्जैन
मो.98260 69558

सह सम्पादक
राजीव शुक्ला (संस्कृति), इन्दौर
निवेदिता वर्मा (सरोकार), उज्जैन
राधेश्याम मिश्र (प्रबन्ध), उज्जैन

सहायक सम्पादक
वाणी दवे शर्मा-इंदौर, हरदीप दायले-उज्जैन

कार्यालय सहायक
संजय मालवीय-उज्जैन, सुरेखा दायले-उज्जैन

सम्पादक मण्डल के सभी पद अवैतनिक है।

सम्पादकीय : प्रकाशकीय कार्यालय
"माधवी", 129, दशहरा मैदान,
उज्जैन (म.प्र.) 456010
फोन : 0734 2524457
(समय प्रातः 10 से 2 बजे तक)
ईमेल : samavartan@yahoo.com
वेबसाइट : www.samavartan.com

सह संस्थापक : सम्पादन परामर्शी
अभिलाष भट्टाचार्य, मुम्बई

मुख्य संरक्षक
संतोष चौबे, भोपाल

संरक्षकद्वय
ओम अमरनाथ, उज्जैन
राजू पटेल, मुम्बई

परामर्श मण्डल
गिरिराज किशोर (कानपुर), रश्मि वाजपेयी (दिल्ली), विश्वनाथ सचदेव (मुम्बई),
सादिक (दिल्ली), मंजु तिवारी (भोपाल), उर्मिला शिरीष (भोपाल), महेन्द्र गगन (भोपाल), सत्यमोहन वर्मा (दमोह)

समावर्तन का मूल्य
सदस्यता प्रति अंक : 150 रु. मासिक वार्षिक - 1500/-
विदेश के लिए प्रति अंक : 10 $ वार्षिक : 100 $

चेक पर केवल 'समावर्तन' लिखें तथा चेक अथवा मनिआर्डर निम्नलिखित पते पर भेजें
डॉ.प्रभातकुमार भट्टाचार्य
"माधवी", 129, दशहरा मैदान, उज्जैन (म.प्र.) 456010

समावर्तन का संचालक मण्डल
प्रनति भट्टाचार्य - अध्यक्ष, उज्जैन
कृष्णा बैनर्जी - संचालक, मुम्बई
तुहिन भट्टाचार्य - प्रबंध संचालक,सूरत

विशेष सम्पादक- वक्रोक्ति
सूर्यकान्त नागर, इन्दौर मो. 98938 10050

विशेष सम्पादक- नाट्यराग
भारतरत्न भार्गव - नयीदिल्ली, मो.98116 21626

विशेष परामर्शी - घरोंदे
प्रतापसिंह सोढ़ी, इन्दौर, मो.94795 60623

विशेष परामर्शी -लोकराग
शिव चौरसिया, उज्जैन, मो. 97700 78000

निदेशक - समावर्तन संकुल (प्रतिनिधि मण्डल)
प्रकाश रघुवंशी, उज्जैन, मो. 94250 91114

विशेष सम्पादक- साहित्य विचार
शैलेन्द्रकुमार शर्मा, उज्जैन मो. 98260 47765

दिल्ली ब्यूरो चीफ
परवेज़ अहमद
219, समाचार अपार्टमेन्ट मयूर विहार फेज़-1
दिल्ली-110054, मो. 098111 -54371

मुद्रणालय : आकृति ऑफसेट, 5 नईपेठ, उज्जैन (म.प्र.)

© सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक एवं प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है।
प्रकाशित रचनाओं के विचार से 'समावर्तन' का सहमत होना आवश्यक नहीं।
समस्त विवाद उज्जैन न्यायालय के अन्तर्गत विचारणीय।

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक
डॉ. अजय भट्टाचार्य, सूरत

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर विशेषांक

अतिथि संपादक

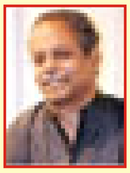

विश्वविख्यात चित्रकार,
प्रख्यात कवि, कथाकार, चिन्तक
अशोक भौमिक
नयी दिल्ली

समावर्तन

नवम्बर -2019

इस अंक में

प्रथम पृष्ठ	यह पृथ्वी चमकने लगती चाँदी की तरह : मुरलीधर चाँदनीवाला	05
अभिमुख	पूर्व के सूर्य - गीतांजलि के गायक रवीन्द्रनाथ : रमेश दवे	06
अतिथि संपादकीय	मानवतावाद के संदेशवाहक रवीन्द्रनाथ : अशोक भौमिक	07

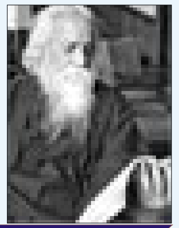

एकाग्र

रवीन्द्रनाथ ठाकुर का परिचय	09
रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविताएँ	10
रवीन्द्रनाथ ठाकुर की तीन कहानियाँ	13
रवीन्द्रनाथ की आत्मकथा में है उनकी सृजन यात्रा की चर्चा : गंगाशरण सिंह	23
गुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर की गीतांजलि एक निर्गुणवादी गीतिकाव्य : रमेश सोबती	25

सरोकार

रवीन्द्रनाथ ठाकुर का जीवनवृत्त : उत्पल बनर्जी	09
रवीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्र तथा पेंटिंग्स	37
रवीन्द्रनाथ ठाकुर की प्रकाशित रचनाओं का विवरण : उत्पल बनर्जी	41
शान्ति निकेतन : तपोवन आश्रम और विश्वभारती : रामशंकर द्विवेदी	47

रंगशीर्ष

बांग्ला आलेख : रवीन्द्रनाथ के चित्र : यामिनी राय	51
भारतीय चित्रकला परंपरा और रवीन्द्रनाथ ठाकुर : रवि भूषण, अनिल सिन्हा, मधु अग्रवाल, रतन परिभू, सुब्रतो विश्वास	53

रेखांकित	आदित्य शुक्ल की कविताएँ : चयन : निरंजन श्रोत्रिय	61
समकाल-कथाकाल	श्रीराम दवे की कहानी : अधूरी सी एक कहानी : चयन : मुकेश वर्मा	65
विश्वरंग विशेष	संतोष चौबे	67
साहित्यिक हलचल		72
अनंतिम	मुकेश वर्मा	74

अक्षर विन्यास : विवेक शर्मा * मुद्रण संशोधक : गरिमा दवे

यह पृथ्वी चमकने लगती चाँदी की तरह

ऋग्वेद के चतुर्थ मंडल के तीन सूक्तों को छोड़ कर शेष पूरा मंडल वामदेव ऋषि का ही है।वामदेव की गणना आदिम तीन ऋषियों में होती है । विश्वामित्र और वशिष्ठ की तरह वामदेव राजनैतिक प्रभुत्व तो नहीं रखते, किन्तु आर्ष प्रभुता में वामदेव शीर्ष पर हैं ।एक यही हैं, जिन्होंने अपना गोत्र नहीं चलाया। वामदेव की कविता मनुष्य की आदिम कविता है, और वह कविता के उच्चतम शिखर पर खड़ी है । यहाँ वामदेव की जो कविता उद्धृत है, वह हमारी पृथ्वी और मनुष्य की चमक से कितनी आह्लादित है, आप स्वयं इसे अनुभव कीजिए ।

एष स्य भानुरूदियर्ति युज्यते
रथ रू परिज्मा दिवो अस्य सानवि।
पृक्षासो अस्मिन् मिथुना अधि त्रयो
दृतिस्तुरीयो मधुनो वि रप्शते।।
ऋग्वेद, 4.45.1

देखो,यह सूरज उग रहा है,
द्यौ के ऊँचे धरातल पर
वह रथ तैयार खड़ा है
जो घूम आयेगा दसों दिशाओं मे
शक्ति और प्रकाश,
ज्ञान और संकल्प,
चेतना और बल बाँटता हुआ।
यह रथ चलेगा
और रिसने लगेगा मधु
यहाँ से वहाँ तक।।1।।

तुम मधु से भरे हुए
ऊपर उठते हो,
रथ में जुते हुए घोड़े दौड़ पड़ते
उषा का सिन्दूरी प्रकाश भर कर ।
अंधियारे पर्दे
समेट लिये जाते सब तरफ से,
यह पृथ्वी चमकने लगती चाँदी की तरह।।2।।

मधु पीने वाले हो तुम,
मधु का पान करो ।
मधु के लिये यात्रा आरम्भ करो ।
तुम्हारी गति में मधु हो,
तुम्हारे पथ पर मधु हो,
मधु से आच्छादित हो तुम्हारा मन।।3।।

वे हंस जो ले चलते तुम्हें
सोने के पंख फैलाये हुए,
उषा की किरणों के साथ-साथ
उड़ेलते जाते मधु की धाराएँ ।

जीवन बरसाते हुए
डूबते आनंद के महासागर में,
छू लेते यहाँ-वहाँ आनंद के
खुले हुए कोश वैसे ही, जैसे
मधुमक्खियाँ चूम लेतीं
मधु से भरे निसर्ग को ।।4।।

मधुर अग्नियाँ
प्रज्ज्वलित हो उठीं,
तुम्हारी ज्योति की याचना करती हुई
देखो, कितनी आतुर लग रही हैं ।
मनुष्य !
तुम्हारे हाथ कितने पवित्र,
तुम कितने सुशोभन,
तुम्हारे लक्ष्य कितने महान् ।
तुमने पत्थरों में से
सोम का रस निचोड़ लिया ।।5।।

तुम्हारे समीप ये जो अग्नियाँ हैं,
सोम का रस पीकर
जा बैठी हैं अश्वों पर,
दौड़ रही हैं अग्नियाँ
पृथ्वी को द्युलोक की भाँति
चमकाती हुईं ।
सूरज अपने घोड़े जोत कर
चल पड़ा है,
और तुम चल पड़े अपनी चेतना के
साहसिक अभियान पर ।।6।।

मैंने यह सब जो कुछ कहा,
अपने भीतर तक उतर कर
जो देखा वह कहा है ।
तुम्हारा रथ यह सनातन है
और तुम्हारे रथ के घोड़े अनश्वर ।
तुम सब लोकों के पार चले जाओगे,
आनंद में डूबी हवियाँ उद्यत हैं,
ले चलने को तुम्हें उस पार।।7।। स

डॉ.मुरलीधर चाँदनीवाला
मधुपर्क, 7, प्रियदर्शिनीनगर, रतलाम
मो.9424869460

पूर्व के सूर्य-गीतांजलि के गायक रवीन्द्रनाथ

रमेश दवे

रवीन्द्रनाथ ठाकुर नाम लेते ही 'गीतांजलि' का स्मरण उसी प्रकार हो जाता है जिस प्रकार महर्षि वेद-व्यास का नाम लेने पर 'गीता जैसी महान कृति का। 06 मई 1861 को जोड़ासांको कोलकाता के पैतृक मकान में देवेन्द्रनाथ ठाकुर को जब पुत्र प्राप्ति हुई तो ऐसा लगा था जैसे 'उस दिन रवीन्द्रनाथ का ही नहीं बल्कि पूर्व के सूर्य का उदय हुआ था। ऐसा भी लगा था जैसे माँ शारदा देवी की कोख से साक्षात सरस्वती पुत्र ने ही जन्म लिया हो। रवीन्द्रनाथ अपने विशाल ठाकुर परिवार में माता-पिता की चौदहवीं संतान थे। बड़े भ्राता द्विजेन्द्र नाथ कवि एवं दार्शनिक थे, उनके बाद उत्पन्न हुए, भाई सत्येन्द्रनाथ भी अत्यन्त तेजस्वी थे। एक अन्य भाई ज्योतिरीन्द्र नाथ संगीत एवं नाटक की प्रतिभा के धनी थे, बहन स्वर्ण कुमारी स्वयं कथाकार एवं उपन्यासकार थी। हेमेन्द्रनाथ, वीरेन्द्रनाथ, बहन सौदामिनी, सुकुमारी, शरत कुमारी, वर्णकुमारी और सोमेन्द्रनाथ भी प्रतिभा सम्पन्न थे। सबसे बड़ी बहन और एक भाई पुष्पेन्द्र तो बचपन में ही देह त्याग गए थे और रवीन्द्रनाथ अनुज ब्रजेन्द्रनाथ का भी बचपन में ही देहांत हो गया था। इस प्रकार रवीन्द्रनाथ जिस संभ्रान्त, सम्पन्न परिवार में जन्मे थे, वह परिवार, कला, साहित्य, संगीत, नाटक एवं अनेक सामाजिक सांस्कृतिक संस्कारों का परिवार था। रवीन्द्रनाथ पर अपने पितामह द्वारकानाथ का तो अधिक प्रभाव नहीं था किन्तु पिता देवेन्द्रनाथ के साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक आचरण का गहन प्रभाव था। भविष्य के एक महान एवं विश्व-व्यापी हस्ती को यदि जन्म से लेकर यौवन-काल तक परिवार का यह परिवेश मिले तो क्या वह स्वाभाविक रूप से अपनी जन्मजात प्रतिभा और ज्ञान-साधना के दम पर विश्व-कवि नहीं बन सकता था?

रवीन्द्रनाथ तो एक महाकवि बनने के लिए ही आए थे - संभवतया महर्षि व्यास और वाल्मीकि की परंपरा में। मानस-मूर्ति एवं रामचरिमानस महाकाव्य के महाकृतिकार तुलसीदास के पश्चात यदि कोई कवि साधारण से असाधारण बना, ज्ञान एंव बुद्धि से विश्व-विश्रुत हुआ और कवि कुल गुरू कालिदास की तरह भारतीय साहित्य और संस्कृति का गायक बना तो वह था रवीन्द्रनाथ ठाकुर। वे 'गीतांजलि' के काव्य गायक भी थे और भारतीय जन-गण-मन के राष्ट्र गायक भी। कौन सोच सकता था कि एक 1861 में जन्मा बालक मात्र तेरह वर्ष की उम्र में ही 'भारत-भूमि' नामक ऐसी कविता रच डालेगा जो वर्ष 1874 में 'बंगदर्शन' जैसे तत्कालीन पत्र में छप कर सारे तत्कालीन बंगाल में छा जाएगी। वर्ष 1881 अर्थात मात्र बीस वर्ष की आयु में 'वाल्मीकि-प्रतिभा' नाटक लिखा और उसके बाद जब 'सांध्य-संगीत' लिखा तो बंकिमचन्द्र चटर्जी उनकी प्रतिभा देखकर अभिभूत तो हुए ही साथ ही जब युवा रवीन्द्रनाथ को नाटक में स्वयं वाल्मीकि के पात्र का अभिनय करने का अवसर मिला तो लगा कि एक कवि, संगीतकार, नाटककार, अभिनेता, विचारक, दार्शनिक और अनेक कलात्मक प्रतिभाओं से परिपूर्ण देश को ऐसा व्यक्तित्व मिल गया है जो भारत का ही नहीं समूचे विश्व को अपनी प्रतिभा से चमत्कृत कर देगा।

रवीन्द्रनाथ जितने प्रतिभा सम्पन्न थे उतने ही परिवार सम्पन्न थे। विशाल ठाकुर परिवार में रवीन्द्रनाथ के भी दो पुत्र रथीन्द्रनाथ और समीन्द्रनाथ थे एवं तीन बेटियाँ मीरा, माधुरीलता और रेणुका थीं। रवि बाबू की अर्द्धांगिनी मृणालिनी देवी की मृत्यु के बाद रवीन्द्रनाथ स्वयं अपनी संतान, संपत्ति और साहित्य की सेवा करते रहे और पहले जब वे सियालदह में रहते थे तो वहाँ से हटकर अपने द्वारा स्थापित शांति-निकेतन में आ गए। शांति निकेतन जहाँ उनकी शांत-परिशांत प्रकृति स्थली एवं ज्ञान-शिक्षा भूमि बनी थी वहीं श्रीनिकेतन की स्थापना उन्होंने दरिद्र एवं असहाय लोगों की सेवा के लिए की थी। यह आकस्मिक नहीं बल्कि रवीन्द्रनाथ की प्रचण्ड, प्रगल्भ प्रतिभा का ही परिणाम था कि सिस्टर निवेदिता एंव कला-विद के आनंद कुमार स्वामी भी उनसे जुड़े और उनकी बांग्ला कविताओं का अंग्रेजी अनुवाद किया। सी.वी. रमण जैसे नोबेल सम्मान प्राप्त वैज्ञानिक रवीन्द्रनाथ की प्रतिभा से इतने प्रभावित थे कि वे उनकी कविताओं या पाठ करते थे। रवीन्द्रनाथ के बाद दूसरे नोबेल सम्मान विज्ञान के क्षेत्र में सी.वी. रमण ही थे। रवीन्द्रनाथ की एक लोकप्रिय कविता ''भारत-तीर्थ'' ने तो तत्कालीन समाज में देशभक्ति के प्राण फूंक दिये थे। ''हमारे चित्त, पुण्य-तीर्थ जागो रे धीरे एई भारतेर महामानवेर सागर तीरे।।'' तात्पर्य था ''ऐ मेरे हदय, मानवता के महा समुद्र के तट पर है पुण्यतीर्थ भारत जागो''। रवीन्द्रनाथ की अमर कहानी 'काबुली वाला' का सिस्टर निवेदिता द्वारा अंग्रेजी अनुवाद जब 1912 में महान चित्रकार रोथेन्सटीन ने माडर्न रिव्यू में पढ़ा तो अवनीन्द्रनाथ ठाकुर को पत्र लिखकर रवि बाबू की अन्य कविताओं के अनुवाद भी मंगवाये। कहा जाता है कि 'गीतांजलि का स्वंय रवीन्द्रनाथ द्वारा किया गया अंग्रेजी अनुवाद जब रोथेन्सटीन के पास पहुंचा तो रोथेन्सटीन ने कुछ संशोधन करके पढ़ने को एक सार्वकालिक महान कवि 'डब्ल्यू.बी. येट्स' को दे दिया। येट्स गीतांजलि से इतने प्रभावित हुए कि गीतांजलि की भूमिका स्वयं उन्होंने लिखी। रवीन्द्रनाथ की प्रतिभा से नोबेल सम्मान समिति इतनी प्रभावित हुई कि नवंबर 1913 में रवीन्द्रनाथ को नोबेल सम्मान देकर एक बांग्लाभाषी कवि को विश्व कवि बना दिया। येट्स ने गीतांजलि पढ़कर कहा था कि एक महान कवि का पूर्व में उदय हो चुका है। नवंबर में रवीन्द्रनाथ की गीतांजलि को नोबेल सम्मान ऐसा हो गया जैसे रवीन्द्र और भारत एक हो गए हों, गीतांजलि और काव्य एक हो गए हों, पूर्व और पश्चिम की काव्य धाराओं का संगम हो गया हो। इसके पश्चात रवीन्द्रनाथ ने 'गीतिमाल्य' और 'गीताली' भी गीतांजलि की तर्ज पर ही लिखीं लेकिन गीतांजलि तो सारे संसार की अंजलि बन कर रवीन्द्रनाथ पर सम्मान-वर्षा कर रही थी।

रवीन्द्रनाथ ने विश्वभ्रमण किया। अपने काव्य, ज्ञान, दर्शन सबसे दुनिया को प्रभावित भी किया और 24 दिसंबर 1918 को शांति निकेतन में ही 'विश्व भारती' की स्थापना रवीन्द्रनाथ ने की। शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए जहाँ शोध एवं सृजन संस्थान बनाए गए वहीं कलाभवन के निर्माण से कला, संगीत, नाटक एवं लोक साहित्य की नई भूमि एवं भूमिका रची जिसमें नंदलाल बोस, क्षिति मोहन सेन जो नोबेल अर्श शास्त्री अमर्तसेन के नाना है। सुरेन्द्रनाथ कर, असित, हलघर, दिवेन्द्रनाथ ठाकुर, मराठी गायक, भीमराव हसुरकर और नकुलेश्वर गोस्वामी जैसी प्रतिभाओं ने योगदान किया। मणिपुरी नृत्य शैली को संपूर्ण भारत में लोकप्रिय बनाने का काम कला भवन ने ही किया था। यहीं रहकर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने रवि बाबू की प्रेरणा से कबीर रचनावली का संपादन किया और इन्दिरा गांधी ने गुरूदेव से भारतीय संस्कृति का ज्ञान प्राप्त किया था। नोबेल सम्मान के बाद रवीन्द्रनाथ ने जब विश्व पर्यटन किया तो वे हर जगह जो भाषण देते थे वे एक पुस्तक किएटिव समिटी में संग्रहीत हैं। जिन्हें लेकर वे अपने व्यक्तित्व से सांस्कृतिक एकता का वे भारतीय संदेश भी देते थे। रवीन्द्रनाथ ने साहित्य, कला, शिक्षा, दर्शन और ज्ञान के क्षेत्र में जो काम किया उसके लिए गांधी जब शांति निकेतन गए तो रवीन्द्रनाथ को 'गुरूदेव' से संबोधित किया और गांधी जी द्वारा कहा गया यह शब्द रवीन्द्रनाथ का पर्यायवाची बन गया। उन्होंने अमेरिका, चीन, जापान, कोरिया, स्वीडन, डेनमार्क, जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया, आस्ट्रिया, हंगरी, यूगोस्लाविया, बल्गारिया के साथ कुछ अन्य एशिया के भी देशों एवं भारत के दक्षिण भारत की यात्रा कर सांस्कृतिक सृजनात्मकता का संदेश दिया और इटली में जब तत्कालीन तानाशाह ड्यूक-बेनिटो मुसोलिनी से मिले तो यही कहा कि महायुद्ध महामानव नहीं बनाते, महामानव तो महाकाव्य और महान कलाओं से एवं मानव सेवा से बनते हैं। रवीन्द्रनाथ कोरिया में रहे थे इसलिए कोरिया ने रवीन्द्रनाथ टेगौर पुरस्कार की स्थापना की जो भारतीय कथाकार राजी सेठ को दस वर्ष पूर्व दिया गया। इस महाकवि का महाप्रयाण तो हुआ 07 अगस्त 1941 को लेकिन जब गांधीजी गुरूदेव को देखने गए थे तो गांधीजी से आठ वर्ष बड़े रवि बावू ने विनम्र भाव से गांधीजी से कहा था मेरे बाद शांति निकेतन आप संभालिये। ऐसा संभव तो न हो सका, मगर गांधी शांति निकेतन से शांति का जो पाठ लेकर चले वह आज अहिंसा का उदघोष बन कर विश्व शांति का प्रतीक बन गया। गांधी और कस्तूरबा की डेड सौवीं जन्म स्मृति पर आज रवीन्द्रनाथ को उनके जन्म के एक सौ अट्ठावन वर्ष और अवसान के अठहतर वर्ष बाद एवं नोबेल सम्मान प्राप्ति के एक सौ छह वर्ष बाद जब हम याद करते हैं तो लगता है जनगणमन के राष्ट्रगायक और जन मन के महात्मा राष्ट्रपिता गांधी का एक साथ स्मरण कर रहे हैं। समावर्तन इस अवसर पर रवीन्द्रनाथ टेगौर विश्व विद्यालय भोपाल एवं वनमाली सृजन पीठ द्वारा इस माह आयोजित विश्व-रंग उत्सव के लिए बधाई एवं शुभकामनाएँ देता है।

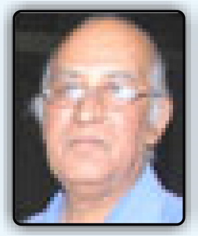

इस माह 14 नवम्बर को जहाँ देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं.जवाहरलाल नेहरू का जन्मदिवस है वहीं 19 नवम्बर को श्रीमती इंदिरा गाँधी का, जिन्होंने अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति से बांग्लादेश का निर्माण किया था अतः इन दोनों महापुरुषों का विनम्र स्मरण। इस अंक में राष्ट्र के गौरव पुरुष और भारत के लिए पहला नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले कवि कुलगुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर के कृतित्व एवं व्यक्तित्व पर क्रमशः एकाग्र, रंगशीर्ष एवं सरोकार स्तम्भ केन्द्रित किये गये हैं। कुछ नियमित स्तंभ भी यथा स्थान दिये गये हैं। सभी लेखकों एवं सहयोगियों के प्रति हार्दिक अभिवादन। स

(अध्यक्ष, सम्पादक-मण्डल)
मो.94065-23071

मानवतावाद के संदेशवाहक रवीन्द्रनाथ

अशोक भौमिक

रवीन्द्र नाथ ठाकुर का जन्म, बांग्ला महीने बैसाख की पच्चीस तारीख को हुआ था। बैसाख का महीना बांग्ला वर्ष का पहला महीना होता है इसलिए बैसाख महीने के पहले दिन को बंगाल में (पश्चिम बंगाल और बांग्ला देश में) बहुत धूम धाम से मनाया जाता है। वास्तव में बंगालियों का यही एक मात्र जातीय पर्व है। दुर्गा पूजा को हालाँकि बार बार सांस्कृतिक उत्सव कह कर जातीय पर्व के रूप में प्रचारित किया जाता है पर यह अपने मूल रूप में, ईद या क्रिसमस जैसा ही एक सामान्य धार्मिक उत्सव है। बंगालियों के जातीय उत्सव का आशय यहाँ एक ऐसे उत्सव से है, जिसे विभिन्न धर्मों को मानने वाली बंगाली भाषी जनता समान रूप से मनाती है। रवीन्द्र नाथ ठाकुर, वर्षारम्भ के इस उत्सव को शांतिनिकेतन में बहुत उत्साह से मनाते थे।

आज उनके जाने के 78 वर्षों बाद बंगाल ही नहीं, पूरे विश्व के बांग्ला भाषी वर्षारम्भ के इस दिन से लेकर बैसाख की पच्चीस तारीख तक के समय को कवि-पक्ष के रूप में मानते हैं। इस कविपक्ष को आज विभिन्न धर्मों की अनुयायी बंगाली भाषी जनता समान रूप से न केवल पश्चिम बंगाल में ही मनाती है बल्कि बांग्ला देश में भी यह उसी उत्साह के साथ मनाया जाता है। रवींद्र नाथ ठाकुर के चले जाने के बाद उनकी बढ़ती ?लोकप्रियता वा ही नतीजा है कि आज बांग्ला भाषियों के जातीय पर्व के रूप में, कविपक्ष ने अपना स्थान बना लिया है, साथ ही कई वर्षों से बैसाख के महीने को 'रविमास' भी कहा जाने लगा है।रवीन्द्र नाथ ठाकुर के जन्मदिन पर किसी हिंदी पत्रिका द्वारा विशेषांक निकलना कोई साधारण घटना नहीं है, इसलिए समावर्तन का यह प्रयास सराहनीय तो है ही, अनुकरणीय भी है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने स्वयं को प्रांतीय संकीर्णता से सदैव दूर रखा और बार बार प्रादेशिक और भाषाई संकीर्णताओं से ऊपर उठ कर मानवतावाद का ही सन्देश दिया। उनका जन्म दिवस जिन बांग्ला भाषियों का आज जातीय पर्व है, उन्हीं बंग संतानों की संकीर्णता पर प्रहार करते हुए अपनी कविता 'बंग-माता' में उन्होंने लिखा है-

''पुण्य में पाप में दुःख में सुख में पतन और उत्थान में, मनुष्य बनने दो
अपनी संतानों को।''

इस कविता में वे यह भी लिखते हैं-

''हर कदम पर निषेध की रस्सियों से, बाँधे मत रखना उसे 'अच्छा-बच्चा' बना कर
शीर्ण शांत साधु अपनी संतानों को, अब बेघर और आवारा भी बनने दो।''

रवींद्र नाथ, बंगमाता को यह सलाह इसलिए देते हैं क्योंकि प्रादेशिकता के मोह से वे गहरी नफरत करते हैं। प्रादेशिकता और निज भाषा गौरव जैसी संकीर्णताओं पर आक्रमण करते हुए वे इस कविता का अंत इस क्षोभ के साथ करते हैं-

''सात करोड़ संतानों को, हे मुग्ध जननी - बंगाली बना कर रखा है, इंसान नहीं बनाया उन्हें !''

उत्सव धर्मी बंगाल आज जब रवींद्र नाथ ठाकुर के जन्म दिन को एक जातीय पर्व के रूप में मना रहा है तो उस जाति के हर व्यक्ति को यह कविता बार बार पढ़नी चाहिए। पर यह कविता क्या केवल बंगालियों के लिए ही लिखी गयी है? आजादी के सत्तर सालों बाद जब राजनैतिक स्वार्थ में डूबे नेता अपने प्रदेश से दूर नौकरी कर रहे लोगों को वापस उनके प्रदेश में लाने की बात करते हैं तो अपने प्रदेश प्रेम में डूबे लोगों को दूसरे प्रदेश के लोगों द्वारा मार भगाने की बात होती है। रह रह कर अपने पड़ोसी प्रदेश के साथ नदी के पानी के बँटवारे को लेकर लोग जान लेने-देने पर तुल जाते हैं। ऐसे में रवींद्र नाथ ठाकुर का जीवन और उनकी रचनाएँ हमें मानवतावाद का जरूरी पाठ पढ़ाती हैं। 1919 में नरसंहार, जलियाँवाला बाग में हुआ था न कि बंगाल में, किन्तु रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इसे किसी अन्य प्रान्त में घटित हादसा न मानते हुए अंग्रेजों की इस अमानवीयता का विरोध करने के लिए तत्कालीन नेताओं से आह्वान किया था। इसके पीछे चाहे जो कारण रहा हो, महात्मा गाँधी और कांग्रेस के नेताओं ने उनका साथ नहीं दिया था। पर 'एकला चलो' में विश्वास रखने वाले विश्वकवि ने इस कृत्य के प्रतिवाद में अंग्रेजों द्वारा दी गयी नाईट हुड उपाधि को त्याग दिया था।

***

रवीन्द्र नाथ ठाकुर जीवन भर साहित्य की विभिन्न विधाओं में सक्रिय रहे पर अपने जीवन के अंतिम दशक में उन्हें यह अनुभव हुआ कि साहित्य भी अन्ततः भाषाओं पर आधारित होता है, जिसके चलते एक भाषा का साहित्य दूसरी भाषा के पाठकों तक सहजता से नहीं पहुँच पाता। संभवतः इन्हीं विचारों ने सत्तर वर्ष की उम्र में उन्हें चित्रकला की तरफ मोड़ा। उनका मानना था कि जब मैं कविता लिखता हूँ तो मेरे भावों को व्यक्त करने के लिए बांग्ला शब्द अनायास चले आते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि बांग्ला मेरी मातृ-भाषा है, पर जब मैं चित्र बनाता हूँ तब मेरे बिम्ब किसी भाषा के मोहताज नहीं होते। इसलिए मैं जितना भारतीय चित्रकार हूँ, उतना ही यूरोपीय चित्रकार हूँ ! (भावानुवाद)।

जीवन के अंतिम दस वर्षों में विश्वकवि के ऐसे विचारों से निश्चय ही यह पता चलता है कि चित्रकला, रवीन्द्र नाथ ठाकुर के लिए कविता, कहानी, उपन्यास, रंगमंच, संगीत आदि का एक विस्तार मात्र नहीं था बल्कि उन्होंने चित्रकला को इन भाषाश्रित कलाओं के विकल्प के रूप में ग्रहण किया था। चित्रकला को उन्होंने जीवन संध्या की प्रेयसी कहा था, पर उनकी यह स्वीकारोक्ति कि ''कभी कभी मैं भूल जाता हूँ कि मैं कभी कविता भी लिखता था'', हमें चमत्कृत करती है। जिस व्यक्ति ने इतनी बड़ी संख्या में इतनी महत्वपूर्ण कवितायें रची हों और जिसे अपनी कविताओं के लिए नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया हो, वह जब ऐसे वक्त कविता को भूलने की बात कर रहा हो, जब उसने स्वयं को पूरी तरह चित्र रचना के लिए समर्पित कर रखा हो, बेहद अर्थपूर्ण लगता है। वास्तव में उन्होंने चित्रकला को एक 'वैश्विक' कला माना। चित्रकला सम्बन्धी अपने विचारों को उन्होंने अपने पत्रों और लेखों में बार बार व्यक्त किया है जो अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

आधुनिक भारतीय चित्रकला, अनिवार्य रूप से पश्चिम की कला के अधकचरे अनुकरण के सहारे ही अपने अस्तित्व में आयी है। हजारों सालों के भारतीय चित्रकला के इतिहास में राजा-रानियों, देवी-देवताओं का 'चित्रण' ही केंद्र में रहा है। राजा रवि वर्मा (1848-1906), जिन्हें भारत का पहला आधुनिक चित्रकार माना गया। इसके अपवाद नहीं थे। बीसवीं सदी के आरम्भ में विकसित नव-भारतीय चित्रकला से जुड़े चित्रकारों के चित्रों में बार बार अपनी जड़ों की तलाश की कोशिशों में भारतीय कला के जन विरोधी मूल्यों की पुनरावृत्ति ही दिखी। ऐसे में 1931 से 1941 के बीच के दस वर्षों में, हम दो ऐसे कलाकारों को सक्रिय पाते हैं जिन्होंने चित्रकला में न केवल आम आदमियों की उपस्थिति को संभव बनाया बल्कि 'सन्दर्भों' से भारतीय चित्रकला को मुक्ति दिलायी। निःसंदेह, यह भारतीय चित्रकला के लिए एक क्रांतिकारी परिवर्तन की शुरूआत थी। यहाँ यह जानना महत्वपूर्ण है कि दोनों चित्रकारों ने अपने एक भी चित्र में न तो किसी राज रानी या देवी देवता के किस्से-कहानियों का ही चित्रण किया और न ही किसी नायक को अपने चित्रों के केंद्र में रखा। दोनों चित्रकारों के बीच किसी संवाद के प्रमाण हमें नहीं मिलते पर अमृता शेर-गिल ने 1931 में फ्रांस में रवीन्द्र नाथ ठाकुर की चित्रों की प्रदर्शनी देख कर कहा था कि वे रवीन्द्र नाथ ठाकुर की कविताओं से ज्यादा उनके चित्रों से प्रभावित हैं।

रवीन्द्र नाथ ठाकुर का पूरा जीवन एक निःसंग यात्री का जीवन है किन्तु यह यात्री अकेले ही तत्कालीन भारतीय समाज की कुरीतियों के खिलाफ निर्भय होकर बार बार खड़े होने का साहस करता हुआ दिखाई देता है। महात्मा गाँधी एक शुद्ध राजनैतिक व्यक्ति थे इसलिए उनका हर कदम जनता तक अपनी बात को पहुँचाने के लिए उठता था किन्तु रवीन्द्र नाथ चूँकि एक रचनाकार थे, इसलिए सामाजिक कार्यों में हमें उनकी रणनीति या स्ट्रेटेजी नहीं दिखती बल्कि वह केवल अपने मन द्वारा संचालित दिखते हैं। इस बात को समझने के लिए हमें कुछ राजनैतिक घटनाओं पर रवीन्द्र नाथ ठाकुर की प्रतिक्रिया को देखना होगा।

अंग्रेजों ने उन राजनैतिक कैदियों को अलग से चिन्हित करने की कोशिश की जिन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ सशस्त्र आंदोलन में हिस्सा लिया था। ऐसे कैदियों और अहिंसक आंदोलनकारी कैदियों को एक साथ जेलों में रखना उचित नहीं समझा और इसीलिए 1930 में मिदनापुर जिले के हिजली में सशस्त्र आंदोलनकारियों के लिए अलग से एक जेल बनाया गया। 16 सितम्बर 1931 को इस जेल के राजनैतिक कैदियों पर पुलिस ने गोली चलाई जिसके चलते दो कैदियों की मृत्यु हुई और अनेक

घायल हुए। इस अमानवीय नरसंहार के विरोध में 26 सितम्बर 1931 को विशाल विरोध सभा का आयोजन किया गया जिसमे अपनी अस्वस्थता के बावजूद रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने उपस्थित होकर सभा को सम्बोधित किया था। 25 जुलाई 1937 को अंडमान के सेल्युलर जेल में राजनैतिक कैदियों ने आमरण अनशन शुरू किया था तो पूरे देश से उनके समर्थन में लोग सामने आये थे। कैदियों के इस आंदोलन के समर्थन में कलकत्ते के टाउन हाल में आयोजित जनसभा के अध्यक्ष रवीन्द्र नाथ ठाकुर थे। इस आंदोलन का ही प्रभाव था कि अँगरेज शासकों को अंडमान से कैदियों को भारत वापस भेजना पड़ा था। 26 फरवरी से 10 मई की अवधि में 74 दिनों तक चले कलकत्ते के जूट मिल मजदूरों के आंदोलन को रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने खुल कर समर्थन दिया था। 22 जून 1941 को जब नात्सी जर्मनी ने रूस पर हमला किया तब रवीन्द्र नाथ अस्वस्थ थे और उनका जीवन अवसान के करीब आता दिख रहा था। ऐसे वक्त में भी उन्होंने रूस के लिए युद्ध विजय की कामना की थी।

***

आज इक्कीसवीं सदी के तथाकथित उदार और लोकतान्त्रिक समाज में धर्म के पाखंड के खिलाफ लिखना कितना कठिन है, हम जानते हैं। इसीलिए 1890 में लिखे उनके नाटक 'विसर्जन' में देवी की पूजा में होने वाले पशु बलि के खिलाफ जब हम उन्हें ये कहते हुए देखते हैं 'भक्ति पिपासु माता नहीं वह पशु रक्त पिपासु हैं' या फिर जब वह इस सत्य को दोहराते हैं कि 'देवता के लिए ही मनुष्य, मनुष्यता विहीन हो जाता है' तो हमें आश्चर्य होता है, पर जब नाटक के अंत में मंदिर की देवी मूर्ति को पटक कर तोड़ देने जैसे दृश्य की रचना करते हुए 'विसर्जन' को एक नए अर्थ के साथ दर्शकों के सामने लाते हैं तो हमें अवश्य ही अचरज होता है कि क्या हम भारतीय पिछली सदी में इतने सहिष्णु थे ? समूचे विश्व के इतिहास में धर्मांधता, स्वधर्म गौरव और असहिष्णु समाज के खिलाफ रचनाकारों ने बार बार अकेले खड़े होने का साहस दिखाया है। अपने जीवन काल में, रवीन्द्र नाथ ठाकुर के विचारों से बंगाल के बुद्धिजीवियों का बड़ा हिस्सा कभी सहमत नहीं था और इसीलिए बार बार उनके अपमान और उपेक्षा के प्रयास हुए, पर रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने स्वयं को एक रचनाकार के रूप में ही सीमित नहीं रखा बल्कि एक समाज सुधारक के रूप में अपने समय के लोगों को सामाजिक-धार्मिक संकीर्णता से मुक्त करने का प्रयास करते रहे। शांतिनिकेतन की स्थापना के पीछे उन्होंने एक ऐसे 'विश्वविद्यालय' की कल्पना की थी जहाँ ज्ञान किसी भाषा, देश या धर्म तक सीमित न रहे। उन्होंने केवल बंगाल या भारत के ही नहीं बल्कि विश्व के विभिन्न देशों से बुद्धिजीवियों और मनीषियों को आमंत्रित किया और शांतिनिकेतन के माध्यम से हमें ज्ञान और कला की एक नयी और उन्मुक्त दुनिया से परिचित कराया।

***

रवीन्द्र नाथ ठाकुर जीवन भर मानवतावाद पर यकीन करते रहे। उनका मानवतावाद उनकी विश्वदृष्टि का आधार था, इसलिए वे राष्ट्रीय आन्दोलन की आँधी के बीच खड़े होकर भी अंध राष्ट्रवाद का विरोध करते रहे। उनकी रूस यात्रा के दौरान उनसे किसी ने पूछा था कि आपके देश में हिन्दू और मुसलमान आपस में लड़ते क्यों हैं?

रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने इस बात का जवाब यूँ दिया था, ''जब मैं छोटा था, तब ऐसी बातें कतई नहीं थीं, यह राष्ट्रवाद के साथ साथ शुरू हुआ है। जनता में विवेक और सुबुद्धि के लिए जिस प्रकार की शिक्षा की जरूरत है वह हमारे यहाँ उपलब्ध नहीं है। रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने जीवन भर मानवतावाद का सन्देश दिया। भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी अपने कई व्याख्यानों द्वारा उन्होंने राष्ट्रवाद की आलोचना की और राष्ट्र गौरव जैसी निरर्थक मानसिकता का विरोध किया। रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा है कि ''देशप्रेम हमारा आखिरी आध्यात्मिक सहारा नहीं बन सकता। मेरा आश्रय मानवता है। मैं हीरे के दाम में काँच नहीं खरीदूँगा और जब तक मैं जीवित हूँ, मानवता के ऊपर देशप्रेम की जीत नहीं होने दूँगा।''

यह हमारा दुर्भाग्य है कि आज हम उनकी बातों से बहुत दूर भटक गए हैं।

***

रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने अपने विचारों और रचनाओं के माध्यम से सदैव एक नए भारत के निर्माण का प्रयास किया। उनकी मृत्यु के बाद शांतिनिकेतन के दकियानूसी और संकीर्णमना प्रशासन ने लम्बे समय तक रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कृतियों पर अपना अधिकार इस हद तक बनाये रखा कि उनकी रचनाओं और विचारों से अन्य भाषाओं के लोग परिचित ही नहीं हो सके। मृत्यु के बीस वर्षों बाद जब उनकी शताब्दी मनाने का राष्ट्रीय कार्यक्रम बना, तब तक बहुत देर हो चुकी थी और एक विश्वकवि को संकीर्ण प्रादेशिकता ने महज एक बांग्ला कवि बना कर रख दिया था। यही नहीं, उनकी कृतियों के स्वत्वाधिकार या कॉपीराइट का हक भी दस सालों की अतिरिक्त अवधि तक अपने कब्जे में रखने का 'सुख' शांतिनिकेतन ने हासिल कर उन्हें एक दशक तक भारतीय जनता से दूर रखा। इनके चलते जो पीढ़ियाँ आजादी के बाद बड़ी हुईं, वे न तो रवीन्द्र नाथ ठाकुर की कृतियों से परिचित हो सकीं और न ही रवीन्द्र नाथ ठाकुर उनके लिए प्रासंगिक बन पाए। आजादी के बाद राष्ट्रवाद और धार्मिक संकीर्णताओं ने हमारे समाज को जिस कदर अपने नागपाश में जकड़ लिया और नियतिवाद,अंधश्रद्धा, वर्णभेद और तर्कहीनता का व्यापक विस्तार देखने को मिला, वहाँ रवीन्द्र नाथ ठाकुर जैसे रचनाकार और चिंतक की निश्चय ही एक मार्गदर्शक भूमिका हो सकती थी। आज जब हम अपने आसपास के बुद्धिजीवियों को देखते हैं तो लगता है कि रवीन्द्र नाथ ठाकुर से हमने कुछ सीखा ही नहीं। हम आज अपनी भाषा को श्रेष्ठ साबित करने की होड़ और अपने प्रदेश की कला, संस्कृति और परंपरा को महान प्रमाणित करने की कोशिश में इस कदर तल्लीन हैं कि 'मनुष्य' के रूप में हमारा परिचय महत्वपूर्ण नहीं रह गया है। हम आज श्भारतीयश होने से पहले बिहारी, बंगाली, मराठी, पंजाबी आदि होना ज्यादा जरूरी समझते हैं। यही नहीं अपनी इस मूर्खता का ढिंढोरा सगर्व पीटते रहते हैं। आजादी के सत्तर वर्षों के बाद हमने सारे महानगरों और शहरों में अपने अपने प्रदेशों के और भाषा-भाषी लोगों के न केवल द्वीप और उपद्वीप बना लिये हैं बल्कि इन्हें एक दूसरे के विरुद्ध खड़ा कर दिया है। इसीलिए आये दिन एक प्रदेश का दूसरे प्रदेश के लोगों के खिलाफ अपमानजनक कार्यकलाप देखने को मिलता है। एक प्रदेश से बहने वाली नदी का पानी दूसरे प्रदेश को कितना मिलेगा, इस विवाद पर दंगे हो जाते हैं। रवीन्द्र नाथ ठाकुर को राष्ट्रवाद की इस परिणिति का पूर्वानुमान शायद बहुत पहले ही हो चुका था।

***

रवीन्द्र नाथ ठाकुर की मृत्यु के बाद भारत के इतिहास में बहुत कुछ घटित हुआ है जिससे हम सभी परिचित हैं, पर बंगाल के लिए 1941 से लेकर अब तक के समय का एक बड़ा काल खंड, एक न थमने वाले तूफान जैसा रहा है। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में बंग-भंग के साथ बंगाल में उथल पुथल की शुरूआत हुई। 1943 के महा अकाल ने लाखों लोगों की जान ले ली। महा अकाल में गाँवों से शहरों की तरफ व्यापक पलायन अभी थमा भी न था कि विभाजन की तलवार पंजाब के साथ साथ बंगाल पर भी गिरी। पूर्वी पकिस्तान बनने के साथ साथ बंगाल के दो टुकड़े जरूर हो गए थे पर उन्हें आपस में कहीं बांग्ला भाषा और संस्कृति ने जोड़ रखा था। इसी भाषा के लिए पूर्वी पकिस्तान की जनता ने अपने शासकों के खिलाफ आंदोलन किया (भाषा-आंदोलन) जिसने 1971 में सशस्त्र प्रतिरोध का रूप लिया और स्वतंत्र बांग्लादेश का उदय हुआ। 1947 के विभाजन से लेकर आज तक रवीन्द्र नाथ ठाकुर, दोनों मुल्कों की जनता के सबसे चहेते और महत्वपूर्ण व्यक्तित्व बने हुए हैं। उनकी मृत्यु के आठ दशकों बाद भी उनकी लोकप्रियता को निरंतर बढ़ते हुए देखकर हमें लगता है कि बंगाल का समाज देर से ही सही पर धीरे धीरे रवीन्द्र नाथ ठाकुर के विचारों को अपना रहा है। उनके जन्मदिन को लगभग एक अकल्पनीय व्यापकता के साथ मनाते हुए देख कर यह लगता है कि भले ही पूरे देश में रवीन्द्र नाथ ठाकुर अप्रासंगिक से हो गए हों, बंगाल में उन्हें लोग पढ़ते समझते हैं। उम्मीद बँधती है कि पूरा विश्व, जब धार्मिक संकीर्णता के दंश से विवर्ण हो चला है, रवीन्द्र नाथ ठाकुर को इस कदर प्रेम करने वाले बंगालियों में इसके विरूद्ध अविचलित खड़े रहने की शक्ति अवश्य होगी। पर हमारा ऐसा सोचना किस हद तक सही है, शायद यह कह पाना कठिन है।

फ्लेट नं. बी-301, जनसत्ता अपार्टमेंट
सेक्टर-9, वसुंधरा, गाजियाबाद (उत्तरप्रदेश) 201012
ईमेल- bhowmick.ashok@googlemail.com

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

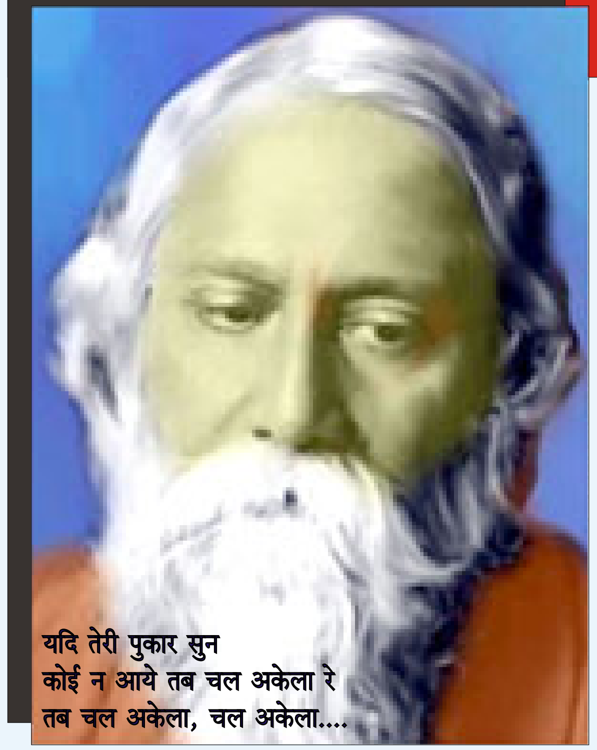

- **जन्म :** 07 मई 1861 (कलकत्ता)
- **व्यक्तित्व :** लेखक, कवि, नाटककार, संगीतकार, चित्रकार
- **भाषा :** बांग्ला, अंग्रेजी
- **साहित्य आन्दोलन :** आधुनिकतावाद
- **उल्लेखनीय लेखन कार्य :** गीतांजलि, गोरा, घरे बाइरे, जन गण मन, रबीन्द्र संगीत, आमार सोनार बांग्ला, नौका डूबी आदि
- **उल्लेखनीय सम्मान :** साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार (1913)
- **जीवनसाथी :** मृणालिनी देवी (वि.1883-1902)
- **सन्तान :** 5 (जिनमें से दो का बाल्यावस्था में निधन हो गया)
- **रवीन्द्र साहित्य और रचनाधर्मिता :** गुरुदेव के नाम से रबीन्द्रनाथ टैगोर ने बांग्ला साहित्य को एक नई दिशा दी। उन्होंने बंगाली साहित्य में नए तरह के पद्य और गद्य के साथ बोलचाल की भाषा का भी प्रयोग किया। इससे बंगाली साहित्य क्लासिकल संस्कृत के प्रभाव से मुक्त हो गया। टैगोर की रचनायें बांग्ला साहित्य में एक नई ऊर्जा लेकर आई। उन्होंने एक दर्जन से अधिक उपन्यास लिखे। उनके उपन्यासों में मध्यमवर्गीय समाज विशेष रूप से उभरकर सामने आया। इन्हें साहित्य का नोबल पुरस्कार मिला जो कि एशिया के प्रथम विजेता साहित्य में है। मात्र आठ वर्ष की उम्र में पहली कविता और केवल 16 वर्ष की उम्र में पहली लघुकथा प्रकाशित कर बांग्ला साहित्य में एक नए युग की शुरूआत की रूपरेखा तैयार की। उनकी कविताओं में नदी और बादल की अठखेलियों से लेकर अध्यात्मवाद तक के विभिन्न विषयों को बखूबी उकेरा गया है। उनकी कविता पढ़ने से उपनिषद की भावनाएं परिलक्षित होती है।

भारतीय सांस्कृतिक चेतना में नई जान फूंकने वाले युगदृष्टा टैगोर के सृजन संसार में गीतांजलि, पूरबी प्रवाहिनी, शिशु, भोलानाथ, महुआ, वनवाणी, परिशेष, पुनश्च, वीथिका शैललेखा, चोखेरबाली, कणिका, नैवेद्य, मायेर खेला और क्षणिक आदि शामिल हैं। देश और विदेश के सारे साहित्य, दर्शन, संस्कृति आदि उन्होंने आहरण करके अपने अन्दर समेट लिए थे। पिता के ब्रह्म-समाजी होने के कारण वे भी ब्रह्म समाजी थे। पर अपनी रचनाओं व कर्म के द्वारा उन्होंने सनातन धर्म को भी आगे बढ़ाया।

मनुष्य और ईश्वर के बीच जो चिरस्थायी संपर्क है, उनकी रचनाओं के अन्दर वह अलग-अलग रूपों में उभर आता है। साहित्य की शायद ही ऐसी कोई शाखा हो, जिनमें उनकी रचना न हो- कविता, गान, कथा, उपन्यास, नाटक, प्रबंध, शिल्पकला- सभी विधाओं में उन्होंने रचना की। उन्होंने कुछ पुस्तकों का अंग्रेजी में अनुवाद भी किया। अंग्रेजी अनुवाद के बाद उनकी प्रतिभा पूरे विश्व में फैली।

- **रवीन्द्र संगीत :** टैगोर ने करीब 2,230 गीतों की रचना की। रवीन्द्र संगीत बाँग्ला संस्कृति का अभिन्न अंग है। टैगोर के संगीत को उनके साहित्य से अलग नहीं किया जा सकता। उनकी अधिकतर रचनाएँ तो अब उनके गीतों में शामिल हो चुकी हैं। हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की ठुमरी शैली से प्रभावित ये गीत मानवीय भावनाओं के अलग-अलग रंग प्रस्तुत करते हैं। अलग-अलग रागों में गुरुदेव के गीत यह आभास कराते हैं मानों उनकी रचना उस राग विशेष के लिए ही की गई थी। प्रकृति के प्रति गहरा लगाव रखने वाला यह प्रकृति प्रेमी ऐसा एकमात्र व्यक्तित्व है जिसने दो देशों के लिए राष्ट्रगान लिखा।
- **कला एवं दर्शन :** गुरुदेव ने जीवन के अंतिम दिनों में चित्र बनाना शुरू किया। इसमें युग का संशय, मोह, क्लान्ति और निराशा के स्वर प्रकट हुए हैं। मनुष्य और ईश्वर के बीच जो चिरस्थायी संपर्क है उनकी रचनाओं में वह अलग-अलग रूपों में उभरकर सामने आया। टैगोर और महात्मा गांधी के बीच राष्ट्रीयता और मानवता को लेकर हमेशा वैचारिक मतभेद रहा। जहाँ गांधी पहले पायदान पर राष्ट्रवाद को रखते थे, वहीं टैगोर मानवता को राष्ट्रवाद से अधिक महत्त्व देते थे। लेकिन दोनों एक दूसरे का बहुत अधिक सम्मान करते थे। टैगोर ने गांधीजी को महात्मा का विशेषण दिया था। एक समय था जब शान्तिनिकेतन आर्थिक कमी से जूझ रहा था और गुरुदेव देशभर में नाटकों का मंचन करके धन संग्रह कर रहे थे। उस समय गांधीजी ने टैगोर को 60 हजार रूपये के अनुदान का चेक दिया था।
- **सम्मान :** उनकी काव्यरचना 'गीतांजलि' के लिये उन्हें सन 1913 में साहित्य का नोबेल पुरस्कार मिला। सन 1895 में उन्हें राजा जॉर्ज पंचम ने नाइटहुड की पदवी से सम्मानित किया जिसे उन्होंने सन 1919 में जलियावाला बाग हत्याकांड के विरोध में वापस कर दिया था।
- **विशेष :** जीवन के अन्तिम समय से पहले इलाज के लिए जब उन्हें शांति निकेतन से कोलकाता ले जाया जा रहा था तो उनकी नातिन ने कहा कि आपको मालूम है हमारे यहाँ नया पावर हाउस बन रहा है। इसके जवाब में उन्होंने कहा कि हाँ पुराना आलोक चला जाएगा और नए का आगमन होगा।
- **निधन :** 7 अगस्त 1941 (कलकत्ता)

रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविताएँ

सोने की नाव

गगन में गरज रहे हैं मेघ, सघन है वर्षा।
तट पर हूँ बैठा अकेला, नहीं है भरोसा।
ढेरों राशि सा भरा - भरा, धान काटना हुआ पूरा,
भरे नदी की तेज धार का तीक्ष्ण स्पर्श -----
धान काटते - काटते, शुरू हुई वर्षा

छोटा सा एक खेत, हूँ मैं अकेला -----
चारों ओर कर रही जल अठखेलियां,
देखता हूँ उस पार बन रही हैं तनु मिश्रित आकृतियां
ग्राम सारा है ढका मेघों से है प्रभात की वेला।
इस पार है छोटा सा खेत, मैं हूँ अकेला।

गीत गाकर नाव खे कर कौन आ रहा तट पर !
देख कर महसूस होता जैसे, चीन्हता हूँ मैं उसे।

ओ भाई कहाँ जा रहे हो, किस विदेश को ?
यूँही कई बार लगा देते हो नाव तट पर।

जाओ जहाँ जाना चाहो, जिसे करे मन उसे दे आओ ---
तुम भी ले जाओ सिर्फ क्षण भर हँस कर
मेरा सोने सरीखा धान आकर तट पर ।।

जितना मन चाहे उतना ले लो नाव भर।

और भी है --- या नहीं, बगैर सोचे दे दिया भर कर।
इतने दिनों तक नदी तट पर -- जो लिया था भूलवश
सब कुछ उठाकर दे दिया --- बिखरा या गुच्छों में --
अब मुझे भी उठा लो करूणा कर ।।

ठौर नहीं, ठौर नहीं छोटा है यह नाव
मेरे सोने सरीखे धान से गया है वह भर।
सावन में गगन घेर --- सघन सा मेघ डोल रहा,
शून्य नदी के तट पर --- अकेला ही पड़ा -----
जो कुछ था ले गया वह सोने की नाव ।।
('सोनार तोरी' संग्रह से)

निर्झर का स्वप्न भंग

आज इस प्रभात में रवि की किरणें/ किस तरह प्रवेश करता है प्राणों के भीतर/
कैसे प्रवेश करता है गुफा के अंधकार में प्रभात पाखी का गान /न मालूम कैसे
इतने दिनों के बाद जाग उठा है प्राण
जाग उठा है प्राण,
अरे/उछल उठा है जल,
अरे प्राणों की कामना प्राणों का आवेग रोक नहीं पाता/
थर - थर कर काँप रहा है भूधर,
पत्थर भी तिल - तिल कर रही है झर,
जल भी फूल - फूल कर फेन बन चूका
गरज उठा है दारूण रोष से।
यहाँ - वहां पागलों के जैसे
घूमता - फिरता झूमता फिर रहा .....
निकलना चाहता, देख नहीं पाता कहाँ है कारा का द्वार।
क्यों रे विधाता तू पाषाण क्यों !
चारों ओर उसका बंधन क्यों,
तोड़ रे ह्रदय, तोड़ रे बंधन,
साध रे आज प्राण की साधना,
लहर पर लहर उठा कर
आघात पर आघात कर
झूम उठा है जब प्राण
कैसा अंधकार, कैसा पाषाण !
उछल उठी है जब कामना
जगत में तब कैसा डर !

मैं उढ़ेलूँगा करूणा की धारा,
मैं तोडूंगा पाषाण कारा,
मैं जगत बहा दूंगा गीत गाकर
उत्सुकता के पागलपन में
केशों को बिखराकर, फूल चुनकर,
इंद्रधनुषी - रंग से रंगी पंख उड़ाकर,
रवि किरणों सी हँसी बिखरा दूंगा प्राणों को उढ़ेलकर
शिखर से शिखरों पर भागूंगा,
भूधर से भूधरों तक लूटूँगा।
हँसूँगा खिल - खिल गाऊँगा कलकल ताल - ताल पर दूंगा ताली।
इतनी बातें हैं, इतने गीत हैं, इतने प्राण हैं मेरे,
इतने सुख, इतनी आशायें हैं ..... प्राण हो उठा है भोर सा।
क्या पता क्या हुआ, जाग उठा है प्राण ....
दूर से ही सुन रहा हूँ जैसे गाए रहा कोई महासागर का गान
ओ रे चारों तरफ मेरे
ये कैसी कारागार की छाया .....
तोड़ो तोड़ो तोड़ो यह कारा, आघात पर कर आघात।
ओ रे आज यह कैसा गीत गाया है पाखी ने,
आया है रवि के संग उजाला।।

प्राण

मरना नहीं चाहता मै इस सुन्दर भुवन में,
मानवों के मध्य मै जीना चाहता हूँ
इस सूर्य के करों में इस पुष्पित कानन में
और जीवंत ह्रदय के मध्य यदि ठौर मिल जायेय
धरा पर प्राणों का खेल चिर तरंगित,
विरह और मिलन,हँसी भी,अश्रु मय भी -----
मानव का सुख - दुःख संगीत में गूंथ कर
यदि रच पाऊं अमर ---- आलय
यदि यह न कर पाऊं, तो जितने दिन जीऊं ,
जैसे तुम्हारे ही मध्य ठौर पाऊं ,
तुम सब गाओगे ये सोच सुबह शाम
नव - नव संगीत के फूल पुष्प खिलाऊँ
मुस्कुराते मुख मंडल से चुन लेना पुष्प
पश्चात हाय -------
फैंक देना पुष्प, यदि वह पुष्प मुरझा जाये
(कोड़ी ओ कोमल' संग्रह से)

भग्न मंदिर

भग्नमंदिर के देवता
तब वंदना रचूँ जब छिन्न वीणा के तार थमे --------
सांध्य गगन में नहीं गूंजता जब शंख तुम्हारी आरती का
तब मंदिर होता स्थिर गंभीर ,भग्न देवालय के देवता
तब जनहीन भवन में
रह रह कर आती है व्याकुल गंध नव बसंत पवन में,
जिस फूल पर नहीं रचा पूजा का अर्घ्य,
रखा भी नहीं लाल चरणों में
जिस फूल के खिलने से पहले ही सभी जानते हैं,
जनहीन है भग्न यह भवन,
पूजा विहीन है तब पुजारी
पता नहीं,कहाँ फिरता सारा दिन,
उदासीन, जिसके महल का है वह भिखारी,
गोधुली वेला में, वन की छाया में चिर उपवासी भूखा -----
भग्नमंदिर में आकर फिरता पूजा विहीन पुजारी
भग्न देवालय के देवता,
कितने उत्सव हुए नीरव, कितनी निशा पूजाएँ पता नहीं ;
कितने दशहरा, नवीन प्रतिमाएं, कितने और कब आते हैं
क्या बताऊँ
सिर्फ चिरदिन रहता सेवा विहीन इस भग्न
देवालय का देवता
('कल्पना' संग्रह से)

यदि तेरी पुकार सुन कोई न आये रे

यदि तेरी पुकार सुन कोई न आये तब चल अकेला रे
तब चल अकेला, चल अकेला, चल अकेला रे
यदि कोई न करे बातें, ओरे रे ओ अभागे
कोई न करे बातें
यदि सभी रहे मुंह फेरे सभी करे भय ...
तब प्राण खोल कर
ओ तू मुंह से अपनी मन की बातें कह अकेला रौंद रे

यदि सभी लौट जाएँ, ओरे ओरे ओ अभागे,
यदि सभी लौट जाएँ ....
यदि गहन पथ पर चलते वक्त कोई मुड़कर न देखे .....
तब पथ के काँटें से
ओ तू रक्त सने चरण तले अकेला रदि रे

यदि रौशनी न दिखाए, ओरे ओ अभागे,
यदि आँधी - तूफान में अंधकार रात को
घर के द्वार करे बंद...
तब बिजली की तरह
अपने सीने के पिंजर जलाकर अकेला चल रे

यदि तेरी पुकार सुन कोई न आये तब चल अकेला रे

असमय में

खत्म होते हुए हाट में यह कौन दौड़ रहा पसरा लिए .....
साँझ हो आई देखो समय भी अनेक व्यतीत हुआ
सभी अब जायेंगे लौट अपने घर सर पर बोझा लिए,
एकादशी का खंडित चाँद उग आया है गांव के सिर पर
उसपार के गांव में जो रहते हैं
ऊँची आवाज से नावों को पुकारते हैं,
प्रतिध्वनियाँ हाहाकार कर उठती नदी के तट पर
किस आस में उठते - गिरते साँसों से इस वक्त तू
क्यों दौड़ रहा है खत्म होते इस हाट में पसरा लिए ?

नींद में ही वन के सिर पर फेरा है हाथ,
काँ - काँ - काँ का स्वर रूक गया है
कागों के घर में भी,
बांसों से बनी सीमा रेखा के निकट
तालाब में झाड़ियों के बीच झींगुर बोलता है ......
हवा भी धीमी हो चली है, स्तब्ध है बांस की झाड़ियाँ,
बाहर घर के आंगन में थके हुए लोग बिछाने लगाते हैं बिछावन,

संध्या प्रदीप का आलोक फैलता है
अविराम सुधा मिश्रित
सभी चेष्टाओं को अब शांत रहने की बेला है
खत्म होते इस हाट में
ये कौन दौड़ रहा पसरा लिए ?

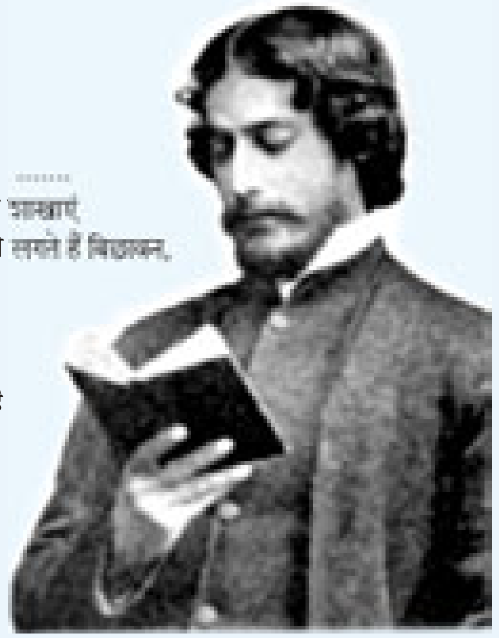

स्तब्धता

आज हेमन्त ऋतु सी शान्ति व्याप्त है चारों ओर
जनशून्य क्षेत्र के बीच दीप्त दोपहर में
शब्दहीन गतिहीन स्तब्धता उदार सा
व्याप्त है क्लांत दिगंत का प्रसार
स्वर्ण - श्याम पंख फैलाये
क्षीण सी नदी की रेखा
नहीं गाती कोई गीत आज,
न ही लिखती कविता
बालू के तट पर /दूर
दूर तक फैले हैं जितने गांव
मूंदकर नयन धूप सेंकने में हैं रत,
निद्रा में हैं अलसाये से, क्लांत

इस स्तब्धता में
सुन रहा हूँ तृण - तृण में धूल - धूल में
मेरे अंग - अंग में रोम - रोम में
लोक - लोकान्तर में
ग्रहों से सूर्य, तारों में नित्य ही
अणु - परमाणुओं के नृत्य का कोलाहल .....
तुम्हारे आसन को घेरे अनन्त कल्लोल भी।।
(नैवेद्य संग्रह से)

मेरा माथा नत कर दो

मेरा माथा नत कर दो हे तुम्हारे चरण धूलि तले।
हे मेरे सकल अहंकार ! डुबाओ आँखों के जल से।।

निज को किया है गौरव दान,
निज का किया है अपमान,
अपने को सिर्फ घेर घेर घूमता फिरूँ मरूँ पल - पल में।
हे मेरे सकल अहंकार ! डुबाओ आंखों के जल से।।

खुद को न जान करूँ प्रचार अपने ही काज के।
तुम्हारी इच्छा करो, हे पूर्ण ! मेरे जीवन के मध्य में।।

चाहूँ हे तुम्हारी चरम शांति,
प्राणों में तुम्हारे है परम कांति,
मुझे ओट में कर विराजो हृदय के पद्मदल में।
हे मेरे सकल अहंकार ! डुबाओ आंखों के जल से।।

मरीचिका

पागलों की तरह वन - वन फिरता हूँ अपने ही गंध में डूब
कस्तूरी मृग की तरह
फागुन की रात में दक्षिणी किनारे की दिशा कहाँ है
ढूंढनहीं पाता मैं
जो चाहता हूँ वह भूलवश चाहता हूँ, और जो मिलता है
उसे चाहता ही नहीं
सीने के बाहर आकर मैं अपनी कामना में फिरता हूँ
मरीचिका की तरह
बाहें फैलाकर उसे चाहता हूँ सीने में जकड़ना पर
लौटा नहीं पाता
जो चाहता हूँ वह भूलवश चाहता हूँ, और जो मिलता है
उसे चाहता ही नहीं
निज के गीतों में चाहता हूँ पिरोना और पकड़ना बंशी की तरह
उन्मत्त पागल की तरह
जिसे जकड़ना है उसके मध्य रागिनी ही नहीं
ढूंढपाता
जो चाहता हूँ वह भूलवश चाहता हूँ, और जो मिलता है
उसे चाहता ही नहीं

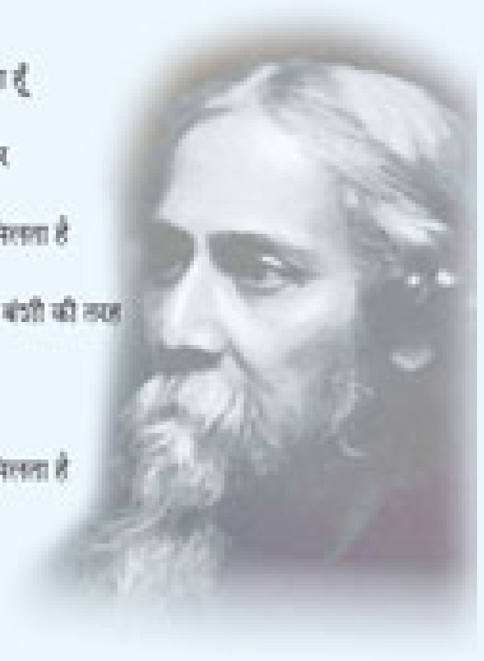

क्लान्ति मेरी क्षमा करो प्रभु

क्लान्ति मेरी क्षमा करो प्रभु
पथ में अगर पिछड़ जाऊँ कभी

यह मेरा हृदय थर - थर
काँपे आज ऐसे रह - रह
यह वेदना क्षमा करो,
क्षमा करो,क्षमा करो प्रभु

यह दीनता क्षमा करो, प्रभु
पीछे अगर ताकूँ यदि कभी

दिन के ताप की रौद्र ज्वाला
सूखता माला पूजा की थाल में,
वही म्लानता क्षमा करो
क्षम्य करो, क्षमा करो प्रभु

प्रथम दिन का सूर्य

प्रातः दिन के सूर्य ने
किया था प्रश्न
सत्ता का नया हो रहा आगमन .....
कौन हो तुम ?
नहीं मिला कोई उत्तर।

सालों - साल गुजर गए
दिवस का है यह आखरी सूर्य
शेष प्रश्न उच्चारित हुआ
पश्चिम सागर के तट पर
निस्तब्ध संध्या को ......
कौन हो तुम ?
मिला नहीं न उत्तर।।
(शेष लेखा संग्रह से)

मृत्यु

मृत्यु अज्ञात है मेरी।
आज उसके लिए
पल - पल सिहर उठता हूँ डर से
संसार से विदा होते आँखे छलक आई
जीवन को दोनों भुजाओं से जकड़कर
खुद से कहता हूँ।

ओ रे मूढ़, सांसारिक जीवन को
किसने कर रखा था इतना अपना
जन्म के पल से ही तुम्हारे अनजाने में ही,
तुहरे इच्छा के पूर्व !
मृत्यु की सुबह
वही अनचिन्हा चेहरा ढूंढते फिरोगे
क्षणिक पहचान को चीन्हे की तरह।
मेरे जीवन तुम्हे इतना प्रेम करता हूँ
इसलिए दोष सिद्ध है,
निश्चित ही मृत्यु से भी इतना ही प्रेम करूँगा।।

स्तन से हटा लेने पर रोता है शिशु डर से,
पर क्षणभर में ही पा जाता है
आश्वासन स्तन से स्तन के स्थानांतरण से।। स
(नैवेद्य संग्रह से)

कविताओं का अनुवाद : **मीता दास**

मसौदा

(मुसलमानी की कहानी)

अनुवाद : मीता दास

उस वक्त अराजकता के प्यादों ने कंटकित बना रखा था पूरे राष्ट्र का शासन, अप्रत्याशित अत्याचारों, भीतरी घातों के बीच दिन - रात झूलती रहती है। दुःस्वप्न का जाल ओढ़कर जीवन यात्रा के समस्त क्रिया कर्म में, गृहस्थ केवल देवताओं के मुख की ओर ताकता रहता और अपदेवताओं की काल्पनिक आशंका से मनुष्यों का मन आतंकित ही रहता। मनुष्य हो या देवता किसी पर भी भरोसा करना बड़ा ही कठिन था, सिर्फ और सिर्फ आँखों से अश्क ही झरते।

चलते - चलते हर पग पर मनुष्य ठोकर खाकर गिर भी जाता था इस दुर्गति की स्थिति में।

ऐसे वक्त में रूपवान कन्या का घर में जन्म लेना जैसे कोई नियति का अभिशाप जैसा ही था। जब ऐसी लड़की घर आती थी, तो उसका परिवार कहता था कि ''मुंह जली घर से विदा ले तो ही जान बचे।'' इसी तरह की परेशानी तीन तल्ले महल वाले तालुकदार बंशी बदन के घर में भी आई।

कमला खूब सुन्दर थी, उसके पिता और माँ की मृत्यु हो चुकी थी। और जब उसकी माँ उसे भी ले गई होती तो परिवार को सुकून मिलता। लेकिन ऐसा नहीं है, उनके चाचा बंशी उसे बहुत प्यार और सतर्कता से रखते रहे हैं। उसकी काकी अपने पड़ोसियों से कहती ''देखो तो भाई ; उसके मां-बाप उसे छोड़ कर चल दिये और हमारे सर पर यह सर्वनाश का बोझ रख गए किस वक्त क्या हो जाए कोई नहीं कह सकता किस वक्त क्या हो जाए मेरी भी यह गृहस्ती बाल बच्चों से भरी हुई है और उसके बीच यह एक सर्वनाश का मशाल जलाकर आई है चारों तरफ से केवल दुष्ट लोगों की दृष्टि इस पर पड़ रही है इसे अकेला छोड़ कर मेरा डूबने का भी समय नहीं, इस डर से मुझे नींद नहीं आती इतने दिन किसी भी हाल में सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा था अब अचानक उसकी शादी की बात आई और इसी धूमधाम के भीतर उसे छुपा कर रखना भी नहीं चल पाएगा उसके पापा कहते हैं इसलिए ही मैं ऐसे घर का पात्र ढूंढकर लाया हूं जहां इस लड़की की रक्षा हो सके लड़का मोचा खाली के परमानंद सेठ का मझला लड़का है उनके पास बहुत पैसे हैं और बहुत सारी जमीन भी उन्होंने पकड़ रखी है। अगर पिता की मृत्यु हो जाए तो उसका चिन्ह भी नहीं मिलेगा पर लड़का बेहद शौकीन है राजपक्षे उड़ाता है जुआ खेलता है बुलबुल की लड़ाइयां कराता है मन पसंद की चीजें उसे बहुत भाती है और अपनी छाती ठोक कर ढेरों रूपया इन्हीं सब चीजों में खर्च करता है उसे अपने इन्हीं धन संपत्ति पर बेहद गर्व था। मोटे मोटे भोजपुरी पहलवान भी रख छोड़े थे और बेहद विख्यात लठैत भी। वे कहते पूरे इलाके में किसी बहनोई का बेटा है जो उसकी देह पर हाथ धर सके। औरतों के बारे में भी यह लड़का बेहद शौकीन था। उसकी एक पत्नी है पर एक और नई कम उम्र की ढूंढरहा है। कमला के रूपवान होने की चर्चा उसने भी सुन रखी थी। सेठ वंश भी बेहद धनी और बलशाली भी। उसे ही ब्याह कर घर लाएंगे ऐसा ठान लिया है उन्होंने।

कमला रो पड़ी और कहा - चाची, मुझे कहाँ डुबो रही हो।''

''तुम्हारी रक्षा करने की क्षमता अगर हममें होती तो जीवन भर हम तुम्हे सीने से लगाये रहते।''

विवाह का रिश्ता जब तय हो गया तब वह पात्र खूब सीना फुलाकर विवाह मंडप पर आया। बाजे - गाजे का इतना जबरदस्त प्रबंध था कि कमला के चाचा जी को हाथ जोड़कर आखिर कहना ही पड़ा कि ''जमाई राजा इतनी धूमधाम ठीक नही, समय बड़ा ही खराब चल रहा है।''

''देखा जाएगा कैसे कोई पास आता है। वह यह सब अपने बहनोई के पुत्रों के बल पर कह रहा था।

''जब तक विवाह संपन्न नही हो जाता, कन्या का जिम्मा हमारा है पर आप शादी के बाद उसे अपने घर सही सलामत ले जाने का जिम्मा अपने ऊपर लें कारण हम इतनी बड़ी जिम्मेदारी लेने के काबिल नही हैं। हम लोग बड़े ही दुर्बल हैं।''

''कोई डर नही'' उसने अपना सीना फुलाकर जवाब दिया।

भोजपुरी पहलवान ने भी अपनी मूछों को ताव देकर अपनी - अपनी लाठियां घुमाई।

कन्या को लेकर दूल्हा चल दिया, उस कुख्यात मैदान जिसे टालताड़ी का मैदान कहते हैं। मधु मल्हार था उन डकैतों का सरदार। वह अपने दल - बल सहित रात के दूसरे प्रहर होगा उस वक्त मशाल जलाकर हुंकार के संग आ धमके। तब उन भोजपुरी पहलवानों में से कोई भी बाकी न रहा। मधु मल्हार एक बड़ा डकैत था, उसके हाथों एक बार पड़ने से छुटकारे की कोई गुंजाइश नही।

कमला पालकी से उतर कर झाड़ियों के पीछे छुपने ही जा रही थी कि ऐसे समय मे उसके ठीक पीछे एक वृद्ध हबीर खान आकर खड़े हो गये। उन्हें सभी पैगम्बर की तरह ही मानते थे।

''बच्चे सब दूर हट जाओ, मैं हूँ हबीर खान।'' हबीर सीधे खड़े होकर उन डकैतों की ओर मुखातिब हो बोले।

''खान साहेब, हम आपको तो कुछ कह ही नही सकते पर आप क्यों हमारा व्यवसाय चौपट करना चाहते हैं ?

जो भी हो उन डकैतों को लौटना ही पड़ा।

हबीर आकर कमला से बोले - ''तुम मेरी कन्या हो। अब कोई डर की बात नही, अब तुम इस विपदा जन्य जगह से चली चलो मेरे घर।''

कमला बेहद संकोच में पड़ गई।

''समझ गया मैं, तुम हिन्दू ब्राम्हण की कन्या हो, एक मुसलमान के घर जाते हुए तुम्हे संकोच हो रहा है। पर एक बात याद रखो - जो सचमुच के मुसलमान होते हैं वे धर्म निष्ठ ब्राम्हण का भी सम्मान करते हैं। मेरे घर मे तुम एक हिन्दू की ही तरह रहोगी। मेरा नाम हबीर खान है, मेरा घर यहीं करीब ही है। तुम चलो, तुम्हे मैं बेहद हिफाजत से रखूंगा।''

कमला एक ब्राम्हण की कन्या है वह किसी भी हालत में उनके संग नही जाना चाह रही थी पर हबीर खान के कहने पर ''देखो मेरे जीते जी इस इलाके में ऐसा कोई भी नही है जो तुम्हारे धर्म को भ्रष्ट कर सके। तुम मेरे संग आओ, जरा भी डरो नही।''

हबीर खान उसे अपने घर ले गए। आश्चर्य की बात कि इस मुसलमान के आठ महलों वाले घर मे एक विशेष शिव मंदिर भी था, और हिंदुओं के

लिए सारी व्यवस्थाएं भी थीं। एक वृद्ध ब्राम्हण आया और उसने बताया कि ''माँ तुम इस जगह को हिंदुओं के स्थान जैसा ही समझो। यहां तुम्हारी जाति की रक्षा होगी।''

कमला रो पड़ी और कहने लगी ''दया करो मुझ पर और जाकर मेरे चाचा को खबर कर दें, वे आकर मुझे यहां से ले जाएं।''

हबीर खान बोल पड़े ''बच्ची तुम गलत सोच रही हो, अब तुम्हे तुम्हारे घर मे अब कोई नही ले जायेगा। वे तुम्हे राह में फेंक जाएंगे। तुम एक बार उनकी परीक्षा करके देख सकती हो।''

हबीर खान कमला को उसके चाचा के दरवाजे तक पहुंचा कर बोले ''जाओ, मैं यहीं तुम्हारी प्रतीक्षा करता हूँ।''

घर के अंदर प्रवेश कर उसने चाचा को गले से लगा लिया और बोली ''चाचा जी तुम मेरा त्याग मत करना।''

चाचा के दोनों आंखों में आंसू छलक आये। काकी ने आकर देखा और बोल उठी ''दूर कर दो, दूर कर दो इस कुलक्षिणी को। सर्वनाशिनी कहीं की बेजात के घर से लौटकर आई है और ऊपर से इसे लाज भी नही आती।''

चाचा बोले ''कोई और उपाय नही है माँ। हम लोगों का जो हिंदुओं का घर है,यहां कोई तुझे नही अपनाएगा। और हमारी भी जात चली जायेगी।''

सर झुकाकर थोड़ी देर कमला खड़ी रही फिर धीरे - धीरे दरवाजे की ओर बढ़गई और हबीर खान के संग चली गई। चिर दिन के लिए बंद हो गए उसके चाचा के घर के कपाट।

हबीर खान के घर मे उसे उसके धर्म पालन करने की सारी व्यवस्था हो गई। हबीर खान उससे बोले ''तुम्हारे महल में मेरा कोई भी बेटा प्रवेश नही करेगा और तुम इस बूढ़े ब्राम्हण के संग अपने सारे रीति रिवाज और पूजा पाठ करने के लिए स्वतंत्र हो। ''

इस घर के बारे में पूर्व काल का एक इतिहास भी चर्चित है कि लोग कहते हैं यह महल एक राजपूतानी का महल था। पूर्व काल मे नवाब एक राजपूतानी की लड़की को ले आये थे पर उस लड़की ने अपनी जाति को हमेशा अलग थलग कर रखा था। वे शिव की पूजा किया करती,कभी - कभी तीर्थ भ्रमण को भी जाया करती। उस वक्त के आभिजात्य वंश के धर्म निष्ठ मुसलमान हिंदुओं की भक्ति में श्रद्धा किया करते थे। वह राजपूतानी इस महल में जितनी भी हिन्दू बेगम रहा करतीं उन सभी की जाति की रक्षा किया करतीं। सुना है कि यह हबीर खान उसी राजपूतानी का ही बेटा है। उसने अपनी माँ का धर्म नही रखा पर वह अपनी माँ को पूजता था। वह माँ तो अब रही नहीं पर वह उनकी स्मृति को संजोकर इस तरह से समाज से प्रताड़ित, अत्याचार से दुखी हिन्दू लड़कियों की मदद और विशेष तौर से उन्हें आश्रय देने का व्रत लिये हुआ था।

कमला को यहां जो मिला वह सब उसे अपने घर में कभी भी न मिलता। वहां उसे उसकी चाची हमेशा ''दूर हट, दूर हट करती और कुलक्षिणी, सर्वनाशिनी, दुर्भागी, तू मरे तो जान छूटे ऐसी ही बातें सुनने को मिलतीं। कभी कभी चोरी छुपे उसके चाचा जी उसे कपड़े -लत्ता लेकर देते पर वह भी उसे छुपाकर रखने होते थे। राजपूतानी के महल में आकर उसे एक सम्माननीय पद मिला। यहां उसे स्नेह की कोई कमी न रही।चारों ओर हिन्दू दास - दासियों से घिरी रहती। आखिर कार अपने यौवन का आवेग आकर उसके देह को छू लिया। इस घर के एक लड़के के संग उसका चोरी - चोरी मिलना -जुलना शुरू हो गया। और वे दोनों मन के बंधन में आबद्ध हो गए।

एक दिन वह हबीर खान से बोली ''बाबा मेरा कोई धर्म नही है, मैं जिसे प्यार करती हूं वही भाग्यवान मेरा धर्म है। जिस धर्म ने मुझे हमेशा के लिए हर प्रेम से वंचित रखा, अवज्ञा से कचरे में फेंक कर रखा उस धर्म के देवता से मैं कोई भी प्रसन्नता नही पा सकी। वहाँ के देवता ने मुझे हमेशा ही प्रताड़ित ही किया है जिसे मैं आज तक नही भूल पाई। मैंने पहले पहल बाबा जान आपके घर में ही प्रेम पाया। यहाँ आकर ही जाना कि लड़कियों के जीवन का भी कोई मूल्य होता है। और जिस देवता ने मुझे आश्रय दिया है उसी स्नेह और सम्मान देने वाले को ही मैं पूजने लगी हूँ। वही मेरे देवता हैं पर वे हिन्दू नही हैं। मुसलमान भी नही हैं। आपके मझले बेटे करीम ही हैं वे। मैंने उन्हें अपने मन मे बसाया है, ग्रहण किया है। मेरा सारा धर्म - कर्म अब उन्ही से बंधा है। आप मुझे भी मुसलमान बना लीजिए। मुसलमान होने में मुझे कोई आपत्ति नही है अगर दोनों धर्म भी रहे तो भी कोई हर्ज नही।''

इस तरह से उनकी जीवन यात्रा चल पड़ी। उसके पूर्व के परिजनों के संग अब मेल मिलाप की कोई संभावना ही नही बची। इधर हबीर खान को भी याद ही न रहा कि कमला उसके घर की कोई नही। और उन्हीने यह सब भुला देने के लिए ही उसका नाम रखा - मेहरजान।

इस बीच सजे चाचा की दूसरे नम्बर की कन्या के विवाह का समय हो आया। उसका भी बंदोबस्त पहले की ही तरह हुआ। पर विपदा भी उस पर पहली बार की ही तरह आई। राह में हुंकार के संग ही आ पहुंचा डकैतों का दल। पहली बार शिकार से वंचित हुए थे इसलिए वे उस दुख का बदला लेने के लिए तत्पर थे।

पर उनके ही पीछे ही एक और जोरदार हुंकार हुई ''खबरदार !''

अरे बाप रे हबीर खान के चेलों ने आकर फिर से खेला खराब कर दिया।''

कन्या पक्ष के लोग जब कन्या को पालकी में ही छोड़कर जिसे जो राह दिखी सब भागने के लिए तैयार तब अचानक उन्हें हबीर खान का अर्द्धचंद्र बना हुआ पताका बंधा बरछा का फाल दिखा। वह बरछा लिए निडर सी एक महिला खड़ी है।

सरला से उसने कहा ''बहन तुझे अब कोई डर नही। मैं तेरे लिए उनका आश्रय लेकर आई हूं, जो सबका आश्रय दाता है। जो किसी के भी जात का विचार नही करते। जिनके लिए सब समान है।

''चाचा प्रणाम लेना मेरा। डरिये मत, मैं आपके पैरों को हाथ नही लगाऊंगी। अब इसे आप लौटा ले जाओ, इसे किसी ने अब तक स्पर्श नही किया है। चाची से कहना उनकी अनिच्छा से ही सही उन्ही के दिये अन्न - वस्त्र से ही मेरा लालन पालन हुआ है, वह ऋण मैं आज इस तरह चुका पाऊंगी यह कभी सोचा भी न था। उसके लिए मैं एक लाल ओढ़नी लाई हूँ, लो यह रख लो, और एक किंखाब का आसन। मेरी बहन यदि कभी कोई दुख की घड़ी आये तो याद रखना तेरी यह मुसलमान दीदी है, तेरी रक्षा करने को।'' स

(रचना काल ---24 -25 जून 1941)

स्त्री का पत्र

कहानी --- रवीन्द्रनाथ ठाकुर

अनुवाद --- मीता दास

श्री चरण कमलेषु,

आज हमारे विवाह को पंद्रह वर्ष हो गए, लेकिन अभी तक मैंने तुमको कभी कोई चिट्ठी नही लिखी। सदा तुम्हारे पास ही रही, न जाने कितनी बकबक करती व सुनती रही, पर चिट्ठी लिखने का अवसर और तुमसे दूर कभी नहीं हुई। आज मैं श्री क्षेत्र में तीर्थ करने आई हूँ, तुम अपने ऑफिस के काम में व्यस्त हो। कलकत्ता के साथ तुम्हारा वही संबंध है जो घोंघे के साथ शंख का होता है। वह तुम्हारे तन-मन से चिपक गया है। इसलिए तुमने ऑफिस में छुट्टी की अर्जी नहीं दी। विधाता की यही इच्छा थी, उन्होंने मेरी छुट्टी की अर्जी मंजूर कर ली। तुम्हारे घर की मझली बहू हूँ। पर आज पंद्रह वर्ष बाद इस समुद्र के किनारे खड़े होकर मैं जान पाई हूँ कि अपने जगत और जगदीश्वर के साथ मेरा एक संबंध और भी है। इसीलिए आज साहस कर यह चिट्ठी लिख रही हूँ, यह तुम्हारे घर की मझली बहू की चिट्ठी नहीं है !

तुम लोगों के साथ मेरे संबंध की बात जिन्होंने मेरे भाग्य में लिखी थी उन्हें छोड़कर जब इस संभावना का और किसी को पता न था, उसी शैशवकाल में मैं और मेरा भाई एक साथ ही सन्निपात के ज्वर से पीड़ित हुए थे। भाई तो मारा गया, पर मैं बची रही। मोहल्ले की औरतें कहने लगीं, मृणाल लड़की है न, इसीलिए बच गई। लड़का होती तो क्या भला बच सकती थी।चोरी करने की विद्या में यमराज पक्के हैं, उन्हें कीमती चीजों का लोभ है। मेरे भाग्य में मौत नहीं है। यही बात अच्छी तरह से समझाने के लिए मैं यह चिट्ठी लिखने बैठी हूँ।

जिस दिन दूर के रिश्ते में तुम्हारे मामा तुम्हारे मित्र नीरद को साथ लेकर कन्या देखने आए थे तब मेरी आयु बारह वर्ष की थी। दुर्गम गाँव में मेरा घर था, जहाँ दिन में भी सियार बोलते रहते। स्टेशन से सात कोस तक छकड़ा गाड़ी में चलने के बाद बाकी तीन मील का कच्चा रास्ता पालकी में बैठकर पार करने के बाद हमारे गाँव पहुँचा जा सकता था। उस दिन तुम लोगों को कितनी हैरानी हुई। जिस पर हमारे पूर्वी बंगाल का भोजन - मामा उस भोजन की हँसी उड़ाना आज भी नहीं भूले।

तुम्हारी माँ की एक ही जिद थी कि बड़ी बहू के रूप की कमी को मझली बहू के द्वारा पूरी करें। नहीं तो भला इतना कष्ट कर तुम लोग हमारे गाँव क्यों आते। पीलिया, यकृत, उदरशूल और दुल्हन के लिए बंगाल प्रांत में खोज नहीं करनी पड़ती। वे स्वयं ही आकर घेर लेते हैं,छुड़ाये नहीं छूटते। पिता की छाती धक्-धक् कर रही थी। माँ दुर्गा नाम जपने लगी। शहर के देवता को गाँव का पुजारी क्या देकर संतुष्ट करे। बेटी के रूप का भरोसा था, लेकिन स्वयं बेटी में उस रूप का कोई मूल्य नहीं था,देखने आया हुआ व्यक्ति उसका जो मूल्य दे, वही उसका मूल्य है। इसीलिए तो हजार रूप -गुण होने पर भी लड़कियों का संकोच किसी भी तरह दूर नहीं होता।

सारे घर का, यही नहीं, सारे मोहल्ले का यह आंतक मेरी छाती पर पत्थर की तरह जमकर बैठ गया। आकाश का सारा उजाला और संसार की समस्त शक्ति उस दिन मानो इस बारह-वर्षीय ग्रामीण लड़की को दो परीक्षकों की दो जोड़ी आँखों के सामने कसकर पकड़ रखने के लिए प्यादों की भूमिका निभा रहे थे। मुझे कहीं छिपने की जगह ही नही मिली।

संपूर्ण आकाश को रूलाती हुई शहनाई बज उठी। मैं तुम लोगों के यहाँ आ पहुँची। मेरे सारे ऐबों का हिसाब लगाकर गृहिणियों को यह स्वीकार करना पड़ा कि सब-कुछ होते हुए भी मैं सुंदर जरूर हूँ। यह बात सुनते ही मेरी बड़ी जेठानी का चेहरा फूल हो गया। लेकिन सोचती हूँ, मुझे रूप की जरूरत ही क्या थी। रूप नामक वस्तु को अगर किसी त्रिपुंडी पंडित ने गंगा मिट्टी से गढ़ा होता तो उसका आदर होता, लेकिन उसे तो विधाता ने केवल अपने आनंद से निर्मित किया है। इसलिए तुम्हारे धर्म के संसार में उसका कोई मूल्य नहीं।

मैं रूपवती हूँ, इस बात को भूलने में तुम्हें बहुत दिन नहीं लगे। लेकिन मुझमें बुध्दि भी है, यह बात तुम लोगों को पग-पग पर याद करनी पड़ी। मेरी यह बुध्दि इतनी स्वाभाविक सी है कि तुम लोगों की घर-गृहस्थी में इतना समय काट देने पर भी वह आज भी टिकी हुई है। मेरी इसी बुध्दि के कारण माँ बड़ी चिंतित रहती थीं। नारी के लिए यह तो एक बला ही है। बाधाओं को मानकर चलना जिसका काम है वह यदि बुध्दि को मानकर चलना चाहे तो ठोकर खा-खाकर उसका सिर फूटेगा ही। लेकिन तुम्हीं बताओ, मैं क्या करूँ। तुम लोगों के घर की बहू को जितनी बुध्दि की जरूरत है विधाता ने अनजाने में मुझे उससे बहुत ज्यादा बुध्दि दे दी, अब मैं उसे लौटाऊँ भी तो किसको। तुम लोग मुझे फूहड़ लड़की कहकर दिन-रात गाली देते रहे। अक्षम्य को कड़ी बात कहने से ही सांत्वना मिलती है, इसीलिए मैंने यह सब बातों के लिए क्षमा कर दिया।

मेरी एक बात तुम्हारी घर-गृहस्थी से बाहर थी जिसे तुममें से कोई नहीं जानता। मैं तुम सबसे छिपाकर कविता लिखा करती थी। वह भले ही कूड़ा-कर्कट क्यों न हो, उस पर तुम्हारे अंतपुर की दीवार न उठ सकी। वहीं मेरी मुक्ति थी, वही मैं .... केवल मैं थी। मेरे भीतर तुम लोगों की मझली बहू के अतिरिक्त और भी कुछ था,उसे तुम लोगों ने कभी पसंद नहीं किया। क्योंकि उसे तुम लोग पहचान भी न पाए। मैं कवि हूँ, यह बात पंद्रह वर्ष में भी तुम लोगों की पकड़ में नहीं आई।

तुम लोगों के घर की प्रथम स्मृतियों में मेरे मन में जो सबसे ज्यादा जगती रहती है वह है तुम लोगों की गोशाला। अंतःपुर को जाने वाले जीने की बगल के कोठे में तुम लोगों की गौएँ रहती हैं,सामने के आँगन को छोड़कर उनके हिलने-डुलने के लिए और कोई जगह न थी। आँगन के कोने में गायों को भूसा देने के लिए काठ की नाँद थी,सवेरे नौकर को तरह-तरह के काम रहते इसलिए भूखी गाएँ नाँद के किनारों को चाट-चाटकर चबा-चबाकर खुरच देतीं। मेरा मन रोने लगता। मैं गँवई-गाँव की बेटी जिस दिन पहली बार तुम्हारे घर में आई उस दिन उस बड़े शहर के बीच मुझे वे दो गायें और तीन बछड़े बहुत ही परिचित आत्मीय जैसे जान पड़े। जितने दिन मैं नई बहू रही, खुद न खाकर छिपा छिपाकर मैं उन्हें खिलाती रही; जब बड़ी हुई तब गौओं के प्रति मेरी प्रत्यक्ष ममता देखकर मेरे साथ हँसी मजाक का संबंध रखने वाले लोग मेरे गोत्र के बारे में संदेह करने लगे।

मेरी बेटी जन्म लेते ही मर गई। जाते समय उसने साथ चलने के लिए मुझे भी पुकारा था। अगर वह जिन्दा रहती तो मेरे जीवन में जो कुछ बड़ा है, जो कुछ सत्य है, वह सब मुझे ला देती; तब मैं मझली बहू से एकदम माँ बन जाती। गृहस्ती से बंधे रहने पर भी माँ विश्व भर की माँ होती है। पर मुझे माँ होने की वेदना ही मिली, माँ होने में जो मुक्ति है वह मुक्ति प्राप्त नहीं हुई।

मुझे याद है, अंग्रेज डॉक्टर को हमारे घर का भीतरी भाग देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ था, और प्रसूति घर देखकर नाराज होकर उसने डाँट-फटकार भी लगाई थी। सदर में तो तुम लोगों का छोटा सा बाग है। कमरे में भी साज श्रृंगार की कोई कमी नहीं, पर भीतर का भाग मानो पश्मीने के काम की उल्टी परत हो। वहाँ न कोई लज्जा है, न सौंदर्य, न श्रृंगार। उजाला वहाँ टिमटिमाता रहता है। हवा चोर की भाँति प्रवेश करती है, आँगन का कूड़ा करकट हटने का नाम नहीं लेता। फर्श और दीवार पर कालिमा अक्षय बनकर विराजती है। लेकिन डॉक्टर ने एक भूल की थी। उसने सोचा था कि शायद इससे हमको रात दिन दुःख होता होगा। बात बिल्कुल उल्टी है। अनादर नाम की चीज राख की तरह होती है। वह शायद भीतर ही भीतर आग को बनाये रखती है लेकिन ऊपर से उसके ताप को प्रकट नहीं होने देती। जब आत्म सम्मान घट जाता है तब अनादर में अन्याय भी नहीं समझ नहीं आता। इसीलिए उसकी वेदना भी नहीं। इसलिए नारी दुःख का अनुभव करतेही लज्जा से भर जाती है। इसीलिए मैं कहती हूँ, अगर तुम लोगों की व्यवस्था यही है कि नारी को दुःख पाना ही होगा तो फिर जहाँ तक संभव हो उसे

अनादर में रखना ही ठीक है। आदर से दुःख की व्यथा और बढ़जाती है।

तुम मुझे चाहे जैसे रखते रहे, मुझे दुःख है यह बात कभी मेरे ख्याल में भी न आई। प्रसूति घर में जब सिर पर मौत आ लगी, मन में डर जगा ही नहीं। हमारा जीवन है ही क्या जो मौत से डरना पड़े ? जिनके प्राणों को आदर और यत्न से कसकर बाँध लिया गया हो, मरने में उन्हीं को कष्ट होता है। उस दिन अगर यमराज मुझे घसीटने लगते तो मैं उसी तरह उखड़ जाती जिस तरह जमीन से घास बड़ी आसानी से जड़ समेत उखड़ आती है। बंगाल की बेटी तो बात-बात में मरना चाहती है। लेकिन इस तरह मरने में कौन सी बहादुरी है। हम लोगों के लिए मरना इतना आसान है कि मरने पे भी लज्जा आती है।

मेरी बेटी संध्या तारा की तरह क्षण भर के लिए उदित होकर अस्त हो गई। मैं फिर से अपने दैनिक कामों में और गाय-बछड़ों में लग गई। इसी तरह मेरा जीवन आखिर तक जैसे-तैसे कट जाता; आज तुम्हें यह चिट्ठी लिखने की जरूरत न पड़ती, लेकिन कभी-कभी हवा एक मामूली-सा बीज उड़ाकर ले जाती है और पक्के दालान में पीपल का अंकुर फूट उठता है; और होते-होते उसी से लकड़ी-पत्थर की छाती विदीर्ण होने लग जाती है। मेरी गृहस्थी की पक्की व्यवस्था में भी जीवन का एक छोटा सा कण न जाने कहाँ से उड़कर आ गिरा तभी से दरार शुरू हो गई।

जब विधवा माँ की मृत्यु के बाद मेरी बड़ी जेठानी की बहन बिंदु ने अपने चचेरे भइयों के अत्याचार से तंग आकर एक दिन हमारे घर अपनी दीदी के पास आश्रय लिया, तब तुम लोगों ने सोचा, यह कहाँ की बला आ टपकी। आग लगे मेरे स्वभाव को, करती भी क्या। देखा, तुम लोग सब मन ही मन खीज रहे थे, इसीलिए उस निराश्रिता लड़की को घेरकर मेरा संपूर्ण मन एकाएक जैसे कमर बाँधकर खड़ा हो गया हो। पराए घर में, पराए लोगों की अनिच्छा होते हुए भी आश्रय लेना कितना बड़ा अपमान होता है। वह अपमान भी जिसे विवश होकर स्वीकारना पड़ा हो, क्या उसे एक कोने में ढकेल दिया जा सकता है भला।

बाद में मैंने अपनी बड़ी जेठानी की दशा देखी। उन्होंने अपनी गहरी संवेदना के कारण ही बहन को अपने पास बुलाया था, लेकिन जब उन्होंने देखा कि इसमें पति की इच्छा नहीं है,तो उन्होंने ऐसा भाव दिखाना शुरू किया मानो उन पर कोई बड़ी बला आ पड़ी हो, मानो अगर वह किसी तरह दूर हो सके तो जान बचे। उन्हें इतना साहस न हुआ कि वे अपनी अनाथ बहन के प्रति खुले मन से स्नेह प्रकट कर सकें। वे पतिव्रता थीं।

उनकी दशा देखकर मेरा मन और भी व्यथित हो उठा। मैंने देखा, बड़ी जेठानी ने खासतौर से सबको दिखा - दिखाकर बिंदु के खाने पहनने की ऐसी बेकार व्यवस्था की और उसे घर में एक तरह से नौकरानियों के ही समान काम सौंप दिये कि मुझे दुःख ही नहीं, लज्जा भी आई। वे सबके सामने इस बात को प्रमाणित करने में लगी रहती थी कि हमारी गृहस्थी को बिंदु बहुत सस्ते दामों में मिल गई है। ढेरों काम करती है फिर भी खर्च के हिसाब से बेहद सस्ती है।

मेरी बड़ी जेठानी के पितृ वंश में कुल के अलावा और कोई बड़ी चीज न थी,न रूप था, न धन। किस तरह मेरे ससुर के पैरों पड़ने पर तुम लोगों के घर में उनका ब्याह हुआ था, यह बात तुम अच्छी तरह जानते हो। वे सदा यही सोचती

रहीं कि उनका विवाह तुम्हारे वंश के प्रति बड़ा भारी अपराध था। इसीलिए वे सब बातों में अपने आपको भरसक दूर रखकर, अपने को छोटा मानकर तुम्हारे घर में बहुत ही थोड़ी जगह में सिमटकर रहती थीं।

लेकिन उनके इस अच्छी बने रहने के उदाहरण से हम लोगों को बड़ी कठिनाई होती। मैं अपने आपको हर तरफ से इतना छोटा नहीं बना पाती, मैं जिस बात को अच्छा समझती हूँ उसे किसी और की खातिर बुरा समझने को मैं उचित नहीं मानती, इस बात के तुम्हें भी बहुत से प्रमाण मिल चुके हैं।

बिंदु को मैं अपने कमरे में घसीट लाई। जीजी कहने लगीं, मझली बहू गरीब घर की बेटी का दिमाग खराब कर डालेगी। वे सबसे मेरी इस ढंग से शिकायत करती फिरती थीं मानो मैंने कोई भारी आफत ढा दी हो। लेकिन मैं अच्छी तरह जानती हूँ, वे मन ही मन सोचती थीं कि उनकी जान बची। अब अपराध का बोझ मेरे सिर पर पड़ने लगा। वे अपनी बहन के प्रति खुद जो स्नेह नहीं दिखा पाती थीं वही मेरे द्वारा प्रकट करके उनका मन हल्का हो जाता। मेरी बड़ी जेठानी बिंदु की उम्र में से दो-एक अंक कम कर देने की चेष्टा किया करती थीं, लेकिन अगर छुपाकर यह कहा जाता कि उसकी उम्र चौदह से कम है, तो ज्यादती न होती। तुम्हें तो मालूम है, देखने में वह इतनी कुरूप थी कि अगर वह फर्श पर गिरकर अपना सिर फोड़ लेती तो भी लोगों को घर के फर्श की ही चिंता होती। यही कारण है कि माता-पिता के न होने पर ऐसा कोई न था जो उसके विवाह की सोचता, और ऐसे लोग भी भला कितने थे ? कितनो के मन में इतना बल है जो उससे ब्याह कर सकें ?

बिंदु बहुत डरती-डरती मेरे पास आई। मानो अगर मेरी देह उससे छू जाएगी तो मैं सह नहीं पाऊँगी। मानो इस विश्व में उसको जन्म लेने वाली कोई शर्त ही नही थी। इसीलिए वह हमेशा अलग हटकर आँख बचाकर चलती। उसके पिता के यहाँ उसके चचेरे भाई उसके लिए ऐसा एक भी कोना नहीं छोड़ना चाहते थे जिसमें वह फालतू चीज की तरह पड़ी रह सके। फालतू कूड़े को घर के आस-पास अनायास ही स्थान मिल जाता है क्योंकि मनुष्य उसको भूल जाता है; लेकिन अनावश्यक लड़की एक तो अनावश्यक होती है, दूसरे,उसको भूलना भी कठिन होता है। इसलिए उसके लिए घूरे पर भी जगह नहीं होती। फिर भी यह कैसे कहा जा सकता है कि उसके चचेरे भाई ही संसार में परमावश्यक पदार्थ थे। जो हो, पर वे लोग खूबमस्त हैं।

यही कारण है कि जब मैं बिंदु को अपने कमरे में बुला लाई तो उसकी छाती धक्-धक् करने लग गई। उसका डर देखकर मुझे बड़ा दुःख हुआ। मेरे कमरे में उसके लिए थोड़ी-सी जगह है, यह बात मैंने बड़े प्यार से उसे समझा दी।

लेकिन मेरा कमरा एक मेरा ही कमरा तो था नहीं। इसलिए मेरा काम आसान नहीं हुआ। मेरे पास दो-चार दिन रहने पर ही उसके शरीर में न जाने लाल-लाल क्या निकल आया। शायद घम्हौरी रही होगी या ऐसा ही कुछ होगा, तुमने कहा शीतला। क्यों न हो,वह बिंदु थी न। तुम्हारे मोहल्ले के एक अनाड़ी डॉक्टर ने आकर बताया, दो-एक दिन और देखे बिना ठीक से कुछ नहीं कहा जा सकता। लेकिन दो-एक दिन तक धीरज किसको होता। बिंदु तो अपनी बीमारी की लज्जा से ही मरी जा रही थी। मैंने कहा, शीतला है तो हो, मैं उसे अपने प्रसूति घर में लिवा ले जाऊँगी, और किसी को कुछ करने की जरूरत नहीं। इस बात पर जब तुम सब लोग मेरे ऊपर भड़ककर क्रोध की मूर्ति बन गए। यही नहीं, जब बिंदु की जीजी भी बड़ी परेशानी दिखाती हुई उस अभागी लड़की को अस्पताल भेजने का प्रस्ताव करने लगीं, तभी उसके शरीर के वे सारे लाल-लाल दाग एकदम विलीन हो गए। मैंने देखा कि इस बात पर तुम लोग और भी व्यग्र हो उठे। कहने लगे, अब तो वाकई शीतला बैठ गई है। क्यों न हो, वह बिंदु थी न।

अनादर के पालन-पोषण में एक बड़ा गुण है। शरीर को वह एकदम अजर-अमर कर देता है। बीमारी आने का नाम नहीं लेती, मरने के सारे आम रास्ते बिल्कुल बंद हो जाते हैं। इसीलिए रोग उसके साथ मजाक करके चला गया,हुआ

कुछ नहीं। लेकिन यह बात अच्छी तरह स्पष्ट हो गई कि संसार में ज्यादा साधनहीन व्यक्ति को आश्रय देना ही सबसे कठिन है। आश्रय की आवश्यकता उसको जितनी अधिक होती है आश्रय की बाधायें भी उसके लिए उतनी ही विषम होती हैं। बिंदु के मन से जब मेरा डर जाता रहा तब उसको एक और ग्रह ने पकड़ लिया। वह मुझे इतना प्यार करने लगी कि मुझे डर होने लगा। प्यार की ऐसी मूर्ति तो संसार में पहले कभी देखी ही न थी। पुस्तकों में पढ़ा अवश्य था, पर वह भी स्त्री-पुरूष के बीच ही। बहुत दिनों से ऐसी कोई घटना नहीं हुई थी कि मुझे अपने रूप की बात याद आती। अब इतने दिनों बाद यह कुरूप लड़की मेरे उसी रूप के पीछे पड़ गई। रात-दिन मेरा मुँह देखते रहने पर भी उसकी आँखों की प्यास नहीं बुझती थी। कहती, दीदी तुम्हारा यह मुखड़ा मेरे अलावा और कोई नहीं देख पाता। जिस दिन मैं स्वयं ही अपने केश बाँध लेती उस दिन वह बहुत रूठ जाती। अपने हाथों से मेरे केश-भार को हिलाने-डुलाने में उसे बड़ा आनंद आता। कभी कहीं दावत में जाने के अतिरिक्त और कभी तो मुझे साज-श्रृंगार की आवश्यकता पड़ती ही न थी,लेकिन बिंदु मुझे तंग कर-करके रोज थोड़ा बहुत सजाती रहती। वह लड़की मुझे लेकर बिल्कुल पागल हो गई थी।

तुम्हारे घर के भीतरी हिस्से में कहीं रत्ती-भर भी मिट्टी न थी। उत्तर की ओर की दीवार में नाली के किनारे न जाने कैसे एक गूलर का पौधा निकल आया। जिस दिन मुझे दिखता कि उस गूलर के पौधे में नई लाल लाल कोंपलें निकल आई हैं, उसी दिन समझ जाती कि धरती पर वसंत आ गया है, और जिस दिन मेरी घर गृहस्थी में जुटी हुई इस अनादृत लड़की के मन का ओर-छोर किसी तरह का तरंग उठा उस दिन मैंने जाना कि हृदय जगत में भी वसंत की हवा बहती है। वह स्वर्ग से आती है, गली के किसी मोड़ से नहीं।

बिंदु के स्नेह के दुरूसह वेग ने मुझे अधीर कर डाला था। मैं मानती हूँ कि मुझे कभी - कभी उस पर क्रोध आता था, लेकिन उस स्नेह में मैंने अपना एक ऐसा रूप देखा जो जीवन में मैं पहले कभी नहीं देख पाई थी। वही मेरा मुक्त रूप था।

इधर मैं बिंदु जैसी लड़की को इतना लाड़-प्यार करती थी,यह बात तुम लोगों को नहीं सुहाती थी। इसे लेकर बराबर खटपट होने लगी। जिस दिन मेरे कमरे से बाजूबंद चोरी हुआ उस दिन इस बात का आभास देते हुए तुम लोगों को तनिक भी लज्जा नही आई कि इस चोरी में किसी न किसी रूप में बिंदु का ही हाथ है। जब स्वदेशी आंदोलनों में लोगों के घर की तलाशियाँ होने लगीं तब तुम लोग अनायास ही यह संदेह कर बैठे कि बिंदु पुलिस द्वारा रखी गई स्त्री-गुप्तचर है। इसका और तो कोई प्रमाण न था; प्रमाण बस इतना ही काफी था कि वह बिंदु थी। तुम लोगों के घर की दासियाँ उनका कोई भी काम करने से इनकार कर देती थीं - उनमें से किसी से अपने काम के लिए कहने में वह लड़की भी संकोच के मारे जड़वत हो जाती थी। इन्हीं सब कारणों से उसके लिए मेरा खर्च बढ़गया। मैंने खास तौर से अलग से एक दासी रख ली। यह बात तुम लोगों को अच्छी नहीं लगी। बिंदु को पहनने के लिए मैं जो कपड़े देती थी,उन्हें देखकर तुम इतने क्रोधित हुए कि तुमने मेरा हाथ खर्च ही बंद कर दिया। दूसरे ही दिन से मैंने पांच सिक्के में एक जोड़ी मोटी कोरी मिल की धोती पहननी शुरू कर दी। और जब मोती की माँ मेरी जूठी थाली उठाने के लिए आई तो मैंने उसको मना कर दिया। मैंने खुद जूठा भात बछड़े को खिलाने के बाद आंगन के नल पर जाकर बर्तन मांज लिए। एक दिन एकाएक इस दृश्य को देखकर तुम प्रसन्न नही हुए। मेरी खुशी के बिना तो काम चल सकता है,पर तुम लोगों की खुशी के बिना नहीं चल सकता यह बात आज तक मेरी समझ में नहीं आई। उधर ज्यों-ज्यों तुम लोगों का क्रोध बढ़ता जा रहा था त्यों-त्यों बिंदु की आयु भी बढ़ती जा रही थी। इस स्वाभाविक बात पर तुम लोग अस्वाभाविक ढंग से परेशान हो उठे थे।

एक बात याद करके मुझे आश्चर्य होता रहा है कि तुम लोगों ने बिंदु को जबर्दस्ती अपने घर से विदा क्यों नहीं कर दिया? मैं अच्छी तरह समझती हूँ कि तुम लोग मन ही मन मुझसे डरते थे। विधाता ने मुझे बुध्दि दी है, भीतर ही भीतर इस बात की फिक्र किए बिना तुम लोगों को चैन नहीं पड़ता था। अंत में अपनी शक्ति से बिंदु को विदा करने में असमर्थ होकर तुम लोगों ने प्रजापति देवता की शरण ली। बिंदु के लिये वर ठीक हुआ। बड़ी जेठानी बोली,जान बची। माँ काली ने अपने वंश की लाज रख ली। वर कैसा था, मैं नहीं जानती। तुम लोगों से सुना था कि सब बातों में अच्छा है। बिंदु मेरे पैरों से लिपटकर रोने लगी। बोली, दीदी, मेरा ब्याह क्यों कर रही हो भला। मैंने उसको समझाते-बुझाते हुए कहा .... बिंदु ..... डर मत, मैंने सुना है तेरा वर अच्छा है।

बिंदु बोली, अगर वर अच्छा है तो मुझमें भला ऐसा क्या है जो उसे पसंद आ सके। लेकिन वर पक्ष वालों ने तो बिंदु को देखने के लिए आने का नाम भी न लिया। बड़ी दीदी इससे बड़ी निश्चिंत हो गईं।

लेकिन बिंदु रात-दिन रोती रहती। चुप होने का नाम ही न लेती। उसको क्या कष्ट है, यह मैं ही जानती थी। बिंदु के लिए मैंने अपनी गृहस्ती के लोगों से कई बार झगड़ी, लेकिन उसका ब्याह रूक जाए यह बात कहने का साहस मैं नहीं कर पाई। कहती भी किस बिना पर। मैं अगर मर जाऊं तो उसकी क्या दशा होगी।

एक तो लड़की उस पर काली, जिसके यहाँ जा रही है, वहाँ उसकी क्या दशा होगी, इस बातों की चिंता न करना ही अच्छा था। सोचती तो प्राण काँप उठते।

बिंदु ने कहा, दीदी, ब्याह में अभी पाँच दिन और हैं। इस बीच क्या मुझे मौत नहीं आएगी।

मैंने उसको खूब धमकाया। लेकिन अंतर्यामी जानते हैं कि अगर किसी स्वाभाविक ढंग से बिंदु की मृत्यु हो जाती तो मुझे चैन मिलता।

ब्याह के एक दिन पहले बिंदु ने अपनी दीदी के पास जाकर कहा, दीदी, मैं तुम लोगों की गोशाला में पड़ी रहूँगी, जो कहोगी वही करूँगी, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, मुझे इस तरह मत फैंकों।

कुछ दिनों से दीदी की आँखों से चुपचाप आँसू झर रहे थे। उस दिन भी झरने लगे। लेकिन सिर्फ हृदय ही तो नहीं होता, शास्त्र भी तो होता है। उन्होंने कहा, बिंदु, जानती नहीं, स्त्री की गति भी, मुक्ति भी सब कुछ पति ही होता है। किस्मत में अगर दुःख लिखा है तो उसे कोई मिटा नहीं सकता।

असली बात तो यह थी कि कहीं कोई और रास्ता ही न था - बिंदु को ब्याह तो करना ही पड़ेगा, फिर जो हो सो हो।

मैं चाहती थी कि विवाह हमारे ही घर से हो। लेकिन तुम लोग कह बैठे वर के ही घर में हो, उनके कुल की यही रीति है। मैं समझ गई, बिंदु के ब्याह में अगर

तुम लोगों को खर्च करना पड़ा तो तुम्हारे गृह देवता उसे किसी भी भाँति नहीं सह सकेंगे। इसीलिए चुप रह जाना पड़ा। लेकिन एक बात तुममें से कोई नहीं जानता। दीदी को बताना चाहती थी, पर बताई नहीं, नहीं तो वे डर से मर जातीं।। मैंने अपने थोड़े बहुत गहने चुपचाप बिंदु को पहना दिये थे। सोचा था, दीदी की नजर में तो जरूर आएगा। लेकिन उन्होंने जैसे देखकर भी नहीं देखा। दुहाई है धर्म की, इसके लिए तुम उन्हें क्षमा कर देना।

जाने से पहले बिंदु मुझसे लिपटकर बोली, दीदी, तो क्या तुम लोगों ने मुझे एकदम त्याग दिया। मैंने कहा, नहीं बिंदु, तुम चाहे जैसी हालत में रहो, प्राण रहते मैं तुम्हें नहीं त्याग सकती।

तीन दिन बीते। तुम्हारे ताल्लुके के प्रजाओं के भोजन के लिए तुम्हें जो भेड़ दिया था उसे मैंने तुम्हारी जठराग्नि से बचाकर नीचे वाली हमलोगों की कोयले की कोठरी के एक कोने में बाँध दिया था। सवेरे उठते ही मैं खुद जाकर उसको दाना खिला आती। दो-एक दिन तुम्हारे नौकरों पर भरोसा करके देखा उसे खिलाने की बजाय उनका झुकाव उसी को खा जाने की ओर अधिक था।

उस दिन सवेरे कोठरी में गई तो देखा,बिंदु एक कोने में गठरी बनकर बैठी हुई है। मुझे देखते ही वह मेरे पैर पकड़कर चुपचाप रोने लगी।

बिंदु का पति पागल था।

सच कह रही है,बिंदु?

तुम्हारे सामने क्या मैं इतना बड़ा झूठ बोल सकती हूँ, दीदी? वह पागल हैं। इस विवाह में ससुर की सम्मति नहीं थी, लेकिन वे मेरी सास से यमराज की तरह डरते हैं। ब्याह से पहले ही वे काशी चले गए। सास ने जिद करके अपने लड़के का ब्याह कर दिया।

मैं वहीं कोयले के ढेर पर बैठ गई। स्त्री पर स्त्री को दया नहीं आती। कहती है वह कोई लड़की थोड़े ही है। लड़का पागल है तो क्या, है तो पुरूष न।

देखने में बिंदु का पति पागल नहीं लगता। लेकिन कभी-कभी उसे ऐसा उन्माद चढ़ता कि उसे कमरे में ताला बंद करके रखना पड़ता है। ब्याह की रात वह ठीक था। लेकिन रात में जगते रहने के कारण और इसी तरह के और झंझटों के कारण दूसरे दिन से उसका दिमाग बिल्कुल खराब हो गया। बिंदु दोपहर को पीतल की थाली में भात खाने बैठी थी, अचानक उसके पति ने भात समेत थाली उठाकर आँगन में फेंक दी। न जाने क्यों अचानक उसको लगा, मानो बिंदु रानी रासमणि हो। नौकर ने हो न हो, चोरी से उसी के सोने के थाली में रानी के खाने के लिए भात दिया हो। इसलिए उसे क्रोध आ गया था। बिंदु तो डर के मारे मरी जा रही थी। तीसरी रात को जब उसकी सास ने उससे अपने पति के कमरे में सोने के लिए कहा तो बिंदु के प्राण सूख गये। उसकी सास को जब क्रोध आता था तो होश में नहीं रहती थी। वह भी पागल ही थी, लेकिन पूरी तरह से नहीं। इसलिए वह ज्यादा खतरनाक थी। बिंदु को कमरे में जाना ही पड़ा। उस रात उसके पति का मिजाज ठंडा था। लेकिन डर के मारे बिंदु का शरीर पत्थर हो गया था। पति जब सो गए तब काफी रात बीतने पर वह किस तरह चतुराई से भागकर चली आई, इसका विस्तृत विवरण लिखने की आवश्यकता नहीं है। घृणा और क्रोध से मेरा शरीर जलने लगा। मैंने कहा, इस तरह धोखे के ब्याह को ब्याह नहीं कहा जा सकता। बिंदु, तू जैसे रहती थी वैसे ही मेरे पास रह। देखूं, तुझे कौन ले जाता है।

तुम लोगों ने कहा, बिंदु झूठ बोल रही है।

मैंने कहा, वह कभी झूठ नहीं बोलती।

तुम लोगों ने कहा, तुम्हें कैसे मालूम?

मैंने कहा, मैं अच्छी तरह जानती हूँ। तुम लोगों ने डर दिखाया, अगर बिंदु के ससुराल वालों ने पुलिस केस कर दिया तो आफत में पड़ जायेंगे।

मैंने कहा,क्या अदालत यह बात न सुनेगी कि उसका ब्याह धोखे से पागल वर के साथ कर दिया गया है।

तुमने कहा, तो क्या इसके लिए अदालत जायेंगे। हमें ऐसी क्या गर्ज है?

मैंने कहा, जो कुछ मुझसे बन पड़ेगा,अपने गहने बेचकर करूँगी।

तुम लोगों ने कहा, क्या वकील के घर तक दौड़ोगी? इस बात का क्या जवाब होता? सिर ठोकने के अलावा और कर भी क्या सकती थी।

उधर बिंदु की ससुराल से उसके जेठ ने आकर बाहर बड़ा हंगामा खड़ा कर दिया। कहने लगा, थाने में रिपोर्ट कर दूँगा। मैं नहीं जानती मुझमें क्या शक्ति थी - लेकिन जिस गाय ने अपने प्राणों के डर से कसाई के हाथों से छूटकर मेरा आश्रय लिया हो उसे पुलिस के डर से फिर उस कसाई को लौटाना पड़े यह बात मैं किसी भी प्रकार नहीं मान सकती थी। मैंने हिम्मत करके कहा, करने दो थाने में रिपोर्ट।

इतना कहकर मैंने सोचा कि अब बिंदु को अपने सोने के कमरे में ले जाकर कमरे में ताला लगाकर बैठ जाऊँ। लेकिन खोजा तो बिंदु का कहीं पता नहीं। जिस समय तुम लोगों से मेरी बहस चल रही थी उसी समय बिंदु ने स्वयं बाहर निकलकर अपने जेठ को आत्म-समर्पण कर दिया था। वह समझ गई थी कि अगर वह इस घर में रही तो मैं बड़ी आफत में पड़ जाऊँगी।

बीच में भाग आने से बिंदु ने अपना दुःख और भी बढ़ा लिया। उसकी सास का तर्क था कि उनका लड़का उसको खाए तो नहीं जा रहा था न। संसार में बुरे पति के उदाहरण दुर्लभ भी नहीं हैं। उनकी तुलना में तो उनका लड़का सोने का चाँद था।

मेरी बड़ी जेठानी ने कहा - जिसका भाग्य ही खराब हो उसके लिए रोने से क्या फायदा ? पागल-वागल जो भी हो, है तो पति ही न। तुम लोगों के मन में लगातार उस सती साध्वी का दृष्टांत याद आ रहा था जो अपने कोढ़ी पति को अपने कंधों पर बिठाकर वेश्या के यहाँ ले गई थी। संसार भर में कायरता के इस सबसे अधम आख्यान का प्रचार करते हुए, तुम पुरूषमन को कभी तनिक भी संकोच न हुआ। इसलिए मानव जन्म पाकर भी तुम लोग बिंदु के व्यवहार पर क्रोध से भर उठे, उससे तुम्हारा सिर नहीं झुका। बिंदु के लिए मेरी छाती फटी जा रही थी, लेकिन तुम लोगों का व्यवहार देखकर मेरी लज्जा का भी अंत न था। मैं तो गाँव की लड़की थी, जिस पर तुम लोगों के घर आ पड़ी, फिर भगवान ने न जाने किस तरह मुझे ऐसी बुध्दि दे दी। धर्म संबंधी तुम लोगों की यह बातें मुझे किसी प्रकार सहन ही नहीं हुई।

मैं निश्चित जानती थी कि बिंदु मर भले ही जाये, वह अब हमारे घर लौटकर कभी नहीं आएगी। लेकिन मैं तो उसे ब्याह के एक दिन पहले यह आशा दिला चुकी थी कि प्राण रहते उसे नहीं छोडूँगी। मेरा छोटा भाई शरद कलकत्ता में कॉलेज में पढ़ता था। तुम तो जानते ही हो, तरह-तरह से वालंटियरी करना,प्लेग वाले मोहल्लों में चूहे मारना, दामोदर में बाढ़आने की खबर सुनकर दौड़ पड़ना, इन सब बातों में उसका इतना उत्साह था कि एफ.ए. की परीक्षा में लगातार दो बार फेल हुआ फिर भी उसके उत्साह में कोई कमी नहीं आई। मैंने उसे बुलाकर कहा, शरद जैसे भी हो, बिंदु की खबर पाने का इंतजाम तुझे करना ही पड़ेगा। बिंदु को मुझे चिट्ठी भेजने का साहस नहीं होगा, वह भेजे भी तो मुझे नहीं मिलेगी।

इस काम के बजाय यदि मैं उससे डाका डालकर बिंदु को लाने की बात कहती या उसके पागल पति का सिर तोड़ देने के लिए कहती तो उसे ज्यादा खुशी होती।

शरद के साथ बातचीत कर रही थी तभी तुमने कमरे में आकर कहा, तुम फिर यह क्या बखेड़ा कर रही हो ? मैंने कहा, वही जो शुरू से करती आई हूँ। जब से तुम्हारे घर आई हूँ... लेकिन नहीं, वह तो तुम्हीं लोगों का काम है।

तुमने पूछा, बिंदु को लाकर फिर कहीं छिपा रखा है क्या ?

मैंने कहा, बिंदु अगर आती तो मैं जरूर छिपाकर रख लेती, लेकिन वह अब नहीं आएगी। तुम्हें डरने की कोई जरूरत नहीं है। शरद को मेरे पास देखकर तुम्हारा संदेह और भी बढ़गया। मैं जानती थी कि शरद का हमारे यहाँ आना-जाना तुम लोगों को पसंद नहीं है। तुम्हें डर था कि उस पर पुलिस की नजर है। अगर कभी किसी राजनीतिक मामले में फँस गया तो तुम्हें भी फँसा डालेगा। इसीलिए मैं

भाई दूज का तिलक भी किसी आदमी के हाथों उसी के पास भिजवा देती थी, अपने घर कभी भी नहीं बुलाती थी।

एक दिन तुमसे सुना कि बिंदु फिर भाग गई है, इसलिए उसका जेठ हमारे घर उसे खोजने आया है। सुनते ही मेरी छाती में शूल चुभ गए। अभागिनी का असह्य कष्ट तो मैं समझ गई, पर फिर भी कुछ करने का कोई रास्ता न था। शरद पता करने दौड़ा। शाम को लौटकर मुझसे बोला, बिंदु अपने चचेरे भाइयों के यहाँ गई थी, लेकिन उन्होंने अत्यंत क्रोधित होकर उसी वक्त उसे फिर ससुराल पहुँचा दिया। इसके लिए उन्हें हर्जाने का और गाड़ी के किराये का जो दंड भोगना पड़ा उसकी खार अब भी उनके मन से नहीं गई है।

श्रीक्षेत्र की तीर्थ-यात्रा करने के लिए तुम लोगों की काकी तुम्हारे यहाँ आकर ठहरीं। मैंने तुमसे कहा, मैं भी जाऊँगी। अचानक मेरे मन में धर्म के प्रति यह श्रध्दा देखकर तुम इतने खुश हुए कि तुमने तनिक भी आपत्ति नहीं की। तुम्हें इस बात का भी ध्यान था कि अगर मैं कलकत्ता में रही तो फिर किसी न किसी दिन बिंदु को लेकर झगड़ा कर बैठूँगी। मेरे मारे तुम्हें बड़ी परेशानी थी। मुझे बुधवार को चलना था, रविवार को ही सब ठीक-ठाक हो गया। मैंने शरद को बुलाकर कहा, जैसे भी हो बुधवार को पुरी जाने वाली गाड़ी में तुझे बिंदु को चढ़ा ही देना पड़ेगा।

शरद का चेहरा खिल उठा। वह बोला,डर की कोई बात नहीं, दीदी, मैं उसे गाड़ी में बिठाकर पुरी तक चला चलूँगा। इसी बहाने जगन्नाथ जी के दर्शन भी हो जाएँगे।

उसी दिन शाम को शरद फिर आया। उसका मुंह देखते ही मेरा दिल बैठ गया।

मैंने पूछा, क्या बात है शरद! शायद कोई रास्ता नहीं निकला।

वह बोला, नहीं।

मैंने पूछा, क्या उसे राजी नहीं कर पाए? उसने कहा, अब जरूरत भी नहीं है। कल रात अपने कपड़ों में आग लगाकर उसने आत्म-हत्या कर ली। उस घर के जिस भतीजे से मैंने मेल बढ़ा लिया था उसी से खबर मिली कि तुम्हारे नाम वह एक चिट्ठी रख गई थी,लेकिन वह चिट्ठी उन लोगों ने नष्ट कर दी।

चलो, छुट्टी हुई।

गाँव-भर के लोग चीख उठे। कहने लगे, लड़कियों का कपड़ों में आग लगाकर मर जाना तो अब एक फैशन हो गया है।

तुम लोगों ने कहा, अच्छा नाटक है। हुआ करे, लेकिन नाटक का तमाशा सिर्फ बंगाली लड़कियों की साड़ी पर ही क्यों होता है, बंगाली वीर पुरूषों की धोती की चुन्नटों पर क्यों नहीं होता, यह भी तो सोचकर देखना चाहिए।

ऐसा ही था बिंदु का दुर्भाग्य। जितने दिन जीवित रही, तनिक भी यश नहीं मिल सका। न रूप का, न गुण का, मरते वक्त भी यह नहीं हुआ कि सोच-समझकर कुछ ऐसे नए ढंग से मरती कि दुनिया-भर के लोग खुशी से ताली बजा उठते। मरकर भी उसने लोगों को नाराज ही किया।

दीदी कमरे में जाकर चुपचाप रोने लगीं, लेकिन उस रोने में जैसे एक सांत्वना थी। कुछ भी हो, जान तो बची, मर गई, यही क्या कम है। अगर बची रहती तो न जाने क्या हो जाता।

मैं तीर्थ में आ पहुँची हूँ। बिंदु के आने की तो जरूरत ही न रही। लेकिन मुझे जरूरत थी। लोग जिसे दुःख मानते हैं वह तुम्हारी गृहस्थी में मुझे कभी नहीं मिला। तुम्हारे यहाँ खाने पहनने की कोई कमी नहीं। तुम्हारे बड़े भाई का चरित्र चाहे जैसा हो, तुम्हारे चरित्र में ऐसा कोई दोष नहीं जिसके लिए विधाता को बुरा कह सकूँ। वैसे अगर तुम्हारा स्वभाव तुम्हारे बड़े भाई की तरह भी होता तो भी शायद मेरे दिन करीब-करीब ऐसे ही कट जाते और मैं अपनी सती-साध्वी बड़ी जेठानी की तरह पति देवता को दोष देने के बजाय विश्व-देवता को ही दोष देने की चेष्टा करती। अतएव, मैं तुमसे कोई शिकायत नहीं करना चाहती - मेरी चिट्ठी का कारण यह नहीं है।

लेकिन मैं अब माखन बराल की गली में तुम्हारे उस सत्ताईस नंबर वाले घर में लौटकर नहीं आऊँगी। मैं बिंदु को देख चुकी हूँ। इस संसार में नारी का सच्चा परिचय क्या है, यह मैं पा चुकी हूँ। अब तुम्हारी कोई जरूरत नहीं। और फिर मैंने यह भी देखा है कि वह लड़की ही क्यों न हो, भगवान ने उसका त्याग नहीं किया। उस पर तुम लोगों का चाहे कितना ही जोर क्यों न रहा हो, वह उसका अंत नहीं था। वह अपने अभागे मानव जीवन से बड़ी थी। तुम लोगों के पैर इतने लंबे नहीं थे कि तुम मनमाने ढंग से अपने हिसाब से उसके जीवन को सदा के लिए उनसे दबाकर रख सकते, मृत्यु तुम लोगों से भी बड़ी है। अपनी मृत्यु में वह महान है, वहाँ बिंदु केवल बंगाली परिवार की लड़की नहीं है, केवल चचेरे भाइयों की बहन नहीं है, केवल किसी अपरिचित पागल पति की प्रवंचिता पत्नी नहीं है। वहाँ वह अनंत है। मृत्यु की उस वंशी का स्वर उस बालिका के भग्न ह्रदय से निकलकर जब मेरे जीवन की यमुना के पास बजने लगा तो पहले-पहल मानो मेरी छाती में कोई बाण बिंध गया हो। मैंने विधाता से प्रश्न किया, च्इस संसार में जो सबसे अधिक तुच्छ है वही सबसे अधिक कठिन क्यों है?''इस गली में चारदीवारी से घिरे इस निरानंद स्थान में यह जो तुच्छतम बुदबुद है, वह इतनी भयंकर बाधा कैसे बन गया? तुम्हारा संसार अपनी शठ-नीतियों से क्षुधा-पात्र को सँभाले कितना ही क्यों न पुकारे, मैं उस अंतःपुर की जरा-सी चौखट को क्षण-भर के लिए भी पार क्यों न कर सकी? ऐसे संसार में ऐसा जीवन लेकर मुझे इस अत्यंत तुच्छ काठ पत्थर की आड़ में ही तिल-तिलकर क्यों मरना होगा? कितनी तुच्छ है यह मेरी प्रतिदिन की जीवन-यात्रा। इसके बंधे नियम, बँधे अभ्यास, बंधी हुई बोली,बँधी हुई मार सब कितनी तुच्छ है - फिर भी क्या अंत में दीनता के उस नाग-पाश बंधन की ही जीत होगी, और तुम्हारे अपने इस आनंद-लोक की, इस सृष्टि की हार?

लेकिन, मृत्यु की वंशी बजने लगी- कहाँ गई राज-मिस्त्रियों की बनाई हुई वह दीवार, कहाँ गया तुम्हारे घोर नियमों से बँधा वह काँटों का घेरा। कौन-सा है वह दुःख, कौन-सा है वह अपमान जो मनुष्य को बंदी बनाकर रख सकता है। यह लो, मृत्यु के हाथ में जीवन की जय-पताका उड़ रही है। अरी मझली बहू, तुझे डरने की अब कोई जरूरत नहीं। मझली बहू को इस खोल से विलग होने में एक क्षण भी न लगा। तुम्हारी गली का मुझे कोई डर नहीं। आज मेरे सामने नीला समुद्र है, मेरे सिर पर आषाढ़के बादल हैं।

तुम लोगों के रीति रिवाज के अंधकार ने मुझे अब तक ढक रखा था। बिंदु ने आकर क्षण भर के लिए उस आवरण के सुराख से मुझे देख लिया। वही लड़की अपनी मृत्यु से सिर से पैर तक मेरा आवरण उघाड़ गई। आज बाहर आकर देखती हूँ, अपना ऐश्वर्य रखने के लिए कहीं जगह ही नहीं है। मेरा यह अनादृत रूप जिनकी आँखों को मोह लिया है वे मेरे सौंदर्य को आज संपूर्ण आकाश से मुझे निहार रहे हैं। अब मझली बहू मर गई, खैर।

तुम सोच रहे होगे, मैं मरने जा रही हूँ, डरने की कोई बात नहीं। तुम लोगों के साथ मैं ऐसा पुराना मजाक नहीं करूँगी। मीराबाई भी तो मेरी ही तरह नारी थी। उनकी जंजीरें भी तो कम भारी नहीं थीं, बचने के लिए उनको तो मरना नहीं पड़ा। मीराबाई ने अपने गीत में कहा था, बाप छोड़ दे, माँ छोड़ दे, जहाँ कहीं जो भी हैं, सब छोड़ दें, लेकिन मीरा की लगन वहीं रहेगी प्रभु, अब जो होना है सो हो।

यह लगन ही तो जीवन है।

मैं जीवित रहूँगी। मैं बच गई।

तुम लोगों के चरणों के आश्रय से मुक्त हुई।

- मृणाल स

काबुलीवाला

रवींद्रनाथ ठाकुर

मेरी पाँच वर्ष की छोटी लड़की मिनी से पल भर भी बात किए बिना नहीं रहा जाता। दुनिया में आने के बाद भाषा सीखने में उसने सिर्फ एक ही वर्ष लगाया होगा। उसके बाद से जितनी देर तक सो नहीं पाती है, उस समय का एक पल भी वह चुप्पी में नहीं खोती। उसकी माता बहुधा डाँट-फटकारकर उसकी चलती हुई जबान बन्द कर देती है, किन्तु मुझसे ऐसा नहीं होता। मिनी का मौन मुझे ऐसा अस्वाभाविक-सा प्रतीत होता है कि मुझसे वह अधिक देर तक सहा नहीं जाता और यही कारण है कि मेरे साथ उसके भावों का आदान-प्रदान कुछ अधिक उत्साह के साथ होता रहता है।

सवेरे मैंने अपने उपन्यास के सत्तरहवें अध्याय में हाथ लगाया ही था कि इतने में मिनी ने आकर कहना आरम्भ कर दिया, बाबूजी! रामदयाल दरबान कल काक को कौआ कहता था। वह कुछ जानता ही नहीं, न बाबूजी?

विश्व की भाषाओं की विभिन्नता के विषय में मेरे कुछ बताने से पहले ही उसने दूसरा प्रसंग छेड़ दिया, बाबूजी! भोला कहता था आकाश मुँह से पानी फेंकता है, इसी से बरसा होती है। अच्छा बाबूजी, भोला झूठ-मूठ कहता है न? खाली बक-बक किया करता है, दिन-रात बकता रहता है।

इस विषय में मेरी राय की तनिक भी राह न देख कर, चट से धीमे स्वर में एक जटिल प्रश्न कर बैठी, "बाबूजी, माँ तुम्हारी कौन लगती है?"

मन ही मन में मैंने कहा - साली और फिर बोला, मिनी, तू जा, भोला के साथ खेल, मुझे अभी काम है, अच्छा।

तब उसने मेरी मेज के पार्श्व में पैरों के पास बैठकर अपने दोनों घुटने और हाथों को हिला-हिलाकर बड़ी शीघ्रता से मुंह चलाकर अटकन-बटकन दही चटाके कहना आरम्भ कर दिया। जबकि मेरे उपन्यास के अध्याय में प्रतापसिंह उस समय कंचनमाला को लेकर रात्रि के प्रगाढ़ अन्धकार में बन्दीगृह के ऊंचे झरोखे से नीचे कलकल करती हुई सरिता में कूद रहे थे।

मेरा घर सड़क के किनारे पर था, सहसा मिनी अपने अटकन-बटकन को छोड़कर कमरे की खिड़की के पास दौड़ गई, और जोर-जोर से चिल्लाने लगी, काबुलवाला, ओ काबुलवाला।

मैले-कुचाले ढीले कपड़े पहने, सिर पर कुल्ला रखे, उस पर साफा बाँधे कन्धे पर सूखे फलों की मैली झोली लटकाए, हाथ में चमन के अंगूरों की कुछ पिटारियाँ लिए, एक लम्बा-तगड़ा-सा काबुली मन्द चाल से सड़क पर जा रहा था। उसे देखकर मेरी छोटी बेटी के हृदय में कैसे भाव उदय हुए यह बताना असम्भव है। उसने जोरों से पुकारना शुरू किया। मैंने सोचा, अभी झोली कन्धे पर डाले, सर पर एक मुसीबत आ खड़ी होगी और मेरा सत्तरहवाँ अध्याय आज अधूरा रह जाएगा।

किन्तु मिनी के चिल्लाने पर ज्यों ही काबुली ने हँसते हुए उसकी ओर मुँह फेरा और घर की ओर बढ़ने लगा त्यों ही मिनी भय खाकर भीतर भाग गई। फिर उसका पता ही नहीं लगा कि कहाँ छिप गई। उसके छोटे-से मन में वह अन्धविश्वास बैठ गया था कि उस मैली-कुचाली झोली के अन्दर ढूँढ़ने पर उस जैसी और भी जीती-जागती बच्चियाँ निकल सकती हैं।

इधर काबुली ने आकर मुस्कराते हुए मुझे हाथ उठाकर अभिवादन किया और खड़ा हो गया। मैंने सोचा, वास्तव में प्रतापसिंह और कंचनमाला की दशा अत्यन्त संकटापन्न है, फिर भी घर में बुलाकर इससे कुछ न खरीदना अच्छा न होगा।

कुछ सौदा खरीदा गया। उसके बाद मैं उससे इधर-उधर की बातें करने लगा। खुद रहमत, रूस, अंग्रेज, सीमान्त रक्षा के बारे में गप-शप होने लगी।

अन्त में उठकर जाते हुए उसने अपनी मिली-जुली भाषा में पूछा, बाबूजी, आपकी बच्ची कहाँ गई?

मैंने मिनी के मन से व्यर्थ का भय दूर करने के अभिप्राय से उसे भीतर से बुलवा लिया। वह मुझसे बिल्कुल लगकर काबुली के मुख और झोली की ओर सन्देहात्मक दृष्टि डालती हुई खड़ी रही। काबुली ने झोली में से किसमिस और खुबानी निकालकर देना चाहा, पर उसने नहीं लिया और दुगुने सन्देह के साथ मेरे घुटनों से लिपट गई। उसका पहला परिचय इस प्रकार हुआ।

इस घटना के कुछ दिन बाद एक दिन सवेरे मैं किसी आवश्यक कार्यवश बाहर जा रहा था। देखूँ तो मेरी बिटिया दरवाजे के पास बेंच पर बैठी हुई काबुली से हँस-हँसकर बातें कर रही है और काबुली उसके पैरों के समीप बैठा-बैठा मुस्कराता हुआ, उन्हें ध्यान से सुन रहा है और बीच-बीच में अपनी राय मिली-जुली भाषा में व्यक्त करता जाता है। मिनी को अपने पाँच वर्ष के जीवन में, बाबूजी के सिवा, ऐसा धैर्यवाला श्रोता शायद ही कभी मिला हो। देखा तो, उसका फिराक का अग्रभाग बादाम-किसमिस से भरा हुआ है। मैंने काबुली से कहा, इसे यह सब क्यों दे दिया? अब कभी मत देना। कहकर कुर्ते की जेब से एक अठन्नी निकालकर उसे दी। उसने बिना किसी हिचक के अठन्नी लेकर अपनी झोली में रख ली।

कुछ देर बाद, घर लौटकर देखता हूं तो उस अठन्नी ने बड़ा भारी उपद्रव खड़ा कर दिया है।

मिनी की माँ एक सफेद चमकीला गोलाकार पदार्थ हाथ में लिए डाँट-डपटकर मिनी से पूछ रही थी, तूने यह अठन्नी पाई कहाँ से, बता?

मिनी ने कहा, काबुल वाले ने दी है।

काबुल वाले से तूने अठन्नी ली कैसे, बता?

मिनी ने रोने का उपक्रम करते हुए कहा, मैंने माँगी नहीं थी, उसने आप ही दी है।

मैंने जाकर मिनी की उस अकस्मात मुसीबत से रक्षा की, और उसे बाहर ले आया।

मालूम हुआ कि काबुली के साथ मिनी की यह दूसरी ही भेंट थी, सो बात नहीं। इस दौरान में वह रोज आता रहा है और पिस्ता-बादाम की रिश्वत दे-देकर मिनी के छोटे से हृदय पर बहुत अधिकार कर लिया है।

देखा कि इस नई मित्रता में बँधी हुई बातें और हँसी ही प्रचलित है। जैसे मेरी बिटिया, रहमत को देखते ही, हँसती हुई पूछती, काबुल वाला, ओ काबुल वाला, तुम्हारी झोली के भीतर क्या है? काबुली, जिसका नाम रहमत था, एक अनावश्यक चन्द्र-बिन्दु जोड़कर मुस्कराता हुआ उत्तर देता, हाँ बिटिया उसके परिहास का रहस्य क्या है, यह तो नहीं कहा जा सकता, फिर भी इन नए मित्रों को इससे तनिक विशेष खेल-सा प्रतीत होता है और जाड़े के प्रभात में एक सयाने और एक बच्ची की सरल हँसी सुनकर मुझे भी बड़ा अच्छा लगता।

उन दोनों मित्रों में और भी एक-आध बात प्रचलित थी। रहमत मिनी से कहता, तुम ससुराल कभी नहीं जाना, अच्छा?

हमारे देश की लड़कियाँ जन्म से ही ससुराल शब्द से परिचित रहती हैं, किन्तु हम लोग तनिक कुछ नई रोशनी के होने के कारण तनिक-सी बच्ची को ससुराल के विषय में विशेष ज्ञानी नहीं बना सके थे, अतः रहमत का अनुरोध वह स्पष्ट रूप से नहीं समझ पाती थी, इस पर भी किसी बात का उत्तर दिए बिना चुप रहना उसके स्वभाव के बिल्कुल ही विरूद्ध था। उलटे, वह रहमत से ही पूछती, तुम ससुराल जाओगे?

रहमत काल्पनिक श्वसुर के लिए अपना जबर्दस्त घूँसा तानकर कहता, हम ससुर को मारेगा।

सुनकर मिनी ससुर नामक किसी अनजाने जीव की दुरवस्था की कल्पना करके खूब हँसती।

देखते-देखते जाड़े की सुहावनी ऋतु आ गई। पूर्व युग में इसी समय राजा लोग दिग्विजय के लिए कूच करते थे। मैं कलकत्ता छोड़कर कभी कहीं नहीं गया, शायद इसीलिए मेरा मन ब्रह्माण्ड में घूमा करता है। यानी, मैं अपने घर में ही चिर प्रवासी हूँ, बाहरी ब्रह्माण्ड के लिए मेरा मन सर्वदा आतुर रहता है। किसी विदेश का नाम आगे आते ही मेरा मन वहीं की उड़ान लगाने लगता है। इसी प्रकार किसी विदेशी को देखते ही तत्काल मेरा मन सरिता-पर्वत-बीहड़ वन के बीच में एक कुटीर का दृश्य देखने लगता है और एक उल्लासपूर्ण स्वतंत्र जीवन-यात्रा की बात कल्पना में जाग उठती है।

इधर देखा तो मैं ऐसी प्रकृति का प्राणी हूँ, जिसका अपना घर छोड़कर बाहर निकलने में सिर कटता है। यही कारण है कि सवेरे के समय अपने छोटे-से कमरे में मेज के सामने बैठकर उस काबुली से गप-शप लड़ाकर बहुत कुछ भ्रमण का काम निकाल लिया करता हूँ। मेरे सामने काबुल का पूरा चित्र खिंच जाता। दोनों ओर ऊबड़खाबड़, लाल-लाल ऊँचे दुर्गम पर्वत हैं और रेगिस्तानी मार्ग, उन पर लदे हुए ऊँटों की कतार जा रही है। ऊँचे-ऊँचे साफे बाँधे हुए सौदागर और यात्री कुछ ऊँट की सवारी पर हैं तो कुछ पैदल ही जा रहे हैं। किन्हीं के हाथों में बरछा है, तो कोई बाबा आदम के जमाने की पुरानी बन्दूक थामे हुए है। बादलों की भयानक गर्जन के स्वर में काबुली लोग अपने मिली-जुली भाषा में अपने देश की बातें कर रहे हैं।

मिनी की माँ बड़ी वहमी तबीयत की है। राह में किसी प्रकार का शोर-गुल हुआ नहीं कि उसने समझ लिया कि संसार भर के सारे मस्त शराबी हमारे ही घर की ओर दौड़े आ रहे हैं। उसके विचारों में यह दुनिया इस छोर से उस छोर तक चोर-डकैत, मस्त, शराबी, साँप, बाघ, रोगों, मलेरिया, तिलचट्टे और अंग्रेजों से भरी पड़ी है। इतने दिन हुए इस दुनिया में रहते हुए भी उसके मन का यह रोग दूर नहीं हुआ।

रहमत काबुली की ओर से भी वह पूरी तरह निश्चिंत नहीं थी। उस पर विशेष नजर रखने के लिए मुझसे बार-बार अनुरोध करती रहती। जब मैं उसके शक को परिहास के आवरण से ढकना चाहता तो मुझसे एक साथ कई प्रश्न पूछ बैठती, क्या कभी किसी का लड़का नहीं चुराया गया? क्या काबुल में गुलाम नहीं बिकते? क्या एक लम्बे-तगड़े काबुली के लिए एक छोटे बच्चे का उठा ले जाना असम्भव है? इत्यादि।

मुझे मानना पड़ता कि यह बात नितान्त असम्भव हो सो बात नहीं पर भरोसे के काबिल नहीं। भरोसा करने की शक्ति सबमें समान नहीं होती, अतः मिनी की माँ के मन में भय ही रह गया लेकिन केवल इसीलिए बिना किसी दोष के रहमत को अपने घर में आने से मना न कर सका।

हर वर्ष रहमत माघ मास में लगभग अपने देश लौट जाता है। इस समय वह अपने व्यापारियों से रूपया-पैसा वसूल करने में तल्लीन रहता है। उसे घर-घर, दुकान-दुकान घूमना पड़ता है, फिर भी मिनी से उसकी भेंट एक बार अवश्य हो जाती है। देखने में तो ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों के मध्य किसी षड्यंत्र का श्रीगणेश हो रहा है। जिस दिन वह सवेरे नहीं आ पाता, उस दिन देखूँ तो वह संध्या को हाजिर है। अँधेरे में घर के कोने में उस ढीले-ढाले जामा-पाजामा पहने, झोली वाले लम्बे-तगड़े आदमी को देखकर सचमुच ही मन में अचानक भय-सा पैदा हो जाता है।

लेकिन, जब देखता हूं कि मिनी ओ काबुल वाला पुकारती हुई हँसती-हँसती दौड़ी आती है और दो भिन्न-भिन्न आयु के असम मित्रों में वही पुराना हास-परिहास चलने लगता है, तब मेरा सारा हृदय खुशी से नाच उठता है।

एक दिन सवेरे मैं अपने छोटे कमरे में बैठा हुआ नई पुस्तक के प्रूफ देख रहा था। जाड़ा, विदा होने से पूर्व, आज दो-तीन दिन खूब जोरों से अपना प्रकोप दिखा रहा है। जिधर देखो, उधर बस जाड़े की ही चर्चा है। ऐसे जाड़े-पाले में खिड़की में से सवेरे की धूप मेज के नीचे मेरे पैरों पर आ पड़ी। उसकी गर्मी मुझे अच्छी प्रतीत होने लगी। लगभग आठ बजे का समय होगा। सिर से मफलर लपेटे ऊषाचरण सवेरे की सैर करके घर की ओर लौट रहे थे। ठीक इस समय राह में एक बड़े जोर का शोर सुनाई दिया।

देखूँ तो अपने उस रहमत को दो सिपाही बाँधे लिए जा रहे हैं। उनके पीछे बहुत से तमाशाई बच्चों का झुंड चला आ रहा है। रहमत के ढीले-ढाले कुर्ते पर खून के दाग हैं और एक सिपाही के हाथ में खून से लथपथ छुरा। मैंने द्वार से बाहर निकलकर सिपाही को रोक लिया, पूछा, क्या बात है?

कुछ सिपाही से और कुछ रहमत से सुना कि हमारे एक पड़ोसी ने रहमत से रामपुरी चादर खरीदी थी। उसके कुछ रूपए उसकी ओर बाकी थे, जिन्हें देने से उसने साफ इन्कार कर दिया। बस इसी पर दोनों में बात बढ़गई और रहमत ने छुरा निकालकर घोंप दिया।

रहमत उस झूठे बेईमान आदमी के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के अपशब्द सुना रहा था। इतने में काबुल वाला! ओ काबुल वाला! पुकारती हुई मिनी घर से निकल आई।

रहमत का चेहरा क्षण-भर में कौतुक हास्य से चमक उठा। उसके कन्धे पर आज झोली नहीं थी। अतः झोली के बारे में दोनों मित्रों की अभ्यस्त आलोचना न चल सकी। मिनी ने आने के साथ ही उससे पूछा, तुम ससुराल जाओगे।

रहमत ने प्रफुल्लित मन से कहा, हां, वहीं तो जा रहा हूं।

रहमत ताड़ गया कि उसका यह जवाब मिनी के चेहरे पर हँसी न ला सकेगा और तब उसने हाथ दिखाकर कहा, ससुर को मारता, पर क्या करूँ, हाथ बँधे हुए हैं।

छुरा चलाने के जुर्म में रहमत को कई वर्ष का कारावास मिला।

रहमत का ध्यान धीरे-धीरे मन से बिल्कुल उतर गया। हम लोग अब अपने घर में बैठकर सदा के अभ्यस्त होने के कारण, नित्य के काम-धंधों में उलझे हुए दिन बिता रहे थे। तभी एक स्वाधीन पर्वतों पर घूमने वाला इन्सान कारागार की प्राचीरों के अन्दर कैसे वर्ष पर वर्ष काट रहा होगा, यह बात हमारे मन में कभी उठी ही नहीं।

और चंचल मिनी का आचरण तो और भी लज्जाप्रद था। यह बात उसके पिता को भी माननी पड़ेगी। उसने सहज ही अपने पुराने मित्र को भूलकर पहले तो नबी सईस के साथ मित्रता जोड़ी, फिर क्रमशः जैसे-जैसे उसकी वयोवृध्दि

होने लगी वैसे-वैसे सखा के बदले एक के बाद एक उसकी सखियाँ जुटने लगीं और तो क्या, अब वह अपने बाबूजी के लिखने के कमरे में भी दिखाई नहीं देती। मेरा तो एक तरह से उसके साथ नाता ही टूट गया है।

कितने ही वर्ष बीत गये। वर्षों बाद आज फिर शरद ऋतु आई है। मिनी की सगाई की बात पक्की हो गई। पूजा की छुट्टियों में उसका विवाह हो जाएगा। कैलाशवासिनी के साथ-साथ अबकी बार हमारे घर की आनन्दमयी मिनी भी माँ-बाप के घर में अँधेरा करके ससुराल चली जाएगी।

सवेरे दिवाकर बड़ी सज-धज के साथ निकले। वर्षों के बाद शरद ऋतु की यह नई धवल धूप सोने में सुहागे का काम दे रही है। कलकत्ता की सँकरी गलियों से परस्पर सटे हुए पुराने ईंटझर गन्दे घरों के ऊपर भी इस धूप की आभा ने एक प्रकार का अनोखा सौन्दर्य बिखेर दिया है।

हमारे घर पर दिवाकर के आगमन से पूर्व ही शहनाई बज रही है। मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि जैसे यह मेरे हृदय की धड़कनों में से रो-रोकर बज रही हो। उसकी करूण भैरवी रागिनी मानो मेरी विच्छेद पीड़ा को जाड़े की धूप के साथ सारे ब्रह्माण्ड में फैला रही है। मेरी मिनी का आज विवाह है।

सवेरे से घर बवंडर बना हुआ है। हर समय आने-जाने वालों का ताँता बँधा हुआ है। आँगन में बाँसों का मंडप बनाया जा रहा है। हरेक कमरे और बरामदे में झाड़फानूस लटकाए जा रहे हैं, और उनकी टक-टक की आवाज मेरे कमरे में आ रही है। चलो रे, जल्दी करो, इधर आओ की तो कोई गिनती ही नहीं है।

मैं अपने लिखने-पढ़ने के कमरे में बैठा हुआ हिसाब लिख रहा था। इतने में रहमत आया और अभिवादन करके खड़ा हो गया।

पहले तो मैं उसे पहचान न सका। उसके पास न तो झोली थी और न पहले जैसे लम्बे-लम्बे बाल और न चेहरे पर पहले जैसी दिव्य ज्योति ही थी। अन्त में उसकी मुस्कान देखकर पहचान सका कि वह रहमत है।

मैंने पूछा, क्यों रहमत, कब आए?

उसने कहा, कल शाम को जेल से छूटा हूँ।

सुनते ही उसके शब्द मेरे कानों में खट से बज उठे। किसी खूनी को मैंने कभी आँखों से नहीं देखा था, उसे देखकर मेरा सारा मन एकाएक सिकुड़-सा गया। मेरी यही इच्छा होने लगी कि आज के इस शुभ दिन में वह इंसान यहाँ से टल जाए तो अच्छा हो।

मैंने उससे कहा, आज हमारे घर में कुछ आवश्यक काम है, सो आज मैं उसमें लगा हुआ हूं। आज तुम जाओ, फिर आना।

मेरी बात सुनकर वह उसी क्षण जाने को तैयार हो गया। पर द्वार के पास आकर कुछ इधर-उधर देखकर बोला, क्या, बच्ची को तनिक नहीं देख सकता?शायद उसे यही विश्वास था कि मिनी अब तक वैसी ही बच्ची बनी है। उसने सोचा हो कि मिनी अब भी पहले की तरह काबुल वाला, ओ काबुल वाला पुकारती हुई दौड़ी चली आएगी। उन दोनों के पहले हास-परिहास में किसी प्रकार की रूकावट न होगी? यहाँ तक कि पहले की मित्रता की याद करके वह एक पेटी अंगूर और एक कागज के दोने में थोड़ी-सी किसमिस और बादाम, शायद अपने देश के किसी आदमी से माँग-ताँगकर लेता आया था। उसकी पहले की मैली-कुचैली झोली आज उसके पास न थी।

मैंने कहा, आज घर में बहुत काम है। सो किसी से भेंट न हो सकेगी।

मेरा उत्तर सुनकर वह कुछ उदास-सा हो गया। उसी मुद्रा में उसने एक बार मेरे मुख की ओर स्थिर दृष्टि से देखा। फिर अभिवादन करके दरवाजे के बाहर निकल गया।

मेरे हृदय में जाने कैसी एक वेदना-सी उठी। मैं सोच ही रहा था कि उसे बुलाऊँ, इतने में देखा तो वह स्वयं ही आ रहा है।

वह पास आकर बोला, ये अंगूर और कुछ किसमिस, बादाम बच्ची के लिए लाया था, उसको दे दीजिएगा।

मैंने उसके हाथ से सामान लेकर पैसे देने चाहे, लेकिन उसने मेरे हाथ को थामते हुए कहा, आपकी बहुत मेहरबानी है बाबू साहब, हमेशा याद रहेगी, पिसा रहने दीजिए। तनिक रूककर फिर बोला- बाबू साहब! आपकी जैसी मेरी भी देश में एक बच्ची है। मैं उसकी याद कर-कर आपकी बच्ची के लिए थोड़ी-सी मेवा हाथ में ले आया करता हूँ। मैं यह सौदा बेचने नहीं आता।

कहते हुए उसने ढीले-ढाले कुर्ते के अन्दर हाथ डालकर छाती के पास से एक मैला-कुचैला मुड़ा हुआ कागज का टुकड़ा निकाला, और बड़े जतन से उसकी चारों तहें खोलकर दोनों हाथों से उसे फैलाकर मेरी मेज पर रख दिया।

देखा कि कागज के उस टुकड़े पर एक नन्हे-से हाथ के छोटे-से पंजे की छाप है। फोटो नहीं, तेलचित्र नहीं, हाथ में-थोड़ी-सी कालिख लगाकर कागज के ऊपर उसी का निशान ले लिया गया है। अपनी बेटी के इस स्मृति-पत्र को छाती से लगाकर, रहमत हर वर्ष कलकत्ता के गली-कूचों में सौदा बेचने के लिए आता है और तब वह कालिख चित्र मानो उसकी बच्ची के हाथ का कोमल-स्पर्श, उसके बिछड़े हुए विशाल वक्षःस्थल में अमृत उड़ेलता रहता है।

देखकर मेरी आँखें भर आईं और फिर मैं इस बात को बिल्कुल ही भूल गया कि वह एक मामूली काबुली मेवा वाला है, मैं एक उच्च वंश का रईस हूँ। तब मुझे ऐसा लगने लगा कि जो वह है, वही मैं हूँ। वह भी एक बाप है और मैं भी। उसकी पर्वतवासिनी छोटी बच्ची की निशानी मेरी ही मिनी की याद दिलाती है। मैंने तत्काल ही मिनी को बाहर बुलवाया हालांकि इस पर अन्दर घर में आपत्ति की गई, पर मैंने उस पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। विवाह के वस्त्रों और अलंकारों में लिपटी हुई बेचारी मिनी मारे लज्जा के सिकुड़ी हुई-सी मेरे पास आकर खड़ी हो गई।

उस अवस्था में देखकर रहमत काबुल पहले तो सकपका गया। उससे पहले जैसी बातचीत न करते बना। बाद में हँसते हुए बोला, लल्ली! सास के घर जा रही है क्या?

मिनी अब सास का अर्थ समझने लगी थी, अतः अब उससे पहले की तरह उत्तर देते न बना। रहमत की बात सुनकर मारे लज्जा के उसके कपोल लाल हो उठे। उसने मुँह को फेर लिया। मुझे उस दिन की याद आई, जब रहमत के साथ मिनी का प्रथम परिचय हुआ था। मन में एक पीड़ा की लहर दौड़ गई। मिनी के चले जाने के बाद, एक गहरी साँस लेकर रहमत फर्श पर बैठ गया। शायद उसकी समझ में यह बात एकाएक साफ हो गई कि उसकी बेटी भी इतने दिनों में बड़ी हो गई होगी, और उसके साथ भी उसे अब फिर से नई जान-पहचान करनी पड़ेगी। सम्भवतः वह उसे पहले जैसी नहीं पाएगा। इन आठ वर्षों में उसका क्या हुआ होगा, कौन जाने? सवेरे के समय शरद की स्निग्ध सूर्य किरणों में शहनाई बजने लगी और रहमत कलकत्ता की एक गली के भीतर बैठा हुआ अफगानिस्तान के मेरू-पर्वत का दृश्य देखने लगा।

मैंने एक नोट निकालकर उसके हाथ में दिया और कहा, रहमत, तुम देश चले जाओ, अपनी लड़की के पास। तुम दोनों के मिलन-सुख से मेरी मिनी सुख पाएगी। रहमत को रूपए देने के बाद विवाह के हिसाब में से मुझे उत्सव-समारोह के दो-एक अंग छाँटकर काट देने पड़े। जैसी मन में थी, वैसी रोशनी नहीं करा सका, अंग्रेजी बाजा भी नहीं आया, घर में औरतें बड़ी बिगड़ने लगीं, सब कुछ हुआ, फिर भी मेरा विचार है कि आज एक अपूर्व ज्योत्स्ना से हमारा शुभ समारोह उज्ज्वल हो उठा। स

रवीन्द्रनाथ की आत्मकथा में है उनकी सृजन यात्रा की चर्चा

गंगाशरण सिंह

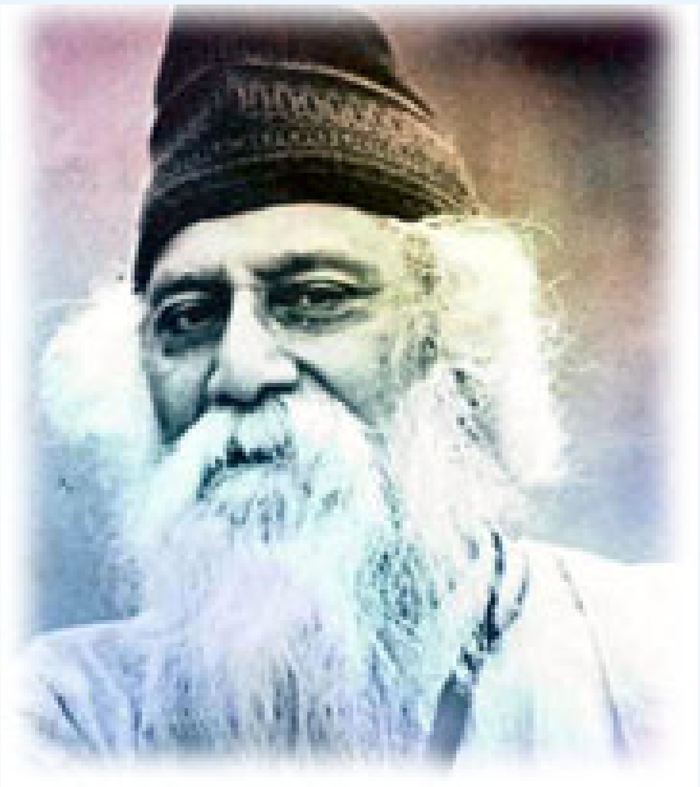

कुछ प्रतिभाएँ देश और काल की सारी सीमाओं को पार कर वैश्विक लोकप्रियता और रचनात्मकता का ऐसा प्रतिमान रचती हैं जो इतिहास बनकर रह जाता है। रवीन्द्र नाथ टैगोर का प्रादुर्भाव भारत के सांस्कृतिक और साहित्यिक परिदृश्य के लिए एक ऐसी ही ऐतिहासिक और विरल घटना थी। एक ऐसे समय, जब पूरे देश में विदेशी सत्ता से मुक्ति का संग्राम छिड़ा हुआ था, राजनैतिक क्षेत्र में गाँधी जी नेतृत्व की एक कालजयी कहानी लिख रहे थे और प्रेमचंद हिन्दी और उर्दू साहित्य जगत को समृद्ध करने के साथ ही इस नवजागरण में भी अपने उत्तरदायित्व को जिम्मेदारी से निभा रहे थे, बंगाल में रवींद्रनाथ टैगोर का प्रादुर्भाव पराधीन भारत की एक विशिष्ट ऐतिहासिक घटना थी। गीतांजलि और गोरा जैसी अमर कृतियों के रचयिता गुरूदेव टैगोर का साहित्य जगत पर अक्षुण्ण प्रभाव है। उनकी मृत्यु को लगभग अस्सी वर्ष होने को आये किन्तु उनका निरन्तर चर्चा में रहना उनकी प्रासंगिकता और महत्व को दर्शाते हैं।

रवि बाबू की अन्य बहुचर्चित रचनाओं की तुलना में उनकी आत्मकथा की चर्चा प्रायः कम ही सुनाई देती है, जबकि यह आत्मकथा उतनी ही महत्वपूर्ण, जितना महात्मा गाँधी की आत्मकथा। दरअसल ये आत्मकथाएँ नहीं बल्कि उन्नीसवीं सदी के एक विशेष कालखण्ड का जीवन्त इतिहास हैं। गुरूदेव की आत्मकथा 'सस्ता साहित्य मंडल' द्वारा प्रकाशित 'रवींद्रनाथ टैगोर रचनावली' के बयालीसवें खण्ड के रूप में 'मेरी आत्मकथा' नाम से उपलब्ध है। इस आत्मकथा में उन्होंने घर परिवार की संक्षिप्त चर्चा के अलावा ज्यादातर अपनी रचनात्मकता और काव्य यात्रा की ही विस्तृत चर्चा की है।

रवींद्रनाथ टैगोर की आत्मकथा का आरम्भ उनके बचपन के दिनों से होता है जहाँ वो बताते हैं कि 'हम तीन बालकों का लालन पालन एक साथ ही होता था। मेरे दो साथी मुझसे दो वर्ष बड़े थे। पढ़ने के लिए एक शिक्षक नियत किया गया था। इन दोनों के साथ ही मेरी शिक्षा का भी प्रारम्भ हुआ।' (पृष्ठ 15)

पहले अध्याय के पहले पृष्ठ से ही गुरूदेव कविता की बातें करने लगते हैं। वे कहते हैं- 'आद्य कवि की यह पहली कविता 'पानी रिमझिम रिमझिम पड़ता है, झाड़ों के पत्ते हिलते हैं' मैं पढ़ा करता था।' (पृष्ठ 15)

अगले अध्याय 'बाल्यकाल' में वे उस समय की सामाजिक और पारिवारिक परिस्थितियों का वर्णन करते हुए कहते हैं-- 'हमारे बाल्यकाल के समय प्रायः बहुतेरों को शान शौकत नहीं मालूम थी। आज की अपेक्षा उस समय का रहन सहन बहुत सादा था। हमें नौकरों की सत्ता में रहना पड़ता था। अपना कष्ट बचाने के लिए उन लोगों ने हमारे नैसर्गिक स्वेच्छाचार का अधिकार अपनी मुट्ठी में ले रखा था। हमारे भोजन में पकवान प्रायः बिल्कुल नहीं होते थे। दस वर्ष की उम्र तक हमने बूट और मोजे नहीं पहने। (पृष्ठ 19)

'नौकरों का साम्राज्य' नामक अध्याय में वे अपने बचपन के दिनों में नौकरों द्वारा किये गए अत्याचार का वर्णन करते हैं-- 'जिस प्रकार हिंदुस्तान के इतिहास में गुलाम घराने का शासन सुखावह नहीं था उसी तरह मेरे आयुष्य के इतिहास में भी नौकरों के शासन का काल भी विशेष आनंद और वैभव में व्यतीत नहीं हुआ। हमारी पीठ पर पड़ते हुए धौल को हम जहाँ तक हो सकता, सहन करते और यह समझकर अपने आप समाधान भी कर लेते कि जगत का नियम ही है बड़ा आदमी दुःख दे और छोटा सहन करे। यह जानने में मुझे बहुत दिन लगे कि दुःख सहन करने वाले बड़े और दुःख देने वाले छोटे होते हैं।(पृष्ठ 29)

अगले अध्याय 'काव्य-रचना' में वे बचपन के उन दिनों की यादें साझा करते हैं जब भाई के प्रोत्साहन पर धीरे धीरे कविता लिखने की शुरूआत हुई।

'अयोग्य लोगों के द्वारा काव्य देवता की विडम्बना होते देख मुझे आज भी बहुत खेद होता है।' (पृष्ठ 38)

'विविध शिक्षक' शीर्षक अध्याय में अपने तमाम शिक्षकों की चर्चा करते हुए अंग्रेजी पाठ के दौरान अपनी स्थिति को कुछ यूँ बयान करते हैं-- 'अंग्रेजी पाठ आरम्भ होते ही हम ऊँघने लगते थे। आँखों में पानी डालना और बरामदे के नीचे दौड़ लगाकर भी निद्रा का नशा क्षण भर को ही कम होता था।' (पृष्ठ 44)

एक बार कलकत्ते में ज्वर की बीमारी फैली तो उन्हें पहली बार घर छोड़कर नदी तीर के किसी उद्यान गृह में रहने जाना पड़ा। 'मेरा प्रथम बहिर्गमन' नामक अध्याय में गंगा किनारे का मनोरम वर्णन करते हुए गुरूदेव लिखते हैं-- 'बरामदे में इन वृक्षों की छाया के नीचे बैठकर उनकी डालियों के बीच से गंगा नदी को देखता हुआ मैं दिन निकाल देता था। गंगा में रोज ज्वार भाटा आया करता।' नौकाओं, वृक्षों और नदी तट की अन्य घटनाओं का काव्यात्मक वर्णन पढ़ते हुए ऐसा आभास होता है जैसे किसी

कविता का अंश पढ़रहे हों।'

श्रीकंठ बाबू का जिक्र करते हुए रवि बाबू कहते हैं कि उनके समान दूसरा श्रोता मुझे कभी नहीं मिलेगा। उनके आनंदी और उत्साही स्वभाव का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं-- 'किसी का दुःख देखने अथवा सुनने से उन्हें बहुत दुःख होता था। इसलिए उन्हें तकलीफ पहुँचाने के लिए जब कोई बालक विद्यासागर के वनवास का कोई अंश उनके सामने पढ़ने लगता तो श्रीकंठ बाबू उसे एकदम रोक देते थे।

अगले अध्यायों में वे अपनी शिक्षा, प्रोफेसर, पिता, हिमालय यात्रा, घर परिवार की परिस्थितियों, अपने साहित्यिक साथियों की स्मृतियों, प्रारंभिक काव्य रचनाओं, निबंधों, बड़े भाई ज्योतिरिन्द्र द्वारा निकाले गए मासिक पत्र 'भारती' और अहमदाबाद प्रवास आदि का विस्तृत वर्णन करते हुए उस कालखण्ड की एक व्यवस्थित तस्वीर पाठकों तक पहुँचाते हैं।

अहमदाबाद में छह महीने रहकर गुरूदेव विलायत चले गए। वहाँ से वे अपने परिजनों और 'भारती' के लिए प्रवास वर्णन भेजा करते थे। आत्मकथा के इस अंश में वे स्वीकार करते हैं कि इन पत्रों में यौवनोचित दर्पोक्तियों के दृश्य होते थे। ये न लिखे गए होते तो अच्छा होता। पीछे रह गए स्वदेश की यादों को बार बार जीते हुए वे अपनी भाभी के बारे में बताते हैं कि भाभी सदा मेरे वृथाभिमान को रोकने का प्रयास करती थीं।' (पृष्ठ 139)

18 वर्ष की आयु में विलायत से वापसी यात्रा के दौरान वे 'भग्न हृदय' नामक काव्य लिखना आरम्भ कर चुके थे। वे इस समय भी सामाजिक और धार्मिक अंतर्द्वंदों और रूढ़ियों पर भी अपने विचार रखते हैं। (पृष्ठ 161)

यूरोपियन संगीत के प्रति अपने आकर्षण का बयान करते हुए वे लिखते हैं-- 'यद्यपि मैं यूरोपियन संगीत के हृदय में प्रवेश नहीं कर सका तो भी उसने एक बात में मुझे मोहित कर लिया है। इस संगीत में मुझे अद्भुत रस दिखाई दिया। (पृष्ठ 164)

विदेश से लौटने के बाद देशी विदेशी गायन के जो बीज उनके अवचेतन में जमे थे, उनका रूपांतरण 'वाल्मीकि प्रतिज्ञा' नामक नाटिका के रूप में होता है। उन दिनों का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं-- 'चारों ओर से नए नए मार्ग सूझने लगे थे। हमें कोई भी बात असम्भव नहीं दिखाई पड़ती थी। लिखते, गाते, अभिनय करते, उत्साह में भरे हुए उम्र के बीसवें वर्ष में प्रवेश किया।' (पृष्ठ 170)

रवि बाबू की संगीत में बहुत रूचि थी और इस विषय पर उनका गहरा अधिकार था। एक निबन्ध में वे राग रागिनियों, स्वर और गायन पर विस्तार से चर्चा करते हुए अपने अनुभवों द्वारा सिद्ध करते हैं कि संगीत के विषय में उनका ज्ञान किसी विशेषज्ञ से कम नहीं था (पृष्ठ 176- 178)

उनकी कविता संध्या संगीत जिन रसिक पाठकों द्वारा सराही गयी उनमें बंकिम बाबू भी थे। इसी रचना के कारण उन्हें बाबू प्रियनाथ सेन जैसे उत्साही मित्र मिले जो प्रायः सम्पूर्ण भारतीय भाषाओं और कई विदेशी भाषाओं के साहित्य के जानकार एवं मर्मज्ञ भी थे। उनकी अधिकारयुक्त भाषा और साहित्यिक समालोचना से टैगोर को बहुत सहायता मिली। (पृष्ठ 184)

'प्रभात-संगीत' शीर्षक आलेख में हम देखते हैं कि मानव के भावजगत पर प्रकृति के सतत परिवर्तनशील सौंदर्य का कितना सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस अध्याय में दिन-रात और सुबह-शाम के प्राकृतिक सौंदर्य के साथ रविबाबू के काव्यात्मक गद्य और आध्यात्मिक स्वरों का जादू चारों तरफ बिखरा पड़ा है-- 'एक मित्र दूसरे मित्र के सुख दुःख का हिस्सेदार बनता है। माता संतान को प्यार करती है, उसे कंधे पर बिठलाकर खिलाती है। एक गाय दूसरी गाय के पास खड़ी हो जाती और चाटती है। इन सब को देखकर इनके पीछे का अनंतत्व मेरी दृष्टि के आगे खड़ा हो जाता है। मेरे हृदय ने एकाएक अपने द्वार कैसे खोल दिये और अनंत सृष्टि को हाथ में हाथ मिलाए हुए किस तरह अंतर में प्रवेश होने दिया, यह मेरी समझ में नहीं आया।' (पृष्ठ 188)

इसी अध्याय में किसी अन्य जगह पर प्रकृति से अपने अंतरसंबंध का चित्रण रवींद्रनाथ टैगोर कुछ यूँ करते हैं-- 'मैं अपनी बहुत छोटी अवस्था में बड़ी सादगी प्रेम से सृष्टि से बात किया करता था। उससे मैंने मैत्री कर लिया था और उस मैत्री का आनंद बहुत बार अनुभव किया मैंने। आकाश में नीले और काले रंग के अभ्र (बादल) देखते ही मेरा मन किस प्रकार मदहोश हो जाता था, यह मुझे आज भी अच्छी तरह याद है।' (पृष्ठ 193)

बंग साहित्य परिषद के सभापति डॉ राजेन्द्र नाथ मित्र और कालजयी रचनाकार बंकिमचंद्र पर आधारित आलेख इन दोनों साहित्यिक व्यक्तित्वों की तमाम विशेषताओं को उजागर करते हैं।

आत्मकथा के अन्तिम अंश 'कड़ी ओ कोमल' में रवींद्रनाथ टैगोर अध्यात्म और रहस्य के उसी छोर पर हमें ले जाते हैं जो उनकी शाश्वत पहचान बन चुका है। गुरूदेव कहते हैं-- 'कड़ी ओ कोमल एक सांध्यगीत है जो मानव देह रूपी गृह के आगे से जाने वाले रास्ते पर से गाया जाने वाला गीत है।

जीवन के अन्तिम रहस्यमय साध्य तक पहुँचने के मार्ग में अनंत अड़चनें, अनेक शत्रु और विषमताएँ हैं। इन सबके बीच से मेरा पथ-प्रदर्शक बड़े उत्साह और कौशल से मेरे लक्ष्य की ओर मुझे ले जा रहा है। इसलिए अंतरात्मा के देवालय के द्वार तक अपने पाठकों को पहुँचाकर अब मैं उनसे विदा लेता हूँ।'

(पृष्ठ 227-231)

गुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर की गीतांजलि एक निर्गुणवादी गीतिकाव्य

रमेश सोबती

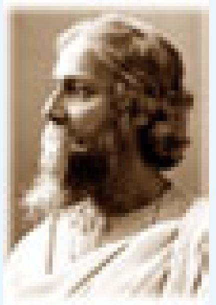

बंगाल में ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन, नई शिक्षा, पश्चिम के वैज्ञानिक आविष्कार तथा ईसाई मिशनरियों के प्रचार के कारण बंगाल और फिर शेष भारत द्वन्द्वग्रस्त हुआ। स्वामी विवेकानंद, राजा राममोहन राय और ईसाई मिशनरियाँ- इन तीनों की विचारधारा के कारण दर्शन धर्म, उपासना और जीवन दृष्टि में द्वन्द्व पैदा हुआ तथा इसमें तब्दीली की स्थिति पनपने लगी। उपनिषद, इस्लाम का तौहीद दर्शन तथा ईसाई चिन्तन तीनों ने रविन्द्रनाथ के पिता पर गहरा प्रभाव पड़ा तथा वे ब्रह्म समाजी हो गये। इसी ब्रह्म समाजी परिवार में जन्म लेकर श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने गहन चिंतन-मनन से भारत के श्रेष्ठ सांस्कृतिक तत्वों को अपना कर नए साहित्य एवं सांस्कृतिक कला की साधना आरंभ की। रवीन्द्रनाथ ठाकुर दो बार पंजाब आए। प्रथम बार जब वे बहुत छोटे थे अपने पिताश्री के साथ लाहौर में करीबी रिश्तेदार की शादी में शामिल होने के लिए तथा दूसरी बार वे अकेले अमृतसर हरि मंदिर साहब माथा टेकने के लिए। कोलकाता से आते समय अपने साथ पटना साहब गुरुद्वारे से किसी विद्वान ज्ञानी जी को भी लेते आए जो आदिग्रंथ के श्रेष्ठ ज्ञाता थे। अमृतसर वे दो तीन दिन रहे तथा वहां परिक्रमा में बैठ कर कबीर की वाणी का गायन श्रवण करते रहे तथा ज्ञानी जी से उसके अर्थ समझते रहे। अमृतसर से लौटते समय आदि ग्रंथ की एक प्रति अपने साथ ले गए। वहाँ कोलकाता में इस ग्रंथ का मनोयोग से अध्ययन किया तथा अपनी गहरी अनुभूति, मानवीय संवेदना और सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यंजना अपने काव्य, कला, उपन्यासों, कहानियों एवं नाटकों में की। राममोहन राय की पश्चिमोन्मुख धर्म एवं समाज की दृष्टि रवि बाबू में प्रगतिशील भारतीय जीवन मूल्यों पर आधारित हो गई। रूढ़ियों से मुक्त इस भारतीय चेतना ने नए काव्य की रचना की, उनके द्वारा रचित निर्गुणवादी गीति काव्य गीतांजलि विश्वस्तरीय सम्मान से प्रख्यात हुई। यदि पराधीन भारत के विवेकानंद ने अमेरिका तथा इंग्लैण्ड में नववेदान्त के माध्यम से भारतीय दर्शन एवं राष्ट्रीय गौरव को प्रतिष्ठित किया तो उनके बाद टैगोर की गीतांजलि नोबेल पुरस्कार से समादृत हुई। उनकी यह कृति विश्व की अनेक भाषाओं में अनुदित हुई। जैसे न्यायालय में गीता या बाइबिल की शपथ खाई जाती है उसी प्रकार साहित्य तथा संस्कृति के जहाँ में टैगोर की शपथ खाई जा सकती है।

यह नितान्त सत्य है कि जिस प्रकार बंगाल में रवीन्द्रनाथ ने अपनी निराकार ब्रह्म चेतना, मानवीय संवेदना तथा प्रेमानुभूति को अपनी गीतांजलि में व्यंजित किया है, वैसा हिन्दी साहित्य में आर्यसमाजी कवि नहीं कर सका क्योंकि इस कृति के गीत दिव्य भावनाओं से भरे हुए हैं और इनमें इतनी सादगी है कि वे पाठक के मन को अनायास छू लेते हैं। रवीन्द्र की कविता में अलौकिक प्रकाश की अद्भुत छटा है। जो मन के अन्धेरे कोने को आशा तथा उल्लास से भर देती है। उनके अनुवादित एक गीत की बानगी देखें-

"हे ईश्वर अपने गीतों के पंखों से ही मैं तेरे पावों का
स्पर्श कर पाता हूँ। प्रभु! ऐसा वरदान दे कि एक
ही अभिनंदन में मेरी सारी देह तेरे पावों का
स्पर्श कर ले! मान सरोवर की तरफ जाने वाले
हस जिस प्रकार दिन-रात बिना रुके एक ही
उड़ान में उड़ते जाते हैं, उसी प्रकार महामृत्यु
के पथ पर मेरे श्वास एक ही प्रणाम से उड़ चलें"

यहाँ महाकवि ने महाकाल के पथ को जीवन के पथ से भी अधिक सुन्दर और कोमल बना लिया है। हरिऔध के 'प्रिय प्रवास' रचना पर नानक पंथ के साथ आर्य समाज के प्रभाव को देखा जा सकता है। मैथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत' कृति में सगुण-निर्गुण द्वन्द्व की झलक दे दी है। छायावादी रहस्य चेतना आर्यसमाज की अवधारणा से संबद्ध नहीं है। इसमें अद्वैत चिंतन की सूक्ष्म कला चेतना है तथा रवि बाबू के काव्य का प्रभाव है। सत्यकाम विद्यालंकार लिखते हैं "मैंने पुस्तक में रवीन्द्र की मौलिक 'गीतांजलि' के गीतों का समावेश करने के साथ-साथ कुछ उन गीतों का भी समावेश कर लिया है जिनका चुनाव रवीन्द्र ने अंग्रेजी की गीतांजलि के लिए अपने अन्य दो गीत संकलनों 'खोया' तथा 'नैवेद्य' में स्वयं किया था। यहाँ तक मुझे ज्ञात है रवीन्द्र की मूल कृति का हिन्दी रूपान्तर अभी तक नहीं हुआ है।'

यहाँ में स्पष्ट कर देना समीचीन समझता हूँ कि अनुवाद में वह प्रवाह, माधुर्य और सरसता कभी नहीं आ सकती जो मौलिक रचना में होती है। मूल गीत छन्दोबद्ध हैं, उनमें संगीत है, स्वर प्रवाह है और शब्दों का मधुर विन्यास है- बानगी देखें-

ओ आमार देशेर माटी, /तोमार परे टेकाई माथा
तोयते विश्व मयीर तोमते / विश्व मायरे आँचल पाता

उन्नीसवीं शताब्दी तक कबीर को आर्थिक महत्त्व नहीं दिया गया था, न आचार्य शुक्ल ने उन्हें कवि माना और न ही समवर्ती अन्य समीक्षकों ने/ कबीर को प्रथम महत्व दिया गुरुदेव ठाकुर ने। वह भी उनकी रहस्य चेतना को। उन्होंने कबीर की कई साखियों के काव्य-अनुवाद किये। गीतांजलि आदि ग्रंथ से इन्सपायर होकर लिखी जो वे अमृतसर से लेकर आए थे। गीतांजलि पर कबीर का भी बहुत अधिक प्रभाव है। यहीं से रवि बाबू की निर्गुण काव्यधारा की स्थापना हुई। इससे यह स्पष्ट है कि ब्रह्मो समाजी परिवार के रवि बाबू जी ने अपनी व्यापक सृष्टि से हिन्दी के संत कवियों, मुख्यतः कबीर के भावमर्म को समझने का प्रयत्न किया, उन्होंने उसे आत्मसात भी किया।

कविवर रवीन्द्रनाथ ने आरम्भ से ही संतों की वाणी में रूचि ली थी। इसलिए उन्होंने बंगला तथा अंग्रेजी के ग्रंथो के माध्यम से कबीर का अध्ययन-मनन किया था। इसलिए यह कहा जा सकता है कि गीतांजलि पर केवल बाउल संतों के निर्गुण काव्य तथा अंग्रेजी के कवि कीट्स का प्रभाव नहीं है, कबीर की वाणी का भरपूर प्रभाव है। निराकार ब्रह्म के प्रति रहस्य भावना, प्रेमानुभूति, लोक मंगल की चेतना की अभिव्यंजना में रवि बाबू के मौलिक प्रतीकों एवं उपमानों के प्रयोग की नूतनता ने गीतांजलि को श्रेष्ठ गीतकृति बना दिया। इस कृति की सर्वथा नूतन भंगिमा ने सबको मंत्रमुग्ध कर दिया। गीतांजलि मानो भारतीय भावसाधना की रागात्मकता की आधुनिक बंगला काव्य में सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि है। इसलिए बंगला की सांस्कृतिक कला चेतना ने रवि बाबू के गीतों को लेकर रवीन्द्र संगीत की रचना कर दी। भारतीय संगीत का एक नया वर्ग सामने आ गया। यह रवीन्द्र संगीत बंगाल के सांस्कृतिक जीवन का अनिवार्य अंग बन गया। बंगाल की कला चेतना के नए स्वर धरती से आकाश तक गूंज उठे। रवि बाबू संगीत को भगवान का अनुदान मानते थे। तथा उसे विश्व के कण-कण में समाया मानते थे। उन्होंने एक बार कहा था कि विश्व मुझसे चित्रों में बात करता है और मेरी चेतना संगीत में उत्तर देती है। जीवन एक संगीत है, जीवन में संगीत बहता है, संगीत के पीछे ईश्वर चलता है, संगीत देवदूतों की भाषा है, संगीत के सौपान से ईश्वर तक पहुँचा जा सकता है और संगीत में सुकून है शान्ति है।

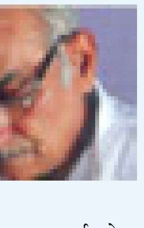

एन.आर.आई.एवेन्यू
सुखचैन रोड फगवाड़ा (पंजाब) 144401
मो.98153-85535

रवीन्द्रनाथ ठाकुर का जीवनवृत्त

जगन्नाथ कुशारी ठाकुरवंश के आदि पुरूष हैं। कुशारी लोग भट्टनारायण के पुत्र दीन कुशारी के वंशज हैं। दीन कुशारी को महाराज क्षितिपुर से 'कुश' नामक गाँव (वर्धमान जिला) दान में मिला था और वहाँ वे कुशारी के रूप में विख्यात हुए। दीन कुशारी की आठ या दस पीढ़ी बाद जगन्नाथ ने जन्म लिया। जगन्नाथ के दूसरे बेटे पुरूषोत्तम से ही ठाकुरवंश की धारा प्रवहमान हुई है। जगन्नाथ के अन्य तीन बेटों के वंश की धारा या तो लुप्त हो चुकी है या फिर लुप्तप्राय है। पुरूषो त्तम के प्रपौत्र रामानंद के दो बेटों महेश्वर और शुकदेव से ठाकुरवंश के कोलकाता में वास की शुरूआत हुई। पारिवारिक कलह के कारण महेश्वर और शुकदेव अपने गाँव बारोपाड़ा को छोड़कर कोलकाता के दक्षिण में गोविन्दपुर में आकर रहने की शुरूआत की। महेश्वर के बेटे पंचानन और उनके काका शुकदेव वहाँ आदिगंगा के किनारे अपना ठिकाना बनाया। वे जहाँ रहते थे वहाँ मछली के व्यापारी, मछुआरे और केवट लोग बड़ी संख्या में रहते थे। उनके अलावा कुछ घर वणिकों के भी थे। इन लोगों ने मिलकर नवागंतुक ब्राह्मणों के रहने की व्यवस्था की थी। वहाँ इतने सारे शूद्रों के बीच केवल पंचानन लोग ही ब्राह्मण थे। धीरे-धीरे पंचानन कुशारी का नाम और उनका सरनेम लुप्त हो गया, सब लोग उन्हें 'ठाकुर महाशय' कहकर संबोधित करने लगे। कालांतर में उनके विषय में बात करते समय पंचानन ठाकुर नाम का ही उल्लेख होता था। उन दिनों आदिगंगा के मुहाने पर विलायती जहाज आते थे; पंचानन उन जहाजों के लिए रसद इत्यादि का इंतजाम किया करते थे, धीरे-धीरे जहाज के लोग भी उन्हें 'ठाकुर' सरनेम से पहचानने लगे। उनके दस्तावेजों में 'ठाकुर' (Tagoure या Tagore) नाम ही चलने लगा। इस तरह इस वंश का सरनेम कुशारी से बदलकर ठाकुर हो गया।

पंचानन ठाकुर के जयराम और रामसंतोष नामक दो बेटे हुए और शुकदेव के कृष्णचंद्र नामक एक बेटा हुआ। इन तीनों बेटों ने ही अंग्रेज व्यापारियों से कामचलाऊ अंग्रेजी सीखी थी, लेकिन उन दिनों के चलन के मुताबिक उन्होंने फारसी भाषा को भी आत्मसात कर लिया था। सन 1707 में जब कोलकाता में जरीब का काम शुरू हुआ तो जयराम और रामसंतोष को अमीन के पद पर नियुक्त किया गया। इसी कारण खुलना जिले में उनकी पैतृक जमीन 'अमीनेर भिटा' के नाम से विख्यात है। इन तीनों भाइयों ने कंपनी के काम करके विलक्षण धन कमाया था और धनसायर में (वर्तमान में धर्मतला और गढ़का मैदान) बड़ा घर, जमीन और इन दिनों जहाँ पर फोर्ट विलियम है, वहाँ पर गंगा नदी के किनारे बड़े-बड़े बागान बनाए थे। 1756 में जयराम की मृत्यु हुई। उस समय उनकी दो पत्नियाँ, तीन बेटे (नीलमणि, दर्पनारायण और गोविंदराम), एक बेटी तथा दो पौत्र (दिवंगत बड़े बेटे आनंदीराम के बेटे) विद्यमान थे।

1757 में प्लासी का युद्ध खत्म हुआ और मीरजाफर अली बंगाल के नवाब बने। उन्होंने सिराजुद्दौला के कोलकाता को नुकसान पहुँचाने के बदले जो मुआवजा दिया, उसमें जयराम के वंशजों को धनसायर की संपत्ति के मुआवजे रूप में कुछ रूपये मिले थे। उन्हीं दिनों गढ़के मैदान को बढ़ाने के लिए कंपनी ने धनसायर के उनके घर और बागान को बहुत सारा पैसा देकर खरीद लिया था। तब 1764 में जयराम के बड़े बेटे नीलमणि कोलकाता गाँव आकर पाथुरेघाटा नामक स्थान पर रहने लगे। कोलकाता गाँव में ठाकुरवंश के वास की शुरूआत यहीं से होती है। नीलमणि ने बाद में बहुत सारी जमीनें खरीदीं और मकान बनवाए। 1765 में कंपनी को दीवानी अधिकार प्राप्त हो गए और उसने राजस्व अर्जित करने की नई व्यवस्था लागू कर दी। ऐसे में नीलमणि ठाकुर को उड़ीसा के कलेक्टर का मुंशी बना दिया गया और वे उड़ीसा चले गए। नीलमणि की अनुपस्थिति में भाई दर्पनारायण ही धन-दौलत, जमीन इत्यादि की देखभाल करते थे। लेकिन अर्थ ही अनर्थ का मूल है; पैसों और जायदाद को लेकर दोनों भाइयों में मनमुटाव होने लगा। बाद में दोनों पक्षों में समझौता हुआ और विवाद को खत्म करते हुए नीलमणि ने नकद 1 लाख रूपये लेकर पाथुरियाघाटा वाली कोठी और अन्य संपत्तियाँ छोटे भाई के लिए छोड़ दिया। नीलमणि ठाकुर को जोड़ाबागान के वैष्णवचरण शेठ से जोड़ासाँको में एक बीघा जमीन उपहारस्वरूप प्राप्त हुई थी। 1784 के जून माह से जोड़ासाँको में ठाकुर परिवार के रहने की शुरूआत हुई। तब उस गाँव का नाम जोड़ासाँको नहीं था; मेछुआबाजार गाँव के पास होने के कारण तब उस जगह को भी मेछुआबाजार ही कहा जाता था। नीलमणि के तीन बेटे और एक बेटी थी -- रामलोचन (1754), राममणि (1759), रामवल्लभ (1767), और कमलमणि (1773)। 1791 में नीलमणि की मृत्यु हो गई और परिवार के अभिभावक हुए रामलोचन। रामलोचन के कोई बेटा नहीं था, लिहाजा उन्होंने अपने भाई राममणि के बेटे द्वारकानाथ को दत्तक पुत्र के रूप में ग्रहण किया। आगे चलकर यही द्वारकानाथ ठाकुर रवीन्द्रनाथ के दादाजी बने। ये फारसी और अंग्रेजी के अच्छे जानकार थे। उन दिनों कोलकाता के व्यापारी समाज में मैकिन्टस कंपनी का खासा नाम था। द्वारकानाथ की इस कंपनी के कर्मचारियों से घनिष्ठता थी और उन्होंने उन कर्मचारियों से व्यवसाय का जो ज्ञान अर्जित किया, उसके बल पर उन्होंने युवावस्था में ही व्यापार करना प्रारंभ कर दिया था। पहले-पहल वे मैकिन्टस कंपनी के गुमाश्ते के रूप में रेशम और नील की खरीदी में उनकी मदद किया करते थे; लेकिन कुछ वर्षों बाद अपने अनुभव के बल पर वे स्वयं विदेशियों से सीधे व्यापार करने लगे। बाद में उन्होंने मैकिन्टस कंपनी का कुछ हिस्सा भी खरीद लिया। इसके साथ ही उन्होंने जमींदारी का काम भी मनोयोग से सीख लिया। सुप्रीम कोर्ट के बैरिस्टर मिस्टर फर्ग्युसन की मदद से उन्होंने कानून में भी विशेषज्ञता हासिल कर ली और उस कम उम्र में ही वे बंगाल और बिहार के कई जमींदारों के कानून-सलाहकार बन गए। अदालत के संपर्क में आकर वे कई सरकारी अधिकारियों के मित्र बने और इसका फल यह हुआ कि उनतीस वर्ष की उम्र में वे चौबीस परगना के कलेक्टर और नमक एजेन्ट के दीवान बना दिए गए। छह साल बाद वे शुल्क और आबकारी विभाग में दीवान के रूप में पदोन्नत हुए। उन्होंने शिलाईदह में नीलकोठी नामक एक विशाल भवन खरीदा। उत्तरबंगाल के अंचल में काफी जमीनें खरीदी। नाटोर के जमींदार राजा रामकृष्ण की बहुत सारी संपत्तियाँ द्वारकानाथ ठाकुर ने खरीद लीं। उन्होंने उन दिनों जनहित के तमाम कार्य किए। हिन्दू कॉलेज, मेडिकल कॉलेज, जमींदार सभा की स्थापना, इंग्लैण्ड और भारत के बीच डाक-विनिमय की व्यवस्था में तेजी लाने का काम, सतीदाह निवारण-जैसे कार्यों में उन्होंने आगे होकर सहयोग किया था। जनकल्याण के विभिन्न कार्यों में वे राजा राममोहन राय के अभिन्न सहयोग रहे। 1844 में उन्होंने अपने खर्चे से दो बंगाली विद्यार्थियों को मेडिकल की पढ़ाई के लिए विदेश भेजा तथा दो अन्य विद्यार्थियों को सरकारी मदद से भेजा। द्वारकानाथ ठाकुर दो बार विदेश गए। विदेश में वे जिस विलासिता और वैभव के साथ रहा करते थे, उसे देखकर लोग उन्हें 'प्रिंस द्वारकानाथ' बुलाया करते थे। 1 अगस्त, 1846 को इंग्लैण्ड में जब उनकी मृत्यु हुई, तब उनकी उम्र केवल 51 वर्ष थी। रवीन्द्रनाथ के पिता देवेन्द्रनाथ ठाकुर इन्हीं द्वारकानाथ के बड़े बेटे थे। देवेन्द्रनाथ ठाकुर की 15 संतानें हुईं। पहली संतान बेटी (1838) थी, जिसकी अकाल मृत्यु हुई थी। उनका नामकरण भी नहीं हुआ था, इसलिए साधारणतः देवेन्द्रनाथ की 14 संतानों का जिक्र मिलता है।

क्रम	वर्ष	ईवेंट
1	1794-1846	द्वारकानाथ ठाकुर का जीवनकाल। (रवीन्द्रनाथ के पितामह)
2	1817-1905	देवेन्द्रनाथ ठाकुर का जीवनकाल। (रवीन्द्रनाथ के पिता)
3	1823-1875	श्रीमती शारदादेवी का जीवनकाल। (रवीन्द्रनाथ की माता)
4	1840-1926	द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी के बड़े बेटे)
5	1842-1923	सत्येन्द्रनाथ ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी के दूसरे बेटे)
6	1844-1884	हेमेन्द्रनाथ ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी के तीसरे बेटे)
7	1845-1915	वीरेन्द्रनाथ ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी के चौथे बेटे)
8	1847-1920	सौदामिनी ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी की बड़ी बेटी)
9	1849-1925	ज्योतिरिन्द्रनाथ ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी के पाँचवें बेटे)
10	1850-1864	सुकुमारी ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी की दूसरी बेटी)
11	1851-1857	पूर्णेन्द्रनाथ ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी के छठे बेटे)
12	1854-1920	शरतकुमारी ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी की तीसरी बेटी)
13	1856-1932	स्वर्णकुमारी ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी की चौथी बेटी)
14	1858-1948	वर्णकुमारी ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी की पाँचवीं बेटी)
15	1859-1923	सोमेन्द्रनाथ ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी के सातवें बेटे)
16	1861-1941	रवीन्द्रनाथ ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी के आठवें बेटे)
17	1863-1864	बुधेन्द्रनाथ ठाकुर (देवेन्द्रनाथ ठाकुर एवं शारदादेवी के नौवें बेटे)
18	1863	महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने बोलपुर के निकट 20 बीघा जमीन खरीदकर शांतिनिकेतन आश्रम की स्थापना की थी।

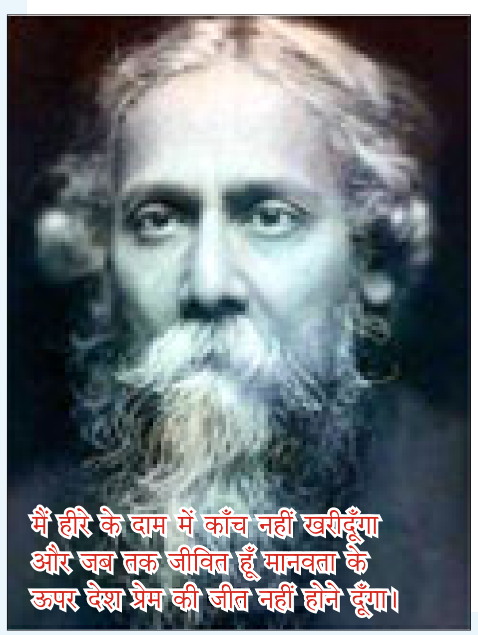

(19) 1865 - मार्च में रवीन्द्रनाथ का दाखिला कलकत्ता ट्रेनिंग एकेडमी में करवा दिया गया। सितंबर में उन्हें वहाँ से हटा लिया गया और नवंबर में कलकत्ता गवर्नमेंट स्कूल (नॉर्मल स्कूल) में दाखिल करा दिया गया।

(20) 1869 - रवीन्द्रनाथ ने पंडित विष्णुचंद्र चक्रवर्ती से ध्रुपद एवं खयाल गायकी की तालीम लेने की शुरूआत की।

(21) 1871 - कैम्पबेल अस्पताल के एक विद्यार्थी को रवीन्द्रनाथ को एनॉटॉमी पढ़ाने के लिए नियुक्त किया गया।

(22) 1872 - मार्च में बंगाल अकादमी में रवीन्द्रनाथ का दाखिला करवाया गया।

(23) 1873 - 14 फरवरी को रवीन्द्रनाथ पहली बार शांतिनिकेतन गए। मार्च में पिता के साथ अमृतसर के स्वर्ण मंदिर गए। वहाँ से पिता के साथ हिमालय-यात्रा पर गए। 18 दिसंबर को उबाऊ शिक्षा पद्धति की वजह से उन्होंने बंगाल अकादमी छोड़ दिया।

(24) 1974- रवीन्द्रनाथ का दाखिला मेट्रोपोलिटन स्कूल में करवाया गया। इसी वर्ष उन्होंने मैकबेथ और कुमारसंभव का काव्यानुवाद किया। पहली बार उनकी कविता 'तत्वबोधिनी' पत्रिका में प्रकाशित हुई। कविता का शीर्षक था -- 'अभिलाषा'। इसमें कवि का नाम नहीं दिया गया था। नाम के स्थान केवल इतना उल्लेख था -- 12 वर्ष उम्र के बच्चे की रचना।

(25) 1875- 10 मार्च को रवीन्द्रनाथ की माता सारदा देवी का निधन। इसी वर्ष रवीन्द्रनाथ की अपने नाम से पहली कविता अमृतबाजार पत्रिका' में प्रकाशित हुई।

(26) 1877- अंग्रेजी साहित्य के गहन अध्ययन के लिए मँझले भाई सत्येन्द्रनाथ के यहाँ अहमदाबाद गए। वे वहाँ डिस्ट्रिक्ट जज के रूप में कार्यरत थे।

(27) 1878- 20 सितंबर को रवीन्द्रनाथ का अपने मँझले भाई सत्येन्द्रनाथ के साथ ब्राइटन, इंग्लैंड प्रवास। ब्राइटन के एक पब्लिक स्कूल में दाखिला लिया। कुछ दिनों बाद वे लंदन विश्वविद्यालय चले गए।

(28) 1880- रवीन्द्रनाथ इंग्लैंड से भारत लौट आए।

(29) 1881- कोलकाता मेडिकल कॉलेज सभागार में पहला भाषण दिया। भाषण का विषय था -- 'संगीत और भावों की अभिव्यक्ति'। 'भग्न हृदय' पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित। 'वाल्मीकि प्रतिभा' गीतिनाट्य का मंचन।

(30) 1882 - 'काल मृगया' गीतिनाट्य का मंचन। 'संध्या संगीत' का प्रकाशन।

(31) 9 दिसंबर, 1883-प्रसिद्ध कविता 'निर्झर का स्वप्नभंग' की रचना की। इसी वर्ष रवीन्द्रनाथ का विवाह बेनीमाधव रायचौधुरी की बेटी भवतारिणी देवी के साथ हुआ। ससुराल में उन्हें नया नाम मृणालिनी देवी दिया गया। उनकी पाँच संतानें हुईं। तीन बेटियाँ तथा दो बेटे।

(32) 1884- हिन्दू धर्म के आदर्शों को लेकर बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के साथ उनकी चर्चित बहस हुई। इसी वर्ष अक्टूबर में रवीन्द्रनाथ आदि ब्राह्मसमाज के सचिव नियुक्त हुए।

(33) 1885 - बच्चों की मासिक पत्रिका 'बालक' की जिम्मेदारी सँभाली।

(34) 1886-1918 - माधुरीलता (रवीन्द्रनाथ ठाकुर एवं मृणालिनी देवी की पहली बेटी)
(35) 1886 - 'कड़ी 000 और कोमल' पुस्तक प्रकाशित।
(36) 1888 - रथीन्द्रनाथ (रवीन्द्रनाथ ठाकुर एवं मृणालिनी देवी के पहले बेटे)
(37) 1888- 'समालोचना' शीर्षक से एक प्रबंध-पुस्तक प्रकाशित हुई।
(38) 1890- रेणुका (रवीन्द्रनाथ ठाकुर एवं मृणालिनी देवी की दूसरी बेटी)
(39) 1890- अगस्त में दूसरी बार विदेश प्रवास। लंदन जाते हुए वे इटली और फ्राँस भी गए। नवंबर माह में भारत लौट आए। (40) 1892- मीरा देवी (रवीन्द्रनाथ ठाकुर एवं मृणालिनी देवी की तीसरी बेटी)
(41) 1893- 352 कविताओं का संग्रह 'सोनार तरी' शीर्षक से प्रकाशित।
(42) 1894- बंगीय साहित्य परिषद के प्रतिष्ठाता एवं सह-सभापति नियुक्त हुए। नवंबर में शमीन्द्रनाथ (रवीन्द्रनाथ ठाकुर एवं मृणालिनी देवी के दूसरे बेटे) का जन्म। इसी वर्ष अपने भतीजों बलेन्द्रनाथ और सुरेन्द्रनाथ के साथ स्वदेशी वस्त्रों की एक दुकान खोलकर कपड़े तथा पटसन का व्यवसाय आरंभ किया।
(43) 1897- 'भारती' पत्रिका के संपादक नियुक्त हुए।
(44) 1898- कोलकाता में प्लेग की समस्या दिखाई दी। भगिनी निवेदिता के साथ मिलकर रवीन्द्रनाथ ने रोगियों की तीमारदारी की। इसी वर्ष ढाका में आयोजित बंगीत प्रादेशिक सम्मेलन में शिरकत की।
(45) 1899- भतीजे बलेन्द्रनाथ बीमार पड़े। पटसन का व्यवसाय ठीक से नहीं चल सका फलतः भारी नुकसान हुआ। आखिरकार पटसन का व्यवसाय बंद करना पड़ा। अगले वर्ष बलेन्द्रनाथ का निधन हो गया।
(46) 1900- बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा शुरू की गई पत्रिका 'बंगदर्शन' के संपादक नियुक्त हुए।
(47) 1901- जमींदारी के कार्यभार से मुक्त होकर रवीन्द्रनाथ सपरिवार शांतिनिकेतन आकर रहने लगे। दिसंबर माह में पिता की अनुमति से उन्होंने बोलपुर में ब्रह्मचर्य आश्रम की स्थापना की। वहाँ उन्होंने अध्यापन भी किया।
(48) 1902- फरवरी में लॉर्ड कर्जन ने कोलकाता विश्वविद्यालय के समवर्तन उत्सव में एशियावासियों पर आपत्तिजनक टिप्पणियाँ की थीं। उनकी इन टिप्पणियों के विरोध में तीव्र आंदोलन किया गया। रवीन्द्रनाथ ने उसमें सक्रिय योगदान किया था। इसी वर्ष नवंबर माह में रवीन्द्रनाथ की पत्नी मृणालिनी देवी का निधन हुआ।
(49) 1903- मई महीने में रवीन्द्रनाथ की दूसरी बेटी रेणुका का निधन।
(50) 1904 - कविता-संग्रह 9 खंडों में प्रकाशित।
(51) 1905- जनवरी में रवीन्द्रनाथ के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ का निधन। उम्र : 87 वर्ष। इसी वर्ष 'भंडार' मासिक पत्रिका के संपादन की जिम्मेदारी स्वीकार की। अक्टूबर माह में बंगभंग के निर्णय को अमलीजामा पहनाया गया। इसके विरोध में रवीन्द्रनाथ ने बंगाल में रक्षाबंधन का आयोजन किया था। कोलकाता में उनके नेतृत्व में हजारों लोगों ने शोभायात्रा निकाली तथा प्रसन्नकुमार ठाकुर घाट पर गंगास्नान किया। इसके पश्चात बंगालियों में आपसी भाईचारे को प्रकट करने के निमित्त पुरूषों ने एक-दूसरे की कलाई पर रक्षासूत्र बाँधा था। उस दिन उन लोगों ने रवीन्द्र का यह गीत गाया था -- देश की माटी देश का जल / देश की हवा देश के फल / पुण्य हो, पुण्य हो, पुण्य हो / हे भगवान --। उस दिन बंगालियों के घर चूल्हे नहीं जले, कोलकाता की समस्त दुकानें बंद रहीं। दिसंबर माह में जॉर्ज पंचम भारत आए। गोखले के नेतृत्व में कांग्रेस ने उनके अभिनंदन का निर्णय लिया। रवीन्द्रनाथ ने 'भंडार' पत्रिका में 'राजशक्ति' शीर्षक से लेख लिखकर कांग्रेस के उस प्रस्ताव की आलोचना की थी।
(52) 1907 - नवंबर में मुंगेर में अकस्मात कॉलेरा से छोटे बेटे शमीन्द्रनाथ की मृत्यु हुई।
(53) 1908 - 'शारदोत्सव' नाटक की रचना।
(54) 1909 - शिलाईदह में रवीन्द्रनाथ गीतांजलि की कविताओं के लेखन में प्रवृत्त हुए।
(55) 1910 - जनवरी में एक विधवा युवती से अपने बेटे रथीन्द्रनाथ का विवाह कराया। दिसंबर में उनका रूपक नाट्य 'राजा' प्रकाशित हुआ। (56) 1911 - मॉडर्न रिव्यू समाचार-पत्र में उनकी छोटी कहानियों के अंग्रेजी अनुवादों के छपने की शुरूआत हुई। अनुवादक थे श्री लोकेन पालित। इसी वर्ष उनके प्रसिद्ध नाटक 'अचलायतन' और 'डाकघर' प्रकाशित हुए। दिसंबर में कोलकाता कांग्रेस में गाने के लिए आशुतोष चौधुरी के अनुरोध पर 'जनगणमन अधिनायक जय हे' की रचना की।
(57) 1912 - जनवरी में बंगीय साहित्य परिषद के प्रयास से कोलकाता टाउन हॉल में रवीन्द्रनाथ के पचास वर्ष पूरे होने के उपलक्ष में एक विराट अभिनंदन समारोह आयोजित किया गया। इससे पहले किसी और साहित्यकार के लिए इतना बड़ा समारोह आयोजित नहीं किया गया था। इसी वर्ष बंगाल और असम गवर्नमेंट के एक गुप्त सर्कुलर का पर्दाफाश हो गया। उस सर्कुलर में सरकारी कर्मचारियों को निर्देश दिए गए थे कि शांतिनिकेतन उनके बच्चों के शिक्षण के लिए ठीक नहीं है। इस सर्कुलर की मंशा समझकर लोग डर गए और अपने बच्चों को शांतिनिकेतन से हटाने लगे। इससे शांतिनिकेतन को काफी नुकसान हुआ लेकिन रवीन्द्रनाथ विचलित नहीं हुए। वे सरकार की इस हरकत से काफी क्षुब्ध हुए लेकिन उन्होंने तय किया कि वे यूरोप की यात्रा पर निकलेंगे और विश्व को शांतिनिकेतन की उच्च-आदर्शोयुक्त शिक्षाप्रणाली से अवगत कराएँगे। मार्च महीने में यूरोप जाने की सारी तैयारियों के बाद रवीन्द्रनाथ अकस्मात बीमार पड़ गए। उनका तमाम सामान मद्रास तक पहुँच गया था। 27 मई को वे अपने बेटे रथीन्द्रनाथ और बहू प्रतिमा को साथ लेकर यूरोप के लिए रवाना हुए। 16 जून को वे लोग लंदन पहुँचे, जहाँ मशहूर चित्रकार विलियम रॉथेन्स्टाइन के साथ उनका परिचय हुआ। रवीन्द्रनाथ की कुछ कविताओं के अंग्रेजी अनुवाद पढ़कर वे उनसे बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने येट्स, स्टॉपफोर्ड ब्रुक और ब्रैडली-जैसे रचनाकारों को वे कविताएँ पढ़वाईं। ये सारे ही लोग उन कविताओं से बेहद प्रभावित हुए। इसके बाद रॉथेन्स्टाइन ने लंदन स्थित अपने निवास पर मे सिन्क्लेयर, इवेलिन अंडरहिल, अर्नेस्ट रिज, फॉक्स स्ट्रैंग्वेज, चार्ल्स ट्रैवेलियन, एजरा पाउण्ड, एलिस मेनेल और हेनरी नेविन्सन-जैसे लेखक-साहित्यकारों को आमंत्रित किया। उस दिन नोबल पुरस्कार विजेता विख्यात अंग्रेज कवि विलियम बटलर येट्स ने रवीन्द्रनाथ की उन कविताओं के अनुवादों का पाठ किया। वहीं पर रवीन्द्रनाथ की मुलाकात चार्ल्स एण्ड्रयूज से हुई।
कवि की अनूठी प्रतिभा का परिचय पाकर प्रसिद्ध साप्ताहिक समाचार-पत्र 'नेशन' ने इंग्लैण्ड के विख्यात मनीषियों के साथ रवीन्द्रनाथ का परिचय करवाने के लिए 19 जुलाई को ट्रोकाडेरो होटल में एक दावत का आयोजन भी किया था। कुछ दिनों बाद में लंदन में कवि की मुलाकात जॉर्ज बर्नार्ड शॉ, एच. जी. वेल्स, जॉन मेंसफील्ड, लोयेस डिकिन्सन और बर्ट्रेण्ड रसेल-जैसे महान रचनाकारों और बुद्धिजीवियों से हुई। रवीन्द्रनाथ लंदन से 27 अक्टूबर को न्यूयॉर्क पहुँचे। 1 नवंबर को लंदन की इंडिया सोसाइटी ने 'नैवेद्य', 'खेया' तथा 'गीतांजलि' की 103 श्रेष्ठ कविताओं के अंग्रेजी अनुवाद को 'गीतांजलि' शीर्षक से प्रकाशित किया। गीतांजलि की केवल 750 प्रतियाँ छापी गईं। कवि येट्स ने उस संग्रह की भूमिका लिखी थी और रॉथेन्स्टाइन ने संग्रह के लिए एक रेखाचित्र बनाया था। संग्रह के प्रकाशन के साथ ही वहाँ के साहित्यिक समाज ने मुक्तकंठ से उसकी प्रशंसा की। उस वर्ष उस संग्रह को वर्ष की सर्वश्रेष्ठ साहित्यिक रचना घोषित किया गया।
(58) 1913 - जनवरी माह में रवीन्द्रनाथ अमेरिका के अरबाना से शिकागो पहुँचे और शिकागो विश्वविद्यालय में 'प्राचीन भारतीय सभ्यता के आदर्श' विषय पर भाषण दिया। वहाँ प्रसिद्ध जर्मन दर्शनिक रूडोल्फ आईकेन के साथ उनका परिचय हुआ। उन्होंने हार्वर्ड में भी अपना वक्तव्य रखा। 26 मई को भारत में शिमला के गवर्नर हाउस में सी. एफ एण्ड्रयूज ने विशिष्ट लोगों के सामने रवीन्द्रनाथ की कविताओं के अंग्रेजी अनुवादों का पाठ किया था। उस सभा की अध्यक्षता तत्कालीन गवर्नर लॉर्ड हार्डिन्ज ने की थी। उन्होंने अपने वक्तव्य में रवीन्द्रनाथ को एशिया का श्रेष्ठ कवि कहा था। 4 अक्टूबर को कवि मुम्बई लौट आए और फिर 6 अक्टूबर को वे कोलकाता पहुँच गए। 13 नवंबर, 1913 को रवीन्द्रनाथ को नोबल पुरस्कार देने की घोषणा की गई। स्वीडिश अकादमी ने गीतांजलि की भूरि-भूरि प्रशंसा की और उसे उस वर्ष की विश्व की सर्वश्रेष्ठ कृति कहा। कोलकाता से बहुत-से लोग कवि के अभिनंदन के लिए विशेष ट्रेन से शांतिनिकेतन गए थे। अभिनंदन के जवाब में रवीन्द्रनाथ ने लोगों पर आक्षेप लगाते हुए कहा था कि पाश्चात्य देश से इस सम्मान को पाने के पहले देशवासियों ने तो उनके प्रति इतना अनुराग नहीं दिखाया था। कवि के इस आक्षेप की कटू आलोचना का दौर शुरू ही हुआ था कि विपिनचंद्र पाल ने कवि के समर्थन में 'हिन्दू रिव्यू' समाचार-पत्र में लिखा -- ''कवि को सम्मान जताने के लिए जो डेपुटेशन शांतिनिकेतन गया था, कवि ने उसकी असारता के बारे में सबको बता दिया था। वे जानते थे कि उनमें बहुत कम लोग थे जिन्होंने उनकी रचनाओं को पढ़ा है और उनकी बातों को समझा है। उन्होंने बहुत साफ भाषा में लोगों से पूछा था -- 'आज आप लोग यहाँ किसलिए आए हैं' जिन लोगों को मैं इतने दिनों में भी तुष्ट नहीं कर सका, आज मैं ऐसी किस शक्ति का अधिकारी हो गया हूँ कि वे लोग मेरे प्रति इतने अनुरक्त हो उठे हैं' आज अचानक आप लोग मेरे प्रति यह जो सम्मान का भाव दिखाने आए हैं वह मेरी अपनी शक्ति के प्रति आपकी श्रद्धा के कारण नहीं है, विदेशियों ने मेरी ताकत को स्वीकार कर लिया है देखकर आपलोग आज भागे चले आए हैं। आप लोगों की महानुभवता के लिए धन्यवाद; लेकिन गिलट के प्याले में जिस विदेशी शराब को आप मेरे होंठों तक लाने की इच्छा रखते हैं, मेरी उसे पीने की जरा भी इच्छा नहीं है। मुझे माफ कीजिएगा।' राष्ट्रस्तरीय प्रयासों और कीर्ति के नैतिक मूल्य विदेशियों द्वारा स्वीकृत न होने तक जो लोग उन्हें उनका प्राप्त सम्मान नहीं देना चाहते, उन्हें यह साफ बात सुनाने में कुंठित होने पर वह रवीन्द्रनाथ की धज की बात न होती।?' दिसंबर में कोलकाता विश्वविद्यालय ने कवि को डी. लिट. उपाधि से विभूषित किया। कोलकाता के गवर्नर्स हाउस में आयोजित एक सभा में लॉर्ड कर्माइकल ने रवीन्द्रनाथ को नोबल पुरस्कार प्रदान किया था।(59) 1915 - फरवरी में गाँधीजी विदेश से मुम्बई लौटे थे तथा वहाँ से फीनिक्स स्कूल के उन विद्यार्थियों से मिलने शांतिनिकेतन गए थे, जिन्हें उन्होंने शांतिनिकेतन के विद्यादर्शों को समझने के लिए वहाँ भेजा था, लेकिन रवीन्द्रनाथ से उनकी मुलाकात नहीं हो सकी। कवि के शांतिनिकेतन लौटने से पहले ही गाँधी जी को खबर मिली कि गोपालकृष्ण गोखले का निधन हो गया है, लिहाजा वे वहीं से पूना के लिए रवाना हो गए थे। 10 मार्च के दिन को शांतिनिकेतन में 'गाँधी-दिवस' कहा गया। उस दिन शिक्षक और विद्यार्थियों ने सारे कार्य किए, भृत्य और झाड़ूदार लोगों ने उस दिन पूर्ण रूप से विश्राम किया। 20 मार्च को बंगाल के गवर्नर लॉर्ड कर्माइकल रवीन्द्रनाथ के मेहमान बनकर शांतिनिकेतन आए। 21 मार्च को गाँधी जी फिर से शांतिनिकेतन आए और फीनिक्स स्कूल के शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के साथ हरिद्वार चले गए। रवीन्द्रनाथ ने इन्हीं दिनों 'घरे-बाइरे' उपन्यास लिखना शुरू किया। 3 जून को राजा के जन्मदिन के अवसर पर कवि को 'सर' की उपाधि से सम्मानित किया गया।
(60) 1916 - मई को एण्ड्रयूज, पियर्सन और मुकुल डे को साथ लेकर रवीन्द्रनाथ जापान यात्रा पर निकले। 6 मई को रंगून पहुँचे। वहाँ के लोगों ने उनका राजोचित ढंग से स्वागत किया। वहाँ से 10 मई को वे लोग सिंगापुर के लिए रवाना हुए और 15 मई को सिंगापुर तथा 22 मई को हांगकांग पहुँचे। हांगकांग में जहाज के कप्तान ने बताया कि शंघाई जाना संभव नहीं क्योंकि जापान में लोग रवीन्द्रनाथ के दर्शनों के लिए अधीर हुए जा रहे हैं। लिहाजा हांगकांग से जहाज को सीधे जापान की ओर ले जाया गया। 29 मई को जहाज कोबे पहुँचा। जापानी मनीषियों की एक सभा में कवि का अभिनंदन किया गया। रवीन्द्रनाथ कुछ दिनों तक जापान में रहे और वहीं रहने के दौरान उन्होंने नवनिर्मित चीन गणतंत्र पर जापानी साम्राज्यवादियों की लोलुप दृष्टि की आलोचना की। 27 जून को टोकियो विश्वविद्यालय में रवीन्द्रनाथ ने एक महत्वपूर्ण भाषण दिया। भाषण में कवि की स्पष्ट धारणा देखकर जापानी सरकार उन पर असंतुष्ट हो गई। इसी समय उन्हें वंकुिवर, कनाडा में अपने विचार रखने के लिए बुलावा मिला, लेकिन उन दिनों कनाडा में भारतीयों के साथ वैषम्यपूर्ण व्यवहार किया जाता था, इसलिए कवि ने उस आमंत्रण को ठुकरा दिया था। 18 सितंबर को कवि दूसरी बार अमेरिका पहुँचे। सबसे पहले सिएटेल सनसेट क्लब की महिलाओं ने कवि का अभिनंदन किया। कुछ अमेरिकी शुभचिंतकों ने कवि के भाषणों की एक ऐसी योजना तैयार की जिससे कवि अमेरिका के सभी हिस्सों में जाकर अपनी बात कह सकें। योजना के मुताबिक 26 सितंबर को सनसेट क्लब में कवि ने अपना पहला भाषण दिया। विषय था -- राष्ट्रवादी नीति। इसमें उन्होंने पश्चिमी देशों की साम्राज्यवादी मनोवृत्ति और भारत में अंग्रेजों के शासन की तीव्र निंदा की। 27 सितंबर को कवि ने पोर्टलैण्ड में और 30 तारीख को सनफ्रांसिस्को में अपने भाषण दिए। इन दोनों ही भाषणों में उन्होंने समाज में भाईचारे की खोई हुई भावना को पुनर्जीवित करने पर जोर दिया था। राष्ट्रवाद को लेकर कवि के मत से नाराज कई समाचार-पत्रों ने उनकी आलोचना आरंभ कर दी, लेकिन कवि विचलित नहीं

हुए। 4 अक्टूबर को लॉस एंजेलस में जनसाधारण ने कवि का अभिनंदन किया।
(61) भारत में गदर दल के क्रांतिकारियों में से एक रामचंद्र उन दिनों अमेरिका में थे। रवीन्द्रनाथ ने सर की उपाधि का त्याग नहीं किया था और वे लगातार ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध मन्तव्य किए जा रहे थे, इस वजह से रामचंद्र ने एक समाचार-पत्र में रवीन्द्रनाथ की कठोर आलोचना करते हुए एक लेख लिखा। उसी समय यह अफवाह फैल गई कि गदर दल रवीन्द्रनाथ की हत्या का षड्यंत्र रच रहा है। कवि को पुलिस की मदद की सिफारिश की गई लेकिन उन्होंने यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। रामचंद्र को तलब किया गया तो उन्होंने कहा कि गदर दल कवि की हत्या नहीं करना चाहता। इसके बाद शुभचिंतकों ने कवि को स्वदेश लौट जाने की सलाह दी, लेकिन वे नहीं माने। सेंट बारबरा में उन्होंने भाषण दिया और वहाँ भी राष्ट्रवाद पर अपने पहले के विचारों को ही स्थापित

किया। फिर तो उन्होंने पासाडेना, सॉल्ट लेक सिटी, शिकागो, आयोवा, मिलोवॉकी, लुइवेल तथा डेट्रॉएट शहरों में राष्ट्रवाद पर धुआँधार भाषण दिए। उन्होंने क्लिवलैण्ड के विख्यात ट्वेन्टीएथ सेंचुरी क्लब में भी भाषण दिया। 18 नवंबर को कवि न्यूयॉर्क लौटे तो अखबारों के एक प्रतिनिधिमंडल ने उनका साक्षात्कार लिया। कवि ने उनके समक्ष पाश्चात्य देशों के राष्ट्रवाद और एशियावासियों के प्रति अमेरिका के वैषम्यमूलक आचरण की तीव्र भर्त्सना की। 21 नवंबर को उन्होंने न्यूयॉर्क के कॉर्नेगी हॉल में भाषण दिया। फिर फिलाडेल्फिया और बाद में एक बार फिर न्यूयॉर्क के पॉलिटिकल एजुकेशन स्कूल में भाषण दिए। भाषण का विषय था -- 'व्यक्तित्व'। बॉस्टन के माउण्ट हॉलियोक कॉलेज में कवि ने 'शिल्पकला' विषय पर अपनी बात रखी और टैरामाउण्ट टेम्पल में राष्ट्रवाद के विषय में अपने विचार प्रकट किए। येल विश्वविद्यालय के सभापति हैडली ने कवि का अभिनंदन करते हुए कहा कि रवीन्द्रनाथ के जीवन का उद्देश्य आलोक और सत्य की खोज है। अमेरिका से लौटते हुए 12 दिसंबर को कवि न्यूयॉर्क आए और एक विराट जनसभा को संबोधित किया। वहाँ से वे क्लिवलैण्ड गए जहाँ उन्होंने शेक्सपियर गार्डन में एक पौधा भी रोपा।
(62) 1917- 21 जनवरी, 1917 को रवीन्द्रनाथ स्वदेश के लिए रवाना हो गए। इसी बीच वे एक दिन के लिए होनोलूलू भी गए। 17 मार्च को वे कोलकाता आ पहुँचे। रवीन्द्रनाथ ने दिसंबर में होने वाले कोलकाता कांग्रेस के अधिवेशन में सभानेत्री के रूप में एनिबेसेंट के नाम का समर्थन किया। 8 सितंबर को मतिलाल घोष, चि रंजन दास, विपिनचंद्र पाल, व्योमकेश चक्रवर्ती, हीरेन्द्रनाथ द । और मौलवी फजलुल हक ने एकसाथ आकर कवि से आग्रह किया कि वे कोलकाता कांग्रेस की अभिनंदन समिति के सभापति की जिम्मेदारी स्वीकार करें। इसके पहले रायबहादुर वैकुंठनाथ सेन को इस पर निर्वाचित किया गया था। 11 सितंबर को वैकुंठनाथ के स्थान पर रवीन्द्रनाथ को यह जिम्मेदारी दी गई, लेकिन जब मॉडरेट दल ने एनी बेसेंट को सभानेत्री के रूप में स्वीकार कर लिया तो रवीन्द्रनाथ ने तुरंत सभापति के पद से इस्तीफा दे दिया। विचित्रा क्लब भवन में कवि के 'डाकघर' नाटक का मंचन किया गया। इस मौके पर बालगंगाधर तिलक, एनी बेसेंट, गाँधीजी, मदनमोहन मालवीय भी मौजूद थे।
(63) 1918 - रवीन्द्रनाथ ने विश्वभारती विश्वविद्यालय की आधारशिला रखी।
(64) 1919 - इसी वर्ष वे दक्षिण भारत के दौरे पर भी गए थे। वे बंगलौर, मैसूर, ऊटी, कोयंबटूर, पालघाट, सालेम, त्रिचिरापल्लरी, सोरिंगापट्टनम, कुम्भकोणम, मद्रास जैसी जगहों पर गए और लगभग हर शहर में उनके भाषण आयोजित किए गए। मद्रास में उन्होंने एनिबेसेंट द्वारा स्थापित राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के चांसलर के रूप में भाषण दिया।
13 अप्रैल को जलियाँवाला बाग में हुए हत्याकांड के विरोध में उन्होंने अंग्रेज सरकार द्वारा उन्हें दी गई नाइटहुड की उपाधि सरकार को लौटा दी और लॉर्ड चैम्सफोर्ड को अपना आक्रोश प्रकट करते हुए एक कड़ा पत्र लिखा। 3 जुलाई को विश्वभारती विश्वविद्यालय की स्थापना हुई।
(65) 1920 - गुजरात साहित्य समिति के वार्षिकोत्सव में गाँधीजी के आमंत्रण पर रवीन्द्रनाथ ने गुजरात गए और उन्होंने वहाँ भाषण दिया। कवि ने रात साबरमती आश्रम में गुजारी। वहाँ से वे भावनगर और लिमड़ी गए। लिमड़ी के महाराजा ने शांतिनिकेतन के लिए कवि को नगद दस हजार रूपये दान किए थे। 11 मई को कोलकाता से अपने बेटे रथीन्द्रनाथ और बहू प्रतिमा देवी के साथ रवीन्द्रनाथ यूरोप की यात्रा के लिए निकले। मुंबई से 15 मई को उनका जहाज लंदन के लिए रवाना हुआ। उस जहाज में आगा खाँ भी विदेश जा रहे थे। रवीन्द्रनाथ ने आगा खाँ के साथ हाफिज, सूफीवाद-जैसे विषयों पर विशद चर्चाएँ कीं। इस चर्चा में अलवर के महाराजा और नवनगर के महाराजा जाम साहेब रणजीत सिंह भी शामिल हुआ करते थे। 5 जून को उनका जहाज प्लाईमाउथ बंदरगाह पहुँचा, जहाँ पियर्सन ने आकर कवि का अभिनंदन किया। लंदन आकर कवि ने रॉथेन्स्टाइन, हडसन, फॉक्स स्ट्रैंग्वेज, कनिंघम ग्राहम, निकोलस रोरिक, जॉर्ज बर्नार्ड शॉ, गिलबर्ट मरे-जैसे पूर्व-परिचित साहित्यकार एवं चित्रकारों से मुलाकात की थी लेकिन ब्रिटिश राज के असली चरित्र पर की उनकी स्पष्ट टिप्पणियों के कारण इस बार उनके कई कवि-मित्र और परिचितों ने उनसे दूरी बनाकर रखी थी। लंदन से कवि ऑक्सफोर्ड गए थे जहाँ उनकी मुलाकात कॉर्नेल लॉरेन्स से हुई। कवि ने ऑक्सफोर्ड में एक भाषण दिया। उसी दिन रवीन्द्रनाथ ऑक्सफोर्ड केम्ब्रिज गए। 24 जून को कैक्स्टन हॉल में ईस्ट एंड वेस्ट सोसाइटी ने कवि का अभिनंदन किया। इसमें सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री जॉन मैनार्ड केन्स मौजूद थे। 10 जुलाई को वे ब्रिस्टल में राजा राममोहन राय की समाधि के दर्शन करने गए। अल्बर्ट काह्न के मेहमान के रूप में वे 6 अगस्त को पेरिस पहुँचे। वहाँ संस्कृत भाषा एवं साहित्य के विद्वान सिल्विया लेवी और विख्यात साहित्यकार आंद्रे जीद से मुलाकात हुई। हॉलैंड से आमंत्रित होकर वे 18 सितंबर को एम्सटर्डम के लिए ट्रेन से रवाना हुए। वहाँ चर्च ऑफ द फ्री क्रिश्चियन, लेडेन विश्वविद्यालय, एमस्टर्डम विश्वविद्यालय में भाषण दिए। हेग के थियोसॉफिकल सोसाइटी में उन्होंने कवितापाठ किया तथा शाम को भाषण दिया। 7 अक्टूबर को वे पेरिस पहुँचे और वहाँ से इंग्लैण्ड। 21 अक्टूबर को वे अमेरिका के लिए पानी के जहाज से रवाना हुए। 28 अक्टूबर को न्यूयॉर्क पहुँचे, जहाँ वे एंग्लोक्वीन होटल में रूके। 10 नवंबर को ब्रुकलिन एकेडमी ऑफ म्यूजिक में उन्होंने 'पूर्व और पश्चिम का मिलन' विषय पर भाषण दिया। न्यूयॉर्क के पार्क थियेटर में उन्होंने 16 और 28 नवंबर को भाषण दिए। 7 दिसंबर को हार्वर्ड में जेम्स

हॉटन बुड्स के साथ विश्वभारती के लिए फंड जुटाने पर चर्चा की।10 दिसंबर को न्यूयॉर्क के गैरिक थियेटर में रवीन्द्रनाथ के दो नाटक 'बलिदान' और 'पोस्ट ऑफिस' का मंचन किया गया। 14 दिसंबर को फिलाडेल्फिया के स्वार्थमोर कॉलेज में उनका भाषण रखा गया।
(66) 1921- 2 जनवरी को न्यूयॉर्क कम्यूनिटी फोरम में रवीन्द्रनाथ ने 'पूर्व और पश्चिम का मिलन' विषय पर भाषण दिया। 4 जनवरी को वे हेलेन केलर से मिलने उनके घर गए, जहाँ हेलेन केलर ने कवि को अपनी पुस्तक 'द वर्ल्ड आई लिव इन' भेंट की। 11 जनवरी को वे वेलेजली कॉलेज गए जहाँ उन्होंने दर्शन विभाग में 'कवि का धर्म' विषय पर भाषण दिया। 12 जनवरी को केम्ब्रिज के थियेटर हॉल में उन्होंने 'बंगाल के लोक कवि' शीर्षक से अपना भाषण दिया। 17 जनवरी को मैकमिलन एंड कंपनी की ओर कवि को शांति निकेतन के लिए उन सारी पुस्तकों की प्रतियाँ भेंट की गईं, जो उन्होंने प्रकाशित की थीं। 27 जनवरी को पोएट्री सोसाइटी ने कवि के सम्मान में अपना वार्षिक रात्रिभोज होटल एस्टर में आयोजित किया। 10 फरवरी को ओक्लाहोमा में भाषण दिया। अगले दिन ओक्लाहोमा विश्वविद्यालय के सभागार में भाषण दिया। 13 फरवरी को ह्यूस्टन में भाषण दिया। 14 तारीख को वाको, 15 को फोर्ट वर्थ, 16 को डेन्टन, 17 को जॉर्जटाउन और 18 को श्रेवपोर्ट में भाषण आयोजित किए गए। 20 फरवरी को डालास, टेक्सास में उन्होंने भाषण दिया। 21 तारीख को डेल्टन में गर्ल्स कॉलेज की विद्यार्थियों के सामने कुछ कविताओं का पाठ किया। 17 मार्च को रवीन्द्रनाथ की मुलाकात प्रसिद्ध एंथ्रोपॉलॉजिस्ट और एग्रोनॉमिस्ट लियोनार्ड नाइट एमहर्स्ट से हुई। बाद में एमहर्स्ट ने शांतिनिकेतन में कई परियोजनाओं पर काम किया। 19 मार्च को कवि न्यूयॉर्क से इंग्लैण्ड के लिए रवाना हुए तथा 31 मार्च को इंग्लैण्ड पहुँचे। 15 अप्रैल को कवि हाउस ऑफ कॉमन्स देखने गए तथा वहाँ पर मजदूर नेता बेन स्पूर से मुलाकात की। कवि ने मॉन्टेग्यू से भी मुलाकात की। उन्होंने तथा मॉन्टेग्यू ने विश्वभारती पर विशद चर्चा भी की। इसी माह वे पेरिस के लिए हवाई जहाज से रवाना हुए। वहाँ वे रोमैन रॉलैण्ड से मिले तथा विश्वभारती एवं संगीत पर विशद चर्चा की। 22 अप्रैल को प्रसिद्ध कवि नोएल्स से मुलाकात हुई। इन्हीं ने 1930 में पेरिस में रवीन्द्रनाथ के चित्रों की प्रदर्शनी आयोजित करने में महती भूमिका निभाई थी। 23 अप्रैल को भारतीय व्यवसायी श्री सरदार सिंह जी रावजी राणा से भेंट हुई। उन्होंने बाद में शांतिनिकेतन के लिए बहुत सारी किताबें भेंट की थी। 30 अप्रैल को डॉ. हैन्स बॉडमर के आमंत्रण पर रवीन्द्रनाथ स्विट्जरलैण्ड के लिए रवाना हुए। 12 मई को श्रीमती बॉडमर के साथ लंच लिया। शाम को ज्यूरिख विश्वविद्यालय में कवि ने 'कवि का धर्म' लेख का पाठ किया। 13 मई को कवि जर्मनी में थे। उनकी पुस्तकों के जर्मन अनुवाद खासे लोकप्रिय हो चुके थे और वहाँ के लेखकों और बुद्धिजीवियों के लिए वे कतई अपरिचित नहीं थे। 20 मई को हैम्बर्ग विश्वविद्यालय में उन्होंने 'जंगल का संदेश' आलेख का पाठ किया था, जिसकी लोगों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। 21 मई को वे कोपेनहेगन, डेनमार्क गए। 23 मई को कोपेनहेगन विश्वविद्यालय में 'जंगल का संदेश' आलेख का पाठ किया। 24 मई को स्वीडन के स्टॉकहोम शहर पहुँचे और स्वीडिश एकेडमी के सचिव तथा भारी संख्या में एकत्र लोगों से मुलाकात की। वे ग्रैण्ड होटल में ठहरे। 26 मई को नोबल पुरस्कार प्राप्त करने 8 वर्ष बाद रवीन्द्रनाथ ने स्वीडिश एकेडमी में पुरस्कार स्वीकार करने संबंधी भाषण दिया, जिसमें उन्होंने वैश्विक सहयोग और सामंजस्य पर विशेष रूप से चर्चा की थी। 29 मई को वे बर्लिन पहुँचे जहाँ एस्प्लैनेड होटल में रूके। वहाँ प्रसिद्ध भारतविद हेलमुट ग्लासेनप ने उनका बड़ा-सा साक्षात्कार लिया। 31 मई को बर्लिन विश्वविद्यालय में कवि ने लेक्चर दिया। 7 जून को म्यूनिख विश्वविद्यालय में उनका भाषण रखा गया। 13 जून को फ्रैंकफर्ट विश्वविद्यालय में उन्होंने 'द विलेज मिस्टिक्स ऑफ बेंगॉल' लेख पढ़ा। विश्वविद्यालय की ओर से शांतिनिकेतन के लिये पुस्तकों का विशाल भंडार रवीन्द्रनाथ को उपहार में दिया गया। 15 जून को कवि वियेना, ऑस्ट्रिया पहुँचे। 16 को वियेना विश्वविद्यालय में 'जंगल का संदेश' आलेख का वाचन किया। श्रोताओं में ऑस्ट्रिया के राष्ट्रपति भी मौजूद थे। 22-23 जून को स्ट्रॉसबर्ग विश्वविद्यालय में कवि को सम्मानित किया गया। वहाँ सिल्वाँ लेवी ने उन पर लिखा और फ्रेंच में अनूदित लेख 'जन गण मन' पढ़ा। 20 जुलाई को रवीन्द्रनाथ कोलकाता और 26 जुलाई को शांतिनिकेतन लौट आए। 25 अगस्त को कोलकाता विश्वविद्यालय ने रवीन्द्रनाथ को अपना पहला जगत्तारिणी पदक प्रदान करने की घोषणा की। 6 सितंबर को महात्मा गाँधी जोड़ासाँको गए। वहाँ रवीन्द्रनाथ के साथ उनकी लगभग 4 घण्टों तक बातचीत चली। अक्टूबर माह में विख्यात बांग्ला लेखक सुकुमार रॉय अपने बेटे सत्यजित रॉय के साथ शांतिनिकेतन आए।
(67) 1922 - 21 अगस्त को प्रेसिडेंसी कॉलेज में रवीन्द्रनाथ का अभिनंदन किया गया। इस अवसर सर उन्होंने वक्तव्य भी दिया। 21 सितंबर को रवीन्द्रनाथ तथा सिल्वाँ लेवी पूना में विद्वान आर. जी. भंडारकर से मुलाकात की। वहाँ कवि रतनजी दादाभाई टाटा के मेहमान के रूप में ठहरे। 24 सितंबर को न्यू पूना कॉलेज में शिक्षा विषय पर कवि ने लेक्चर दिया। 27 सितंबर को मैसूर विश्वविद्यालय में भाषण दिया। 29 सितंबर को एनी बेसेंट से मुलाकात हुई। 2 अक्टूबर को कोयंबटूर के लोकल वैरायटी हॉल में कवि का सम्मान किया गया। 11 अक्टूबर को कवि श्रीलंका पहुँचे। 17 अक्टूबर को गाले एसोसिएशन के आमंत्रण पर भाषण दिया। 20 तथा 23 अक्टूबर को कैम्पबेल पार्क तथा ट्रिनिटी कॉलेज में कवि का सम्मान किया गया। 16 नवंबर को प्रसिद्ध उद्योगपति पी. आर. रामानुजम से मुलाकात की। उन्होंने नजराने के तौर पर रसायन शास्त्र की 200 पुस्तकें और शांतिनिकेतन में रसायन शास्त्र की प्रयोगशाला की स्थापना के लिए समूचे उपकरण प्रदान किए। दिसंबर माह में शांतिनिकेतन लौट आए।
(68) - 1923 1 मार्च को बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को कवि ने संबोधित किया। स्वागत भाषण पंडित मदनमोहन मालवीय जी ने दिया। इसी महीने वे लखनऊ विश्वविद्यालय गए जहाँ उन्होंने भाषण दिया। वे मूलतः विश्वभारती के लिए धन एकत्र करने के उद्देश्य से देशाटन पर निकले * 17 मार्च को अहमदाबाद में गुजरात साहित्य सभा को संबोधित किया। वहाँ विश्व के उन तमाम पर्यटकों के लिए एक गेस्ट हाउस बनवाया जिनके पास ठहरने की कोई व्यवस्था नहीं होती। * 22 मार्च को कराची के पर्ल ऑपेरा हाउस में भाषण दिया। विषय था -- 'अ विजन ऑफ इंडियन हिस्ट्री'। 24 मार्च को थियोसॉफिकल सोसाइटी हॉल में भाषण दिया। 10 अप्रैल को शांतिनिकेतन लौट आए। * 23 मई काजी नजरूल इसलाम ने रवीन्द्रनाथ के आग्रह पर हुगली जेल में अपना आमरण अनशन तोड़ा। * 7 अक्टूबर को उद्योगपति जुगलकिशोर बिड़ला कवि से अलीपुर में मिले और कवि को चीन यात्रा का सारा खर्च देने का वादा किया। इसके अलावा शांतिनिकेतन विद्यालय के लिए 3000 रूपये भी दान किए। * नवंबर में गुजरात के ध्रंगाधरा के राजा ने शांतिनिकेतन के लिए 25000 रूपये देने का वादा किया और पहली किश्त के रूप में 500 रूपये प्रदान किए। इसी माह मोरवी के राजा ने कवि को 10000 रूपये दानस्वरूप दिए। लिमड़ी के महाराज ने 15000 रूपयों का दान किया।
16 दिसंबर को जब कवि शांतिनिकेतन लौटे तो वे दानस्वरूप 1 लाख 35

हजार रूपये एकत्र कर चुके थे।
(69) 1924 - 21 मार्च को रंगून के रास्ते कवि चीन के लिए रवाना हुए। उनके साथ ग्रेचेन ग्रीन, आमहर्स्ट, क्षितिमोहन सेन, नंदलाल बोस और कालिदास नाग भी प्रवास पर थे। बिड़ला परिवार की ओर से इस यात्रा के खर्च के रूप में 33000 रूपये प्रदान किए गए। * 24 मार्च को रंगून में विशाल जनसमूह ने कवि का स्वागत किया। * 25 मार्च को प्रवासी बंगालियों की संस्था 'साहित्यसम्मिलनी' ने कवि का अभिनंदन किया। * 26 मार्च को बर्मा में रहनेवाले चीनी लोगों ने कवि का अभिनंदन किया। * कवि 30 मार्च को पेनांग, 31 मार्च को कुआलालंपुर, 2 अप्रैल को सिंगापुर, 7 अप्रैल को हांगकांग और 8 अप्रैल को शंघाई पहुँचे। * 20 अप्रैल को कवि ने नानकिंग विश्वविद्यालय में विशाल विद्यार्थी समूह के समक्ष भाषण दिया। * 25 अप्रैल को कवि को प्रसिद्ध ग्रोन हॉल में एक चाय-पार्टी दी गई, जिसमें अलग-अलग क्षेत्रों के 50 बुद्धिजीवियों ने कवि से मुलाकात की। * 18 मई को पीकिंग (अब बीझिंग) में पीकिंग विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों के समक्ष भाषण दिया। 30 मई को कवि और उनके साथी कोबे टैगोर सोसाइटी के आमंत्रण पर जापान के लिए रवाना हो गए। इस प्रवास का खर्च कोबे टैगोर सोसाइटी, सिंडा कंपनी के श्री मित्सुबिशी और आशी प्रेस ने वहन किया था। 3 जून को ओसाका के नाकानोशिमा सभागार में विशाल जनसमूह के समक्ष कवि ने भाषण दिया। सुश्री तोमिको वाडा कोरा ने उनके भाषण का जापानी भाषा में अनुवाद पाठ किया था। * 9 जून को कवि ने टोक्यो की इम्पीरियल यूनिवर्सिटी में भाषण दिया।* 17 जून को क्योटो के ओटानी विश्वविद्यालय में भाषण दिया।* 17 जुलाई को कवि और उनके साथियों का दल कोलकाता लौट आया। * 24 सितंबर को कवि हारूना-मारू जहाज से फ्रांस के लिए रवाना हुए। 12 अक्टूबर को वे पेरिस पहुँचे। 18 अक्टूबर को पेरू के लिए रवाना हुए। * 6 नवंबर को ब्यूनस आर्यर्स पहुँचे। उस दौरान कवि को इनफ्लूएंजा हो गया और वे काफी दुर्बल हो गए। डॉक्टर्स ने उन्हें पूरी तरह से विश्राम करने की सलाह दी। ऐसे में रवीन्द्रनाथ की प्रशंसक विक्टोरिया ओकैम्पो उन्हें देखने आई और उनसे आग्रह किया कि वे उनके साथ चलें और उनके सान्निध्य में आराम करें। ओकैम्पो ने जी-जान से कवि की तीमारदारी की। यहाँ तक कि खर्चे पूरे करने के लिए उन्होंने अपने गहने तक बेच दिए। ओकैम्पो के साथ रहते हुए रवीन्द्रनाथ ने कई कविताएँ लिखीं, जो उनके पूरबी संग्रह में शामिल हैं। ये कविताएँ ओकैम्पो को ही समर्पित की गई हैं। स्वास्थ्य की समस्याओं के चलते कवि का पेरू जाना संभव नहीं हो सका। वह यात्रा अधूरी ही रह गई। * 30 दिसंबर को अर्जेन्टीना के राष्ट्रपति अल्वेयर से कवि की मुलाकात हुई।
(70) 1925 - 3 जनवरी को रवीन्द्रनाथ जूलियो सीजर जहाज से यूरोप के लिए रवाना हुए। साथ में एमहर्स्ट थे। इसी माह वे स्पेन के बार्सिलोना, इटली के जेनोवा गए। उन्हीं दिनों रोम विश्वविद्यालय के संस्.ति के प्राध्यापक कार्लो फॉर्मिची से कवि की मुलाकात हुई। * 21 जनवरी को मिलान में कवि का भव्य स्वागत किया गया। स्वागत करनेवालों में थे -- ड्यूक स्कॉटी, गाइडो कैग्नोला तथा अन्य बुद्धिजीवी और शिक्षाविद। ड्यूक के निवास पर शाम के वक्त कवि का अभिनंदन किया गया, जहाँ रवीन्द्रनाथ ने एक छोटा-सा भाषण भी दिया था। * 22 जनवरी को मिलान में कवि ने 'मानवता की आवाज' शीर्षक से एक भाषण दिया। प्रोफेसर फॉर्मिची ने उस भाषण का इतालवी में अनुवाद किया था। 24 के रवीन्द्रनाथ एक बार फिर एन्फ्लूएंजा के शिकार हुए। * 1 फरवरी को कवि ने विक्टोरिया ओकाम्पो को चिट्ठी लिखी, जिसमें उन्होंने बताया कि वे सितम्बर में फिर से इटली आएँगे और अक्टूबर के मध्य तक वहाँ रहेंगे, लिहाजा वे चाहें तो वहाँ आ सकती हैं। * 18 फरवरी को मुम्बई तथा 24 फरवरी को कवि कोलकाता लौट आए। * महात्मा गाँधी खादी और चरखे को लेकर जनजागृति के प्रसार हेतु बंगाल गए थे। 29 मई को वे शांतिनिकेतन गए ताकि रवीन्द्रनाथ की कुछ असहमतियों पर विशद चर्चा हो सके। * अगस्त माह में लॉर्ड सत्येन्द्रप्रसन्न सिन्हा शांतिनिकेतन आए और वहाँ की प्रगति को देखकर अत्यंत संतुष्ट हुए तथा उन्होंने शांतिनिकेतन को 10000 रूपयों की राशि भेंट करने का आश्वासन दिया। * 21 नवंबर को इतालवी भाषाविद कार्लो फार्मिची गेस्ट-लेक्चरर के रूप में शांतिनिकेतन आए। वे रवीन्द्रनाथ के इटली प्रवास के दौरान दिए गए आमंत्रण के तहत शांतिनिकेतन आए थे। फॉर्मिची अपने साथ बड़ी संख्या में इतालवी पुस्तकें और प्रधानमंत्री मुसोलिनी का एक पत्र भी लाए थे, जिसमें प्रोफेसर टसी को इतालवी भाषा के शिक्षक के रूप में शांतिनिकेतन भेजने का आश्वासन था। उसमें यह भी लिखा था कि उनके साथ बड़ी संख्या में इतालवी ग्रंथ और पेंटिंग्स भेजी जाएँगी। * 19 दिसंबर को इंडियन फिलोसॉफिकल कांग्रेस द्वारा कोलकाता में पहली कॉन्फ्रेंस का आयोजन किया गया। इसमें रवीन्द्रनाथ ने 'हमारे लोगों का दर्शन' शीर्षक से भाषण दिया।
(71) 1926 - 6 फरवरी को कवि ढाका पहुँचे। * 7 तारीख को ढाका म्युनिसिपैलिटी एंड पीपुल्स असोसिएशन द्वारा कवि का अभिनंदन किया गया। बाद में कवि ने कॉरोनेशन पार्क में विशाल जनसमूह को संबोधित किया। * 10 फरवरी को ढाका विश्वविद्यालय में कवि का अभिनंदन किया गया। 1 मार्च को कवि कोलकाता लौट आए। * 15 मई को रवीन्द्रनाथ इतालवी जहाज एक्विलेजा से इटली के लिए रवाना हुए। वे सरकारी मेहमान की हैसियत से वहाँ जा रहे थे। 30 मई को वे रोम पहुँचे।*31 मई को रवीन्द्रनाथ की मुलाकात मुसोलिनी से हुई। बाद में प्रेसवार्ता के दौरान रवीन्द्रनाथ ने मुसोलिनी के लिए कहा -- ``His Excellency Mussolini seems modelled body and soul by the chisel of a Michael Angelo, whose cery action showed intelligence and force. I see a freat future for your country ..." इस टिप्पणी को काफी तोड़-मरोड़कर पेश किया गया। मुसोलिनी के साथ कवि की यह मुलाकात लंबे समय तक विश्वव्यापी चर्चा एवं आलोचना का विषय बनी रही। * जून में रोम में मेयर तथा शहर के कई गणमान्य लोगों ने रवीन्द्रनाथ का भव्य रूप से सम्मान किया। 8 जून को कवि ने इतालवी बुद्धिजीवियों के समक्ष 'कला का अर्थ' विषय पर भाषण दिया। 10 जून को रोम विश्वविद्यालय ने कवि का अभिनंदन किया। 17 जून को फ्लोरेंस विश्वविद्यालय में आयोजित सभा में कवि ने संबोधित किया। 20 जून को ट्यूरिन विश्वविद्यालय में कवि का भाषण आयोजित किया गया। इसी दिन कवि स्विट्जलैण्ड के लिए रवाना हो गए। वहाँ दिनों रहकर वे 31 जुलाई को लंदन पहुँच गए। वहाँ अपने मित्रों रॉथेन्स्टाइन, सी.पी. स्कॉट और ई. रीस से मिले। * 21 अगस्त को कवि लॉर्ड सत्येन्द्रप्रसन्न सिन्हा, प्रशांतचंद्र और रानी महलानवीस के साथ नॉर्वे के लिए रवाना हुए। * 25 अगस्त को कवि ने ओस्लो की ओरिएंटल अकादमी में भाषण दिया। * अगस्त माह में ही वे स्टॉकहोम, स्वीडन गए। स्वीडिश अकादमी द्वारा उनके सम्मान में आयोजित दोपहर-भोज में शामिल हुए।* 6 सितंबर को वे कोपेनहेगन, डेनमार्क पहुँचे। वहाँ से 8 सितंबर को जर्मनी पहुँचे। * 9 सितंबर को हैम्बर्ग में 'संस्.ति और विकास' विषय पर भाषण दिया। 11 से 16 सितंबर तक वे बर्लिन में रहे। वहाँ जर्मनी के राष्ट्रपति हिण्डेनबर्ग से मिले। * सितंबर में रवीन्द्रनाथ ने इटली में मौजूद फासिस्ट ताकतों के खिलाफ 'मैनचेस्टर गार्डियन' को पत्र लिखा। रवीन्द्रनाथ की रचनाओं के जर्मन प्रकाशक कुर्ट वुल्फ से भी मुलाकात हुई। इसी माह कवि म्युनिख, न्यूरेम्बर्ग, स्टुटगार्ट और कॉलोन भी गए। * 16 अक्टूबर को वियना में कवि ने भाषण दिया। * 26 अक्टूबर को कवि बुदापेस्ट, हंगरी गए। वहाँ भाषण दिया। * 15 नवंबर को कवि बेलग्रेड, यूगोस्लाविया पहुँचे। बेलग्रेड विश्वविद्यालय में विशाल जनसमूह के समक्ष उन्होंने भाषण दिया। नवंबर में ही कवि सोफिया, बुल्गारिया पहुँचे। वहाँ बुद्धिजीवियों से मुलाकात हुई। यहाँ रवीन्द्रनाथ ने एक बार भाषण दिया।* नवंबर में ही कवि बुखारेस्ट, रोमानिया गए। रोमानिया के राजा फर्डिनेण्ड ने कवि के सम्मान में एक दोपहर-भोज का आयोजन किया और कवि का अभिनंदन किया। * 25 नवंबर को कवि एथेंस, ग्रीस पहुँचे। वहाँ ग्रीक लेखकों और बुद्धिजीवियों ने कवि का स्वागत किया तथा उन्हें 'ऑर्डर ऑफ द रिडीमर' सम्मान से विभूषित किया। *27 नवंबर को कवि अलेक्जेंड्रिया, मिस्र पहुँचे और 28 को काहिरा गए। इसी दिन मिस्र के महान कवि अहमद सौकी ने कवि को अपने यहाँ चाय पर आमंत्रित किया। उस चाय पार्टी में मिस्र सरकार के सभी मंत्री शामिल हुए और इस कारण संसद का एक सत्र स्थगित कर दिया गया। इसी दिन मिस्र के राजा ने कवि से भेंट की और उन्हें अरबी भाषा के महान ग्रंथ भेंट किए। 19 दिसंबर को कवि शांतिनिकेतन लौट आए।
(72) 1927 - 28 मार्च को युवराज किशन सिंह के आमंत्रण पर रवीन्द्रनाथ भरतपुर, राजस्थान में आयोजित हिन्दी साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षता के लिए गए। वे राजस्थान की भयंकर गर्मी और अपनी बड़ी उम्र की समस्याओं के बावजूद वहाँ गए ताकि शांतिनिकेतन के लिए धन एकत्र कर सकें। वहाँ उन्होंने अंग्रेजी में भाषण दिया। * अप्रैल में आगरा, जयपुर होते हुए वे अहमदाबाद पहुँचे। वहाँ गुजराती साहित्य सभा ने कवि का अभिनंदन किया। 11 अप्रैल को वे शांतिनिकेतन लौट आए। 20 जुलाई को कवि सिंगापुर पहुँचे। * 21 जुलाई को चीनी समुदाय के लोगों ने गार्डन क्लब में कवि का अभिनंदन किया। * 22 जुलाई को विक्टोरिया थियेटर में कवि ने 'न्दपजल व िउंद' विषय पर भाषण दिया। * 24 जुलाई को 'पैलेस गाई थियेटर' में रवीन्द्रनाथ ने चीनी शिक्षकों और विद्यार्थियों के समक्ष 'चीन और भारत के बीच प्राचीन अंतर्सूत्र' विषय पर भाषण दिया। इसी दिन इंडियन एसोसिएशन के आयोजन में कवि ने सिंगापुर में रह रहे भारतीय समुदाय की विशाल जनसभा को संबोधित किया। * 25 जुलाई को विक्टोरिया थियेटर पर आयोजित विद्यार्थियों की सभा में कवि ने शांतिनिकेतन में अपने अध्यापन से जुड़े अनुभव और संस्मरण साझा किए। * 2 अगस्त को कुआलालंपुर में थियेटर हॉल में भाषण दिए। * 17 अगस्त को बेलावन, सुमात्रा पहुँचे। वहाँ कवि के डच, सिंधी और तमिल प्रशंसकों ने उनसे मुलाकात की। 19 तारीख को कवि सिंगापुर पहुँचे। * 21 अगस्त को कवि जकार्ता गए। वहाँ स्थानीय सिंधी उद्योगपतियों से कवि की मुलाकात हुई। उन्होंने शांतिनिकेतन के लिए मदद करने की पेशकश की। 23 तारीख को कवि बाली पहुँचे। * 13 अक्टूबर को कवि की मुलाकात थाइलैण्ड के राजा और रानी से हुई। 14 अक्टूबर को कवि ने बैंकॉक के स्थानीय संग्रहालय में 'राष्ट्रीय शिक्षा के आदर्श' विषय पर भाषण दिया। 27 अक्टूबर को कवि कोलकाता लौट आए।
(73) 1928 - 19 फरवरी को यूरोप जाने और ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में हिबर्ट लेक्चरर्स के अंतर्गत व्याख्यान देने के निमंत्रण को कवि ने स्वीकार कर लिया। * 12 मई को हिबर्ट लेक्चर्स के सिलसिले में यूरोप और इंग्लैण्ड के लिए यात्रा मद्रास से आरंभ की जानी थी लेकिन मद्रास में रवीन्द्रनाथ बीमार पड़ गए और यात्रा स्थगित करनी पड़ी। 28 मई को कवि कोलंबो के लिए रवाना हुए। 31 मई को वे कोलंबो पहुँचे जहाँ वे डॉ. डी. सिल्वा के आतिथ्य में रहे लेकिन बीमारी की वजह से यूरोप की यात्रा निरस्त करनी पड़ी। * जून माह में कवि बंगलौर के रास्ते शांतिनिकेतन के लिए रवाना हुए और 4 जुलाई को वे शांतिनिकेतन पहुँच गए। * 10 अक्टूबर, शांतिनिकेतन की नंदन गैलरी में कवि तथा अन्य चित्रकारों के चित्रों की सामूहिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया।
(74) 1929- 1 मार्च को कोलंबो, सिंगापुर और जापान के रास्ते कनाडा के लिए कवि रवाना हुए। * 15 मार्च को हांगकांग पहुँचे तथा गवर्नर्स हाउस में डिनर लिया। इसी दिन सिंधी व्यवसायियों के एक समूह ने कवि का अभिनंदन किया तथा शांतिनिकेतन के महिला प्रभाग के लिए चाँदी के एक बक्से में 800 रूपये भेंट किए। * 17 मार्च को कवि शंघाई पहुँचे। वहाँ दो दिन अपने मित्र शी-मोन के साथ बिताए। जनरल च्यांग फेंग चेन के साथ भेंट हुई तथा भारतीय मूल के लोगों के साथ रात्रिभोज में शामिल हुए। * 24 मार्च को कोबे, जापान पहुँचे और 26 को टोक्यो गए। * 28 मार्च को योकोहामा से वेंकुवर,

कनाडा के लिए रवाना हुए। * 6 अप्रैल को विक्टोरिया, कनाडा पहुँचे और सिख समुदाय के प्रशंसकों द्वारा कवि का स्वागत किया गया। इसी दिन नेशनल काउंसिल ऑफ एजुकेशन के अधिवेशन में कवि ने `The Philosophy of Leisure' विषय पर अपना वक्तव्य दिया। अधिवेशन की अध्यक्षता गवर्नर जनरल लॉर्ड विलिंगडन ने की। * 8 अप्रैल को वेंकुवर में कवि ने विशाल जनसमुदाय के समक्ष `The Principal of Literature' विषय पर भाषण दिया। उनके भाषण के प्रभाव को रेखांकित करते हुए Vancouver Sun अखबार ने लिखा था -- =`More than any other delegate to this Conference he seized their imagination. They paid him the respect due to intellect.' * 18 अप्रैल को कवि ट्रेन से लॉस एंजिलस पहुँचे। उसी दिन लॉस एंजिलस विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों के सम्मुख छोटा-सा भाषण दिया। * 10 मई को कवि योकोहामा, जापान गए। अगले दिन टोक्यो गए और इम्पीरियल होटल में रूके। वहाँ टैगोर सोसाइटी ने उनका अभिवादन किया। वहाँ पर कवि का एक व्याख्यान रखा गया। * 13 मई, वुमंस कॉलेज में व्याख्यान।*15 मई, इंडो-जापान एसोसिएशन में व्याख्यान। * 16 मई, मित्सुदा स्कूल में व्याख्यान। * 17 मई, मिटो में व्याख्यान। * 26 जून कवि सिंगापुर पहुँचे और 8 जुलाई को शांतिनिकेतन वापस आ गए। * नवंबर माह से कवि चित्रकारी को गंभीरता से लेने लगे।

(75) 1930 -जनवरी माह में कवि लखनऊ, कानपुर और आगरा गए। वहाँ से अहमदाबाद। वहाँ उन्हें फिर से एन्फ्लूएंजा हो गया। 27 जनवरी को कवि ने बड़ौदा में भाषण दिया। शीर्षक था --`Man the Artist'. * 30 जनवरी को कवि ने टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, बड़ौदा में व्याख्यान दिया। * 5 फरवरी को वे शांतिनिकेतन लौट आए। * 2 मार्च को यूरोप के लिए रवाना हुए। साथ में रथीन्द्रनाथ, प्रतिमा देवी और उनकी बेटी, डॉ.सुह्रद चौधुरी और कवि के सचिव भी थे। * 26 मार्च को फ्रांस पहुँचे। वहाँ वे अल्बर्ट काह्न के मेहमान बनकर रहे। चित्रकारी पूरे जोरों से चलती रही। *2 मई को पेरिस के पिगॉल गैलरी में, कवि द्वारा बनाए गए 125 चित्रों की, प्रदर्शनी आरंभ हुई। यह प्रदर्शनी आन्द्रे कारपेल्स, विक्टोरिया ओकाम्पो और काउंटेस डे नोएल्स की मदद से आयोजित हुई थी। * 11 मई को कवि लंदन चले गए। * 13 मई को कवि बर्मिंघम में थे। कवि अमिय चक्रवर्ती और उनकी पत्नी हैमन्ती देवी ने कवि से मुलाकात की। रवीन्द्रनाथ ने वहाँ एक व्याख्यान दिया। विषय था -- 'सभ्यता और विकास'। * 19 मई को रवीन्द्रनाथ ने मैनचेस्टर कॉलेज, ऑक्सफोर्ड में अपना पहला हिबर्ट व्याख्यान दिया। इसके बाद 21 और 26 मई को उन्होंने अपने दो और व्याख्यान दिए। मैनचेस्टर गार्डियन ने अपनी रिपोर्ट में लिखा --`No series of the Hibbert Lecture has aroused more public interest than the present one'. * 25 मई को कवि ने चैपल ऑफ मैनचेस्टर कॉलेज में 'रात और सुबह' शीर्षक से एक व्याख्यान दिया। * 27 मई को कवि वुडब्रुक, बर्मिंघम आए तथा एक और व्याख्यान दिया। * 6 जून को वुडब्रुक बर्मिंघम की सिटी आर्ट गैलरी में कवि की अनुपस्थिति में उनके चित्रों की एक प्रदर्शनी लगाई गई। इसी महीने इंडिया सोसाइटी लंदन में कवि के चित्र प्रदर्शित किए गए। *11 जुलाई को वे बर्लिन पहुँचे। * 14 जुलाई को कवि महान वैज्ञानिक अलबर्ट आइंस्टाइन से कापुथ में उनके घर पर मिले। * 16 जुलाई को बर्लिन में गैलरी मोलर में कवि के चित्रों की एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। * जुलाई में ही आर्ट क्लब ऑफ सैक्सोनी, ड्रेसडेन, गैलरी कैसपारी म्युनिख में कवि के चित्रों की एक प्रदर्शनी लगाई गई। 24 जुलाई से 6 अगस्त तक रवीन्द्रनाथ ने फ्रैंकफर्ट, मरबर्ग और कोबेन्ज शहरों का दौरा किया और वहाँ चल रहे युवा आंदोलन के साथ अपनी सम्बद्धता व्यक्त की। * 5 अगस्त को कवि डेनमार्क के कोपेनहेगन पहुँचे। 9 अगस्त को शेलोटेनबर्ग पिक्चर गैलरी में कवि के चित्रों की एक प्रदर्शनी आयोजित की गई। * 19 अगस्त को बर्लिन लौटते हुए कवि ने आइंस्टाइन से एक बार फिर मुलाकात की। इसी दिन वे जेनेवा पहुँचे और लगभग एक महीने वहाँ रहे। अगस्त में ही जेनेवा में कवि के चित्रों की प्रदर्शनी आयोजित की गई। * 11 सितंबर को कवि मॉस्को पहुँचे। 13 तारीख को उन्होंने आर्ट गैलरी के निदेशक तथा चित्रकला के आलोचकों को अपने चित्र दिखाए। * 17 सितंबर को 'स्टेट मॉस्को म्यूजियम ऑफ न्यू वेस्टर्न आर्ट' में कवि के चित्रों की एक प्रदर्शनी लगाई गई। प्रोफेसर पेट्रोव ने उस प्रदर्शनी का उद्घाटन किया था। * 22 सितंबर को सोवियत संघ के विख्यात चिकित्सक प्रोफेसर वी. एफ. जेलेनिन ने रवीन्द्रनाथ का मेडिकल चेकअप किया और उन्हें सलाह दी कि वे अपना ज्यादा-से-ज्यादा समय ताजी हवा में बिताया करें। * 25 सितंबर को कवि ने रशिया के अत्यंत लोकप्रिय दैनिक समाचार-पत्र 'इज्वेस्तिया' के संवाददाता को एक लंबा साक्षात्कार दिया। * 28 सितंबर को कवि आइंस्टाइन से तीसरी बार मिले। * 3 अक्टूबर को कवि अमेरिका के लिए रवाना हुए और 9 तारीख को न्यूयॉर्क पहुँचे। *31 अक्टूबर को 'वुमन इंटरनेशन लीग फॉर पीस एंड फ्रीडम' के एक शिष्टमंडल ने कवि से भेंट की। अक्टूबर माह में ही डोनाल्ड रिचर्ड्स गैलरी तथा म्यूजियम ऑफ फाइन आर्ट्स, बोस्टन में कवि के चित्रों की प्रदर्शनी आयोजित की गई। * 20 नवंबर को 56th street galleries में कवि के चित्रों की प्रदर्शनी लगाई गई। * 29 नवंबर को कवि वॉशिंगटन डी.सी. गए तथा अमेरिका के 31वें राष्ट्रपति हर्बर्ट हूवर से मुलाकात की। `The Discussion Guild' और `The Indian Society of America' ने कॉर्नेगी हॉल में कवि का अभिनंदन किया। इस सभा में कवि ने शिक्षा की समस्याओं पर व्याख्यान दिया। उस दिन सभा में हेलेन केलर भी मौजूद थीं। * 8 दिसंबर को बहाई समुदाय के आयोजन में कवि ने `The First and Last Prophet of Persia' विषय पर व्याख्यान दिया। इसी दिन कवि और हेलेन केलर की मुलाकात हुई। * दिसंबर माह में ही न्यूमैन गैलरीज, फिलाडेल्फिया में कवि के चित्रों की प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। 18 दिसंबर को कवि अमेरिका से इंग्लैण्ड के लिए रवाना हो गए और 22 दिसंबर को इंग्लैण्ड पहुँचे। * (76) 1931- 8 जनवरी को हाइड पार्क होटल में कवि की मुलाकात जॉर्ज बर्नार्ड शॉ से हुई। उन दोनों के बीच काफी लंबी चर्चा भी हुई। * 31 जनवरी को कवि कोलकाता लौट आए। इसी माह में टाउन हॉल कोलकाता में कवि के चित्रों की प्रदर्शनी आयोजित की गई। * मई महीने में कवि दार्जिलिंग गए और लगभग एक महीने तक वहाँ रहे। इसी माह कवि काजी नजरूल इसलाम, मनमथ रॉय और सर यदुनाथ सरकार से मिले। 17 जुलाई को कवि डॉ. हाशिम अमीर अली के साथ भोपाल गए तथा शांतिनिकेतन के लिए धन संग्रह किया। इसी यात्रा के दौरान वे नंदलाल बोस के साथ साँची भी गए। 24 जुलाई को वे शांतिनिकेतन लौट गए। * 31 दिसंबर को कोलकाता विश्वविद्यालय के सीनेट हॉल में कवि का अभिनंदन किया गया।

(77) 1932 - 20 फरवरी को भारत में पहली बार कवि के चित्रों की प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। यह प्रदर्शनी गवर्नमेंट आर्ट स्कूल, कोलकाता में आयोजित हुई। * 5 अप्रैल को हिन्दुस्तान म्यूजिकल प्रॉडक्ट के चण्डीचरण साहा के तत्वावधान में कोलकाता में कवि की आवाज में उनके गीत और कविताओं की रिकॉर्डिंग की गई। * 12 अप्रैल को कवि हवाई जहाज से ईरान के लिए रवाना हुए। ईरान के सुलतान रजा शाह पहलवी के आमंत्रण पर कवि वहाँ गए थे। * 16 अप्रैल को कवि शिराज पहुँचे जहाँ विशाल जनसमूह ने उनका स्वागत किया। महान ईरानी कवि हाफिज और सादी की मजार पर जाकर कवि ने श्रद्धांजलि अर्पित की। * 29 अप्रैल को तेहरान में कवि का भव्य स्वागत हुआ। एक अखबार ने लिखा --॒जीम हतमंजमेज जंतें पदपदह पद जीम मेंजमतद लश्ण 2 मई कवि की मुलाकात ईरान के सुलतान रजा शाह पहलवी से हुई। 15 मई को कवि ईरान से इराक के लिए रवाना हुए। * 18 मई को बगदाद रेलवे स्टेशन पर कवि का भव्य स्वागत किया गया। इसी माह कवि की मुलाकात किंग फैजल से हुई। जून में कवि शांतिनिकेतन लौट आए। * 20 सितंबर को 'कम्यूनल अवॉर्ड बिल' के विरोध में गाँधी जी ने पूना जेल में आमरण अनशन आरंभ किया। रवीन्द्रनाथ ने अपने पत्र में गाँधी जी के इस कदम की सराहना की। * चिंतित रवीन्द्रनाथ 26 सितंबर को पूना जा पहुँचे। ब्रिटिश सरकार को भारतीयों के प्रतिवाद के समक्ष झुकना पड़ा। पूना समझौता भारतीयों के पक्ष में सम्पन्न हुआ। गाँधी जी ने अपना अनशन तोड़ दिया। इस अवसर पर रवीन्द्रनाथ ने अपना प्रसिद्ध गीत गाया। गीत के बोल थे -- जीवन जब सूखने लगे / तब तुम करूणा की धारा की तरह आओ ... * अक्टूबर माह में कवि ने कोचीन के राजा को पत्र लिखकर आग्रह किया कि वे अपने राज्य से अछूत-समस्या को पूरी तरह से मिटाने का उद्यम करें। * 2 दिसंबर को पंडित मदनमोहन मालवीय शांतिनिकेतन पधारे। वहाँ उनका भव्य स्वागत किया गया।

(78) 1933 - जनवरी माह में रवीन्द्रनाथ ने कोलकाता विश्वविद्यालय में 'कमला वक्तृता' के अंतर्गत 16, 18 और 20 तारीख को अपने भाषण * 12 जुलाई विश्वविख्यात नर्तक एवं कोरियोग्राफर उदयशंकर शांतिनिकेतन आए और कवि के सम्मुख नृत्य की प्रस्तुति दी। 16 सितंबर को कोलकाता विश्वविद्यालय में कवि ने 'छंद' विषय पर व्याख्यान दिया। * 23 नवंबर को सरोजिनी नायडू ने मुंबई में रवीन्द्र सप्ताह मनाने का निश्चय किया। इस अवसर पर रवीन्द्रनाथ 45 लोगों के साथ मुंबई पहुँचे। इस दल में शांतिनिकेतन के विद्यार्थी भी शामिल थे। विक्टोरिया टर्मिनस पर इन सबका भव्य स्वागत किया गया। बॉम्बे विश्वविद्यालय के उपकुलपति ने कवि के सम्मान में रात्रिभोज का आयोजन किया। * 26 नवंबर को कवि ने रीगल थियेटर में `Challenge of Judgment' विषय पर भाषण दिया।* 29 नवंबर को पर्शियन यूथ एसोसियेशन द्वारा अतिया बेगम के गार्डन पैलेस में कवि का अभिनंदन किया गया। विश्वभारती के लिए 65000 रूपये एकत्र हुए। * नवंबर माह में टाउन हॉल मुम्बई में कवि के चित्रों की प्रदर्शनी आयोजित हुई। * कवि दिसंबर में विशाखापटनम पहुँचे। आंध्र विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर प्रोफेसर राधा.ष्णन ने कवि का स्वागत किया। 8, 9 और 10 दिसंबर को विशाखापटनम में कवि ने 'सर कृष्णस्वामी अय्यर व्याख्यानमाला' के अंतर्गत तीन व्याख्यान दिए। * 12 दिसंबर को कवि हैदराबाद गए। वहाँ उस्मानिया विश्वविद्यालय द्वारा दिए गए भोज में उन्होंने व्याख्यान दिया। कवि निजाम से भी मिले, जिन्होंने पहले विश्वभारती में इस्लाम संस्.ति के अध्ययन की व्यवस्था के लिए 1 लाख रूपये दान किए थे। दिसंबर में ही कवि कोलकाता लौट आए।

(79) 1934 - 5 जनवरी को सरोजिनी नायडू शांतिनिकेतन आईं। कवि ने उनका गर्मजोशी से स्वागत किया। सरोजिनी नायडू ने शाम के समय

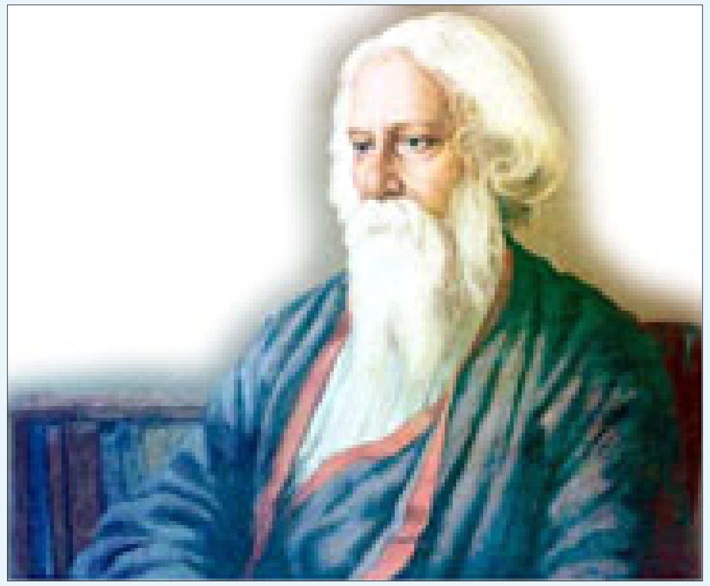

विद्यार्थियों को संबोधित किया। * 15 जनवरी को बिहार में भूकंप ने भयंकर तबाही मचाई। * 19 जनवरी को जवाहरलाल और कमला नेहरू शांतिनिकेतन में अपनी बेटी इंदिरा से मिलने आए। इंदिरा उस समय वहाँ पढ़रही थीं। जवाहरलाल और कमला नेहरू के के सम्मान में एक सार्वजनिक भव्य आयोजन किया गया। * 23 जनवरी को रवीन्द्रनाथ ने इंग्लैण्ड में एण्ड्रयूज को सूचना भेजी कि वे बिहार के भूकंप पीड़ितों के लिए धन एकत्र करें। इसके साथ ही कवि ने भारत तक तथा विदेशों के समाचार पत्रों के माध्यम से बिहार के भूकंप पीड़ितों की मदद के लिए अपील की। फरवरी में महात्मा गाँधी ने कहा कि देश भर में चल रही अछूतप्रथा की वजह से यह भूकंप आया है। गाँधी जी के इस कथन का रवीन्द्रनाथ ने विरोध किया और महात्मा गाँधी को अपने विरोध से अवगत कराते हुए चिट्ठी लिखी। उन्होंने अखबारों के जरिये भी अपना विरोध दर्ज कराया। * 8 फरवरी को कोलकाता विश्वविद्यालय में 'साहित्यतत्व' विषय पर व्याख्यान दिया। * 9 मई को कवि कोलंबो गए। 10 मई को कोलंबो के रोटरी क्लब में कवि ने सभा को संबोधित किया। रेडियो सीलोन ने उनके भाषण का प्रसारण किया। * 14 मई को कोलंबो आर्ट गैलरी में शांतिनिकेतन में निर्मित कलात्मक वस्तुओं की एक प्रदर्शनी लगाई गई। इसमें कवि के चित्र भी शामिल थे। 28 जून को कवि शांतिनिकेतन लौट आए। * 31 अगस्त को सीमांत गाँधी खान अब्दुल गफ्फार खान शांतिनिकेतन में पढ़ रहे अपने बेटे से मिलने कला-भवन आए।* 26 अक्टूबर को मद्रास के कांग्रेस हाउस में रवीन्द्रनाथ और शांतिनिकेतन स्कूल ऑफ के अन्य कलाकारों के चित्रों की प्रदर्शनी आयोजित की गई। * 5 नवंबर को कवि ने आंध्र विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों को संबोधित किया।

(80) 1935 - 8 फरवरी को रवीन्द्रनाथ ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में भाषण दिया। विश्वविद्यालय ने उन्हें डी. लिट. की उपाधि से नवाजा। * 12 फरवरी को कवि ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सीनेट हॉल में विद्यार्थियों को संबोधित किया। * 15 और 17 फरवरी को कवि ने लाहौर में आयोजित पंजाबी विद्यार्थियों के वार्षिक अधिवेशन को संबोधित किया। * 1 और 2 मार्च को कवि ने लखनऊ विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों को संबोधित किया। * 12 मई को कोलकाता में एक आयोजन में बंगीय साहित्य परिषद ने कवि को सम्मानित किया।

(81) 1936 - मार्च में कवि ने अपने दल के साथ जाकर उ ार भारत में

नाटक 'चित्रांगदा' का मंचन किया। 16-17 मार्च को पटना, 19 मार्च को इलाहाबाद और 22-23 मार्च को लाहौर में इस नाटक का मंचन किया गया। * 21 से 24 मार्च तक कवि लाहौर में रहे थे। उस समय लाहौर से बाहर जाते हुए कवि अल्लामा इकबाल ने कौतुकवश कहा था कि एक शहर में एक ही समय में दो कवि नहीं रह सकते। इसी माह गाँधीजी ने जी. डी. बिड़ला से कहकर कवि को 60000 रूपये का चेक दिलवाया ताकि विश्वभारती के आर्थिक संकट को कम किया जा सके। * 29 जुलाई को ढाका विश्वविद्यालय ने कवि डी. लिट. की मानद उपाधि प्रदान की। * नवंबर माह में कांग्रेस अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू कवि से मिलने एक दिन के लिए शांतिनिकेतन आए।

(82) 1937- 17 फरवरी को कोलकाता विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में वक्तव्य दिया। ऐसा पहली बार हुआ कि दीक्षांत भाषण बँगला भाषा में दिया गया और यह भी कि किसी अनधि.त व्यक्ति ने भाषण दिया था। * 18 फरवरी को हिन्दी साहित्य से लगाव रखने वाले रामबहादुर चोखानी, सीताराम सेकसरिया और भगीरथ कनोरिया ने कवि को राजस्थान का प्राचीन साहित्य भेंट किया और हिन्दी भवन की स्थापना की सलाह दी और इस काम के लिए धन एकत्र करने का आश्वासन भी दिया। * सौमेन्द्रनाथ ठाकुर के उद्यम और रवीन्द्रनाथ की अध्यक्षता में फासिज्म और युद्ध के विरोध में एक लीग की स्थापना की गई। इसमें अन्य सदस्यों के रूप में जवाहरलाल नेहरू, जयप्रकाश नारायण और डांगे आदि शामिल थे। * जुलाई में कोलकाता के सिटी कॉलेज के शिक्षकों एवं विद्यार्थियों ने महान अमेरिकी कवि वॉल्ट ह्विटमैन की याद में एक सभा आयोजित की, जिसमें रवीन्द्रनाथ ने शिरकत की और ह्विटमैन की प्रशंसा में एक लेख लिखा। * 2 अगस्त को कोलकाता में टाउन हॉल में एक विराट जनसभा का आयोजन किया गया। सभा की अध्यक्षता रवीन्द्रनाथ ने की थी। यह सभा यह बताने के लिए की गई थी कि सेलुलर जेल में राजनैतिक बंदियों और आमरण अनशन करने वाले सेनानियों के साथ जो अमानवीय बर्ताव सरकार कर रही है, देश उसका विरोध करता है। अंदमान में बंदी रूप में रह रहे सेनानियों को यह संदेश भेजा गया कि देश हर पल उनके साथ है।

सितंबर में एक दिन रवीन्द्रनाथ शांतिनिकेतन वाले घर में अचानक बेहोश हो गए। वे दो दिन तक बुरी तरह से बीमार रहे। कोलकाता से डॉक्टर नीलरतन सरकार को बुलाया गया। इलाज के बाद कवि स्वस्थ हुए। अक्टूबर माह में कांग्रेस के दिग्गज नेता जैसे कि जवाहरलाल नेहरू, आचार्य .पलानी, सरोजिनी नायडू और सुभाषचंद्र बोस कवि से मिलने पहुँचे। * 26 अक्टूबर, वंदेमातरम को लेकर उन दिनों हिन्दू और मुसलमानों के बीच साम्प्रदायिक तनाव का वातावरण तैयार किया जा रहा था। कांग्रेस वर्किंग कमिटी ने पशोपेश में थी कि क्या इस गीत को राष्ट्रगीत के रूप में अपनाया जाए या नहीं। जब रवीन्द्रनाथ से राय ली गई तो उन्होंने कांग्रेस अध्यक्ष को चिट्ठी लिखकर अपना मत प्रकट कर दिया। कांग्रेस कवि की राय से सहमत हो गई और वंदेमातरम के स्थायी और पहले अंतरे को राष्ट्रगीत के रूप में स्वी.ति प्रदान कर दी गई। * नवंबर माह में गाँधी जी और रवीन्द्रनाथ के प्रयासों को सफलता मिली और अंदमान जेल में कैद 1100 राजनैतिक तथा देश के अन्य कैदी रिहा कर दिए गए।

(83) 1938- 16 जनवरी, कवि की अनुपस्थिति में एण्ड्रयूज ने हिन्दी भवन की आधारशिला रखी। इसके लिए हलबासिया ट्रस्ट ने राशि उपलब्ध कराई थी। * 1 मार्च, उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद ने कवि को डी. लिट की मानद उपाधि से नवाजा। * 22 मार्च, कवि कोलकाता में महात्मा गाँधी से मिले, जो शेष राजनैतिक बंदियों को छुड़वाने के सिलसिले में सरकार से बातचीत के लिए आए थे।

3 सितंबर, सर्वपल्ली राधा.ष्णन शांतिनिकेतन आए। कवि ने उनका भव्य स्वागत किया। अगले दिन राधा.ष्णन ने व्याख्यान दिया। 13 नवंबर, डॉ. मेघनाद साहा शांतिनिकेतन आए और उन्होंने व्याख्यान दिया। कवि उस व्याख्यान में उपस्थित थे। * 9 दिसंबर, लॉर्ड जेटलैण्ड ने लंदन के कॉलमैन गैलरी में कवि के चित्रों की प्रदर्शनी का उद्घाटन किया।

(84) 1939- 9 जनवरी, त्रिपुरा के महाराज वीर विक्रम किशोर माणिक्य शांतिनिकेतन आए। कवि ने स्वयं उनका स्वागत किया। महाराज ने अपने उद्बोधन में शांतिनिकेतन और त्रिपुरा के मधुर एवं आत्मीय संबंधों के विषय में विस्तार से उल्लेख किया। 21 जनवरी, महात्मा गाँधी के पक्षधरों के प्रबल विरोध के बावजूद सुभाषचंद्र बोस दूसरी बार कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। सुभाषचंद्र कवि से मिलने शांतिनिकेतन आए। उनका भव्य स्वागत किया गया। * 31 जनवरी, जवाहरलाल नेहरू शांतिनिकेतन आए और तीन दिन रहे। उन्होंने हिन्दी भवन का उद्घाटन किया। उद्घाटन समारोह में रवीन्द्रनाथ और एण्ड्रयूज भी मौजूद रहे। * 2 फरवरी, सुभाषचंद्र बोस दूसरी बार शांतिनिकेतन आए और कवि की उपस्थिति में जवाहरलाल नेहरू से चर्चा की। इसी माह में बंगीय साहित्य परिषद द्वारा कोलकाता में कवि के चित्रों की प्रदर्शनी लगाई गई। * 6 फरवरी, वरिष्ठ कांग्रेस नेता राजेन्द्र प्रसाद शांतिनिकेतन आए और वार्षिक समारोह की अध्यक्षता की। * 1 अप्रैल, कनाडा सरकार के आग्रह पर 'अवन' शीर्षक से एक कविता लिखी। इस कविता के अंग्रेजी अनुवाद का कवि ने पाठ किया। यह कविता कनाडा के ओटावा रेडियो से 29 मई को प्रसारित की गई। * मई माह में पुरी के राजा ने कवि को 'परमगुरू' की उपाधि से विभूषित किया। * 12 सितंबर से 9 नवंबर तक कवि मैत्रेयी देवी के आतिथ्य में मंग्पू में रहे। * 21 दिसंबर, चीन के ख्यात चित्रकार जू पियोन विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में शांतिनिकेतन आए।

(85) 1940- 17 फरवरी, गाँधीजी और कस्तूरबा जी शांतिनिकेतन कवि से मिलने आए। * 2 जुलाई, सुभाषचंद्र बोस कवि से मिलने शांतिनिकेतन आए। यह उन दोनों की अंतिम मुलाकात थी।

7 अगस्त, ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय ने कवि को डी. लिट की मानद उपाधि से विभूषित किया। इस सिलसिले में शांतिनिकेतन में एक विशेष दीक्षांत समारोह आयोजित किया गया। 'द टाइम्स' ने लिखा --`This is believed to be the first time that a special convocation held outside Oxford.'

(86) 1941- 13 मई, त्रिपुरा के महाराज शांतिनिकेतन आए और उन्होंने कवि को 'भारत-भास्कर' की उपाधि से विभूषित किया। 25 जुलाई, गिरते स्वास्थ्य के चलते डॉक्टरों ने कवि को ऑपरेशन करवाने की सलाह दी और उन्हें जोड़ासाँको से कोलकाता ले जाया गया। * 30 जुलाई, ऑपरेशन से कुछ देर पहले कवि ने बोलकर एक कविता नोट करवाई -- 'तोमार सृष्टिर पथ रेखेछो आकीर्ण कोरी'। यही उनकी अंतिम कविता थी। ऑपरेशन किया गया। ऑपरेशन ठीक रहा, लेकिन 3 अगस्त के बाद से उनके स्वास्थ्य में तेजी से गिरावट आने लगी। वे कोमा में चले गए और फिर 7 अगस्त 1941 को 80 वर्ष 3 माह की उम्र में कवि का देहावसान हो गया। स

प्रस्तुति - उत्पल बनर्जी, इन्दौर
मो.9425962072

चित्रों में रवीन्द्रनाथ ठाकुर

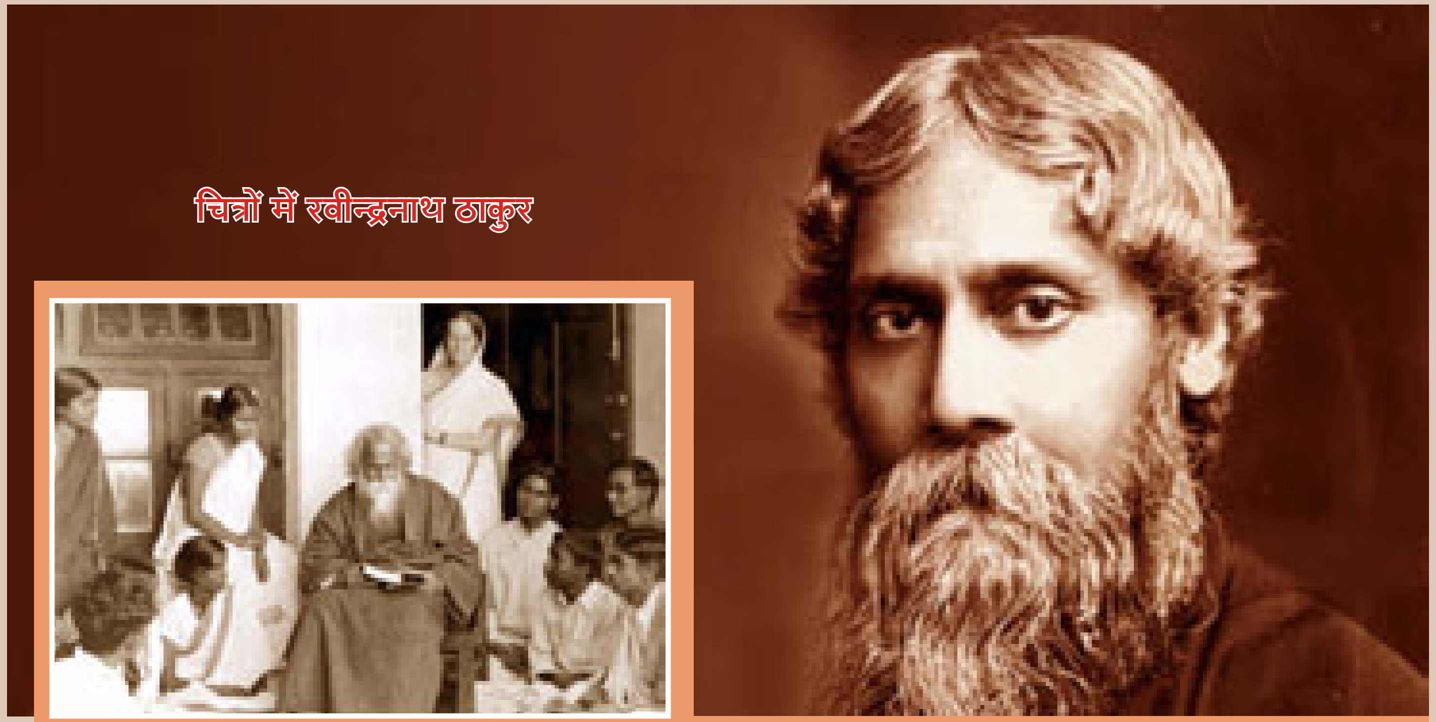

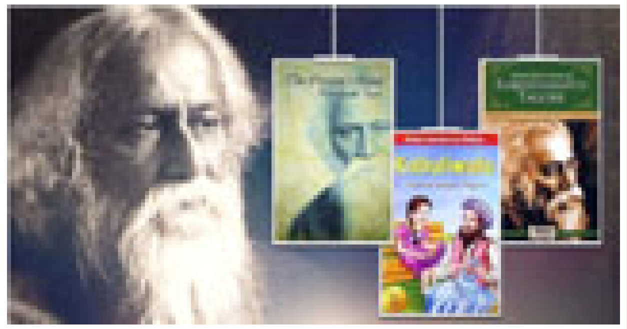

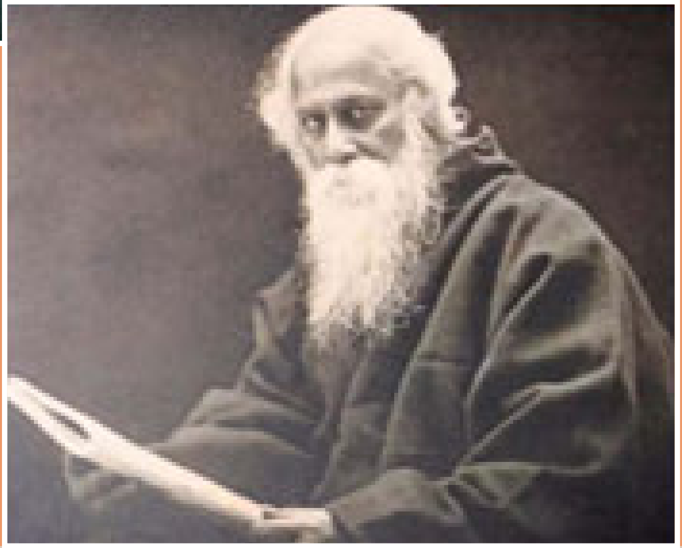

रवीन्द्रनाथ ठाकुर की पेंटिंग

रवीन्द्रनाथ ठाकुर की पेंटिंग

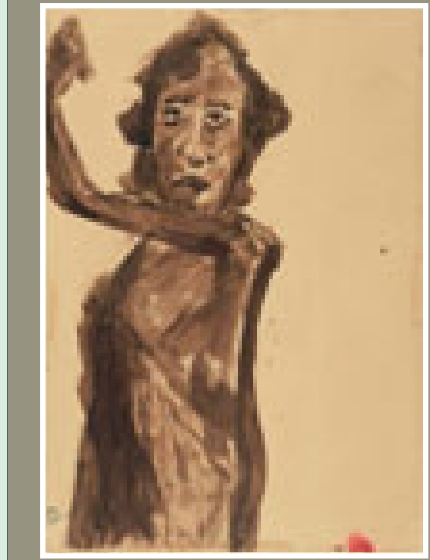

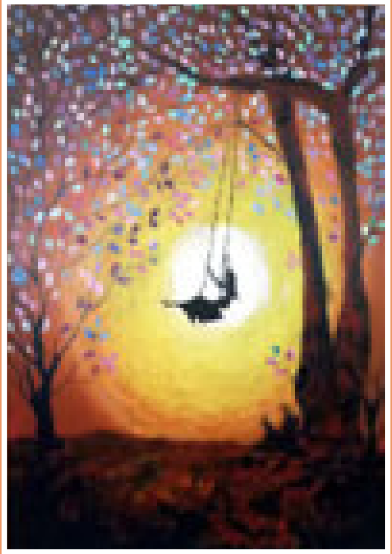

चित्र सौजन्य- नेट

रवीन्द्रनाथ टेगोर की प्रकाशित रचनाओं का विवरण

क्रम	रचना का शीर्षक	विधा	प्रकाशन वर्ष
1	कवि–काहिनी	काव्य	5 नवंबर 1878
2	वन–फूल	काव्योपन्यास	9 मार्च 1880
3	वाल्मीकि प्रतिभा	गीति–नाट्य	1881
4	भग्नहृदय	गीति–काव्य	23 जून 1881
5	रुद्रचंड	नाटिका	25 जून 1881
6	यूरोप प्रवासी के पत्र	पत्र	25 अक्टूबर 1881
7	संध्या संगीत	कविता	5 जुलाई 1882
8	काल–मृगया	गीतिनाट्य	1882
9	बहू–ठकुराइन का हाट	उपन्यास	11 जनवरी 1883
10	प्रभात संगीत	कविता	1883
11	विविध प्रसंग	प्रबंध	1883
12	छवि और गान	कविता	1884
13	प्रकृति का प्रतिशोध	नाट्यकाव्य	29 अप्रैल 1884
14	नलिनी	नाट्य	10 मई 1884
15	शैशव संगीत	कविता	29 मई 1884
16	भानुसिंह ठाकुर की पदावली	कविता	1 जुलाई 1884
17	राममोहन राय	प्रबंध	18 मार्च 1885
18	आलोचना	प्रबंध	15 अप्रैल 1885
19	रविच्छाया	गीत	1885
20	कड़ी और कोमल	कविता	17 नवंबर 1886
21	राजर्षि	उपन्यास	11 फरवरी 1887
22	चिट्ठीपत्री	पत्र	2 जुलाई 1887
23	समालोचना	प्रबंध	26 मार्च 1888
24	मायर का खेल	गीतिनाट्य	22 दिसंबर 1888
25	राजा और रानी	नाटक	1889
26	विसर्जन	नाटक	1890
27	मंत्री अभिषेक	प्रबंध	1890
28	मानसी	कविता	1890
29	यूरोप यात्री की डायरी	यात्रा–संस्मरण	1891
30	चित्रांगदा	काव्य	1892
31	गोड़ाय गलद	प्रहसन	1892
32	गीतों की किताब और वाल्मीकि प्रतिभा	गीत	1893
33	यूरोप यात्री की डायरी	यात्रा–संस्मरण	1893
34	सोनार तरी	कविता	2 जनवरी 1894
35	छोटी कहानियाँ	कहानी	1894
36	विचित्र गल्प	कहानी	5 अक्टूबर 1894
37	कथा–चतुष्टय	कहानी	5 अक्टूबर 1894
38	गल्प–दशक	कहानी	30 अगस्त 1895
39	नदी	कविता	1896
40	चित्रा	कविता	1896
41	काव्य ग्रंथावली	कविता	1896
42	बैकुंठ की कॉपी	प्रहसन	1897
43	पंचभूत	प्रबंध	12 मई 1897
44	कणिका	कविता	1899
45	कथा	कविता	1900
46	ब्रह्मोपनिषद		1900

47	कहिनी	नाट्यकाव्य और कविता	1900
48	कल्पना	कविता	1900
49	क्षणिका	कविता	26 जुलाई 1900
50	गल्पगुच्छ : पहला खंड	कहानी	1900
51	ब्रह्ममंत्र		1901
52	गल्प	कहानी	4 मार्च 1901
53	नैवेद्य	कविता	1901
54	औपनिषद ब्रह्म		1901
55	बँगला क्रियापदों की तालिका		1901
56	आँख की किरकिरी	उपन्यास	5 अप्रैल 1903
57	काव्य–ग्रंथ	कविता	1903
58	कर्मफल	कहानी	22 दिसंबर 1903
59	रवीन्द्र ग्रंथावली	ग्रंथावली	29 अगस्त 1904
60	आत्मशक्ति	प्रबंध	1905
61	स्वदेश	कविता	27 सितंबर 1905
62	बाउल	गीत	30 सितंबर 1905
63	भारतवर्ष	प्रबंध	15 फरवरी 1906
64	खेया	कविता	1906
65	नौकाडूबी	उपन्यास	2 सितंबर 1906
66	विचित्र प्रबंध	प्रबंध	1907
67	चारित्रपूजा	प्रबंध	28 मई 1907
68	प्राचीन साहित्य	आलोचना	13 जुलाई 1907
69	लोकसाहित्य	लोक साहित्य	26 जुलाई 1907
70	आधुनिक साहित्य	आलोचना	10 अक्टूबर 1907
71	साहित्य	आलोचना	11 अक्टूबर 1907
72	हास्य–कौतुक	हास्य नाटक	10 दिसंबर 1907
73	व्यंग्य कौतुक	प्रबंध एवं नाटक	28 दिसंबर 1907
74	प्रजापतिर निर्बंध		26 फरवरी 1908
75	सभापति का अभिभाषण (पाबना सम्मिलनी)	अभिभाषण	11 अप्रैल 1908
76	प्रहसन	प्रहसन	16 अप्रैल 1908
77	राजा प्रजा	प्रबंध	30 जून 1908
78	समूह	प्रबंध	25 जुलाई 1908
79	स्वदेश	प्रबंध	12 अगस्त 1908
80	समाज		7 सितंबर 1908
81	कथा और कहानी	कविता	10 सितंबर 1908
82	गान	गीत	20 सितंबर 1908
83	शारदोत्सव	नाटक	20 सितंबर 1908
84	शिक्षा	प्रबंध	17 नवंबर 1908
85	मुकुट	नाटिका	31 दिसंबर 1908
86	शब्दतत्व	भाषा मीमांसा	2 फरवरी 1909
87	धर्म	प्रबंध	25 जनवरी 1909
88	शांतिनिकेतन (8 खंड)	प्रबंध	24 जनवरी – 15 जून

89	प्रायश्चित	ऐतिहासिक नाटक	1909
90	चयनिका	कविता	1909
91	गान	गीत	1909
92	विद्यासागर चरित	प्रबंध	1909
93	शिशु	कविता	1909
94	शांतिनिकेतन (9–11 खंड)	प्रबंध	25 जनवरी – 8 अक्टूबर 1910
95	गोरा (तीन खंड)	उपन्यास	1 फरवरी 1910
96	गीतांजलि	कविता–गीत	1910
97	राजा	नाटक	1910
98	शांतिनिकेतन (12–13 खंड)	प्रबंध	24 जनवरी – 10 मई 1911
99	आठ कहानियाँ	कहानी	20 नवंबर 1911
100	डाकघर	नाटक	16 जनवरी 1912
101	धर्म का अधिकार	प्रबंध	28 फरवरी 1912
102	गल्प चारिटी 000000	कहानी	18 मार्च 1912
103	मालिनी	नाटक	23 मार्च 1912
104	चैताली	कविता	23 मार्च 1912
105	विदा अभिशाप	नाट्य–काव्य	23 मार्च 1912
106	जीवन–स्मृति	आत्मकथा	25 जुलाई 1912
107	छिन्नपत्र	पत्र–संग्रह	28 जुलाई 1912
108	अचलायतन	नाटक	2 अगस्त 1912
109	स्मरण	कविता	25 मई 1914
110	उत्सर्ग	कविता	1914
111	गीति–माला	कविता और गीत	2 जुलाई 1914
112	गान	गीत	23 सितंबर 1914
113	गीतालि	कविता और गीत	1914
114	धर्मसंगीत		27 दिसंबर 1914
115	शांतिनिकेतन (खंड–14)	प्रबंध	1915
11	काव्यग्रंथ	कविता	1915
117	शांतिनिकेतन (15, 16, 17 खंड)	प्रबंध	1916
118	फाल्गुनी	नाटक	1916
119	घरे–बाइरे	उपन्यास	1916
120	संचय	प्रबंध	1916
121	परिचय	प्रबंध	1916
122	बलाका	कविता	1916
123	चतुरंग	उपन्यास	1916
124	गल्पसप्तक	कहानी	1916
125	कर्ता की इच्छा से कर्म	प्रबंध	22 अगस्त 1917
126	गुरु	नाटक	1918
127	पलातका (फरार)	कविता	1918
128	जापान यात्री	यात्रा–संस्मरण	1919
129	अरूप रतन	नाटक	1920
130	पहला नंबर	कहानी	1920
131	शिक्षा का मिलन	प्रबंध	14 अगस्त 1921

132	ऋणशोध	नाटक	2 अक्टूबर 1921
133	मुक्तधारा	नाटक	1922
134	लिपिका	कथिका 000	1922
135	शिशु भोलानाथ	कविता	1922
136	वसन्त	गीतिनाट्य	1923
137	पूरबी	कविता	1925
138	गृहप्रवेश	नाटक	1925
139	संकलन	गद्य–पद्य संकलन	9 अगस्त 1925
140	प्रवाहिनी	गीत	
141	गीति–चर्चा	गीत	1925
142	चिरकुमार सभा	नाटक	1926
143	शोध–बोध	नाटक	19 जून 1926
144	नटी की पूजा	नाटक	15 सितंबर 1926
145	ऋतु–उत्सव	नाट्य–संग्रह	29 सितंबर 1926
146	रक्तकरबी (लाल कनेर)	नाटक	27 दिसंबर 1926
147	लेखन	हस्तलिपि में कविता	1927
148	ऋतुरंग	गीतिनाट्य	1927
149	शेष रक्षा	प्रहसन	जुलाई 1928
150	यात्री	यात्रा संस्मरण एवं पत्र	1929
151	परित्राण	नाटक	1929
152	योगायोग (संपर्क)	उपन्यास	1929
153	शेषेर कविता	उपन्यास	1929
154	तपती	नाटक	1929
155	महुआ	कविता	1929
156	भानुसिंह की पत्रावली	पत्र	1930
157	नवीन	गीतिनाट्य	1931
158	रशिया की चिट्ठी	पत्र	1931
159	वन–वाणी	कविता	1931
160	गीतवितान (2 खंड)	गीत	1931
161	संचयिता	कविता	30 दिसंबर 1931
162	शाप–मोचन	कथिका एवं गीत	1931
163	गीतवितान (खंड 3)	गीत	1932
164	परिशेष	कविता	1932
165	काल की यात्रा	नाट्य	1932
166	पुनश्च	गद्य–काव्य	1932
167	Mahatmaji and the Depressed Humanity	भाषण	दिसंबर 1932
168	विश्वविद्यालय का रूप	भाषण	1933
169	दो बहन	उपन्यास	1933
170	शिक्षा का विकिरण	भाषण	1933
171	मनुष्य का धर्म	भाषण	1933
172	विचित्रिता	कविता	1933
173	चण्डालिका	नाटिका	1933
174	ताश का देश	नाटिका	1933
175	बाँशरी	नाटक	1933
176	भारत पथिक राममोहन राय	भाषण	1933

177	मालंच	उपन्यास	1934
178	श्रावण–गाथा	गीतिनाट्य	1934
179	चार अध्याय	उपन्यास	1934
180	शांतिनिकेतन (2 खंड)	प्रबंध	1935
क्रम	रचना का शीर्षक	विधा	प्रकाशन वर्ष
181	शेष सप्तक	गद्य–काव्य	1935
182	सुर और संगति	पत्र	1 अगस्त 1935
183	वीथिका	कविता	1935
184	चित्रांगदा	नृत्यनाट्य	1936
185	पत्रपुट	गद्य–काव्य	1936
186	छन्द	प्रबंध	1936
187	जापान में — फारस में	डायरी	1936
188	श्यामली	गद्य–काव्य	1936
189	शिक्षा की धारा	प्रबंध	1936
190	साहित्य का पथ	प्रबंध	1936
191	पाश्चात्य भ्रमण	यात्रा–संस्मरण	1936
192	प्राक्तनी	अभिभाषण	1936
193	बेमेल	बच्चों के लिए कविता	1937
194	कालान्तर	प्रबंध	1937
195	वह	कहानी	1937
196	छड़ा की छवि	कविता	1937
197	विश्व–परिचय	विज्ञान–साहित्य	1937
198	प्रान्तिक	कविता	1938
199	चण्डालिका	नृत्यनाट्य	1938
200	पथ और पथ–प्रांत में	पत्रावली	1938
201	सेंझवाती	कविता	1938
202	पत्रधारा (1, 3 खंड)	पत्र–संग्रह	1938
203	बांग्लाभाषा परिचय	भाषा संबंधी चर्चा	1938
204	प्रहासिनी	कविता	1939
205	आकाश–प्रदीप	कविता	4 मई 1939
206	श्यामा	नृत्यनाट्य	1939
207	पथ का संचय	लोकशिक्षा ग्रंथमाला	1939
208	रवीन्द्र रचनावली : खंड–1	रचनावली	1939
209	प्रसाद	भाषण व लेख	20 दिसंबर 1939
210	रवीन्द्र रचनावली : खंड–2	रचनावली	1939
211	रवीन्द्र रचनावली : खंड–3	रचनावली	1940
212	नवजातक	कविता	1940
213	शहनाई	कविता	1940
214	रवीन्द्र रचनावली : खंड–4	रचनावली	1940
215	बचपन	बाल–साहित्य	1940
216	चित्रलिपि	कवि के 18 चित्रों की प्रतिलिपि	सितंबर 1940
217	रवीन्द्र रचनावली : अप्रचलित रचनाएँ खंड–1	रचनावली	1940
218	रवीन्द्र रचनावली : खंड–5	रचनावली	1940
219	तीन संगी	कहानी	1940
220	रोगशैया पर	कविता	1940
221	रवीन्द्र रचनावली : खंड–6	रचनावली	1941

222	आरोग्य	कविता	1941
223	जन्मदिन	कविता	1941
224	सभ्यता का संकट	अभिभाषण	1941
225	गल्पसल्प	बच्चों के लिए कहानियाँ	1941
226	आश्रम का रूप और विकास	प्रबंध	1941
227	रवीन्द्र रचनावली : खंड–7	रचनावली	1941

रवीन्द्रनाथ टेगोर की मृत्यु के बाद प्रकाशित रचनाएँ

क्रम	रचना का शीर्षक	विधा	प्रकाशन वर्ष
228	रवीन्द्र रचनावली : खंड–8	रचनावली	1941
229	छड़ा	बच्चों के लिए कविताएँ	1941
230	शेष लेखा (अंतिम रचनाएँ)	कविता	1941
231	रवीन्द्र रचनावली : अप्रचलित रचनाएँ खंड–2	रचनावली	1941
232	रवीन्द्र रचनावली : खंड–9	रचनावली	1941
233	रवीन्द्र रचनावली : खंड–10	रचनावली	1942
234	चिट्ठी–पत्री (खंड–1 एवं 2)	पत्र	1942
235	रवीन्द्र रचनावली : खंड–11	पत्र	1942
236	रवीन्द्र रचनावली : खंड–12	पत्र	1942
237	रवीन्द्र रचनावली : खंड–13	पत्र	1942
238	चिट्ठी–पत्री (खंड–3)	पत्र	1942
239	रवीन्द्र रचनावली : खंड–14	पत्र	1943
240	रवीन्द्र रचनावली : खंड–15	पत्र	1943
241	आत्मपरिचय	प्रबंध	1943
242	साहित्य का स्वरूप	प्रबंध	1943
243	रवीन्द्र रचनावली : खंड–16	पत्र	1943

प्रस्तुति : उत्पल बनर्जी, इन्दौर

शान्तिनिकेतन : तपोवन आश्रम और विश्वभारती

रामशंकर द्विवेदी

शान्तिनिकेतन की स्थापना महर्षि देवेन्द्रनाथ (1817-1906) ने की थी, किन्तु उसका विकास और नाना गतिविधियों का केन्द्र बनाया रवीन्द्रनाथ (1861-1941) ने। लेकिन महर्षि ने इसकी स्थापना क्यों की थी इसके पीछे बड़ी रोचक कहानी है जिसका विवरण अनेक लोगों ने अपने संस्मरणों या शान्तिनिकेतन आश्रम सम्बन्धी लेखों में दिया गया है। पहले इस बात पर आते हैं कि महर्षि ने शान्तिनिकेतन की स्थापना क्यों की। गौतम हालदार महाशय (जन्म 1946) ने प्रसिद्ध चित्रकार और रवीन्द्रनाथ के नाती असितकुमार हालदार (1890-1964) पर लिखे जीवनी ग्रन्थ 'रंगेर कवि असितकुमार' में इसकी संक्षिप्त कहानी दी है। उसका उल्लेख विस्तार में जाने के पहले करना आवश्यक है। उन्होंने लिखा है :

महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने 1863 ईस्वी में भुवनडांगा की जमीन रायपुर के जमींदार प्रतापनारायण सिंह से खरीदी थी। प्राणों का आराम, मन का आनन्द और आत्मा की शान्ति मिलने वाले स्थान में महर्षि की 1866 की ट्रस्ट डीड में ब्रह्म विद्यालय, पुस्तकालय और अतिथिशाला की स्थापना का उल्लेख था। महर्षि की इच्छानुसार शान्तिनिकेतन में एक विद्यालय स्थापित करने के काम में सबसे पहले आगे आये थे। रवीन्द्रनाथ के अनन्य प्रिय साहित्य संगी, अग्रज वीरेन्द्रनाथ के एकमात्र पुत्र तरुण बलेन्द्रनाथ ठाकुर (1870-1899)। एक निश्चित योजना के अनुसार स्थान का निर्णय और एक गृह के निर्माण तक प्रारम्भिक काम शुरू किया था बलेन्द्रनाथ ने। किन्तु उनकी असमय मृत्यु के कारण यह काम अधूरा ही रह गया। इसके बाद महर्षि के जीवनकाल में ही 1901 अंग्रेजी वर्ष के प्रारंभ में रवीन्द्रनाथ ने भुवनडांगा में ब्रह्मचर्याश्रम और विद्यालय की स्थापना कर पिता की इच्छा पूरी की थी। उस गुरुगृह जैसे आश्रम विद्यालय में मुट्ठीभर पाँच छात्रों के दल में थे कविपुत्र रथीन्द्रनाथ (1888-1961) (रंगेर कवि असितकुमार, पृष्ठ 105)।

यहाँ पर यह विचार कर लेना जरूरी है कि महर्षि देवेन्द्रनाथ ने 'प्राणों के आराम, मन के आनन्द और आत्मा की शान्ति के लिए इस स्थान को क्यों चुना और क्यों यहाँ एक आश्रम की स्थापना का संकल्प लिया। पूरी कहानी इस प्रकार है- देवेन्द्रनाथ के पिता प्रिंस द्वारिकानाथ की मृत्यु मात्र 52 वर्ष की उम्र में विलायत में हो गयी थी। उसके बाद ठाकुर परिवार का पूरा भार देवेन्द्रनाथ पर जाता है। प्रिंस द्वारिकानाथ ने जोड़ासाँको ठाकुरबाडी के साथ जो अभिजात्य, वैभव, आर्थिक समृद्धि जोड़ी थी उसके साथ देवेन्द्रनाथ ने धर्म महिमा जोड़ दी थी, आगे चलकर द्वारिकानाथ के पौत्र रवीन्द्रनाथ और दूसरी तरफ उनके प्रपौत्र अवनीन्द्रनाथ ने साहित्य और शिल्प की गरिमा उसके साथ संयुक्त कर इस घर को बंगाल के तीर्थ स्थान के रूप में परिणत कर दिया था।

देवेन्द्रनाथ के जीवन में एक ऐसी घटना घटती है जिसके कारण उनके जीवन में आमूल-चूल परिवर्तन हो गया।

1834 ईस्वी में देवेद्रनाथ की पितामही अलकादेवी की मृत्यु के समय उनके मन में जिस विचित्र भाव का उदय हुआ, उससे उनकी जीवनधारा पूरी तरह परिवर्तित हो गयी। यही पितामही उनके बाल्य और कैशोर की मुख्य आश्रय स्थल थीं, धर्मप्रवणता ने देवेन्द्रनाथ के मन को गम्भीर रूप से प्रभावित किया था। पितामही की मृत्यु के बाद तत्त्वज्ञान प्राप्त करने की इच्छा देवेन्द्रनाथ के मन में तीव्र रूप से जाग गयी थी। महाभारत और यूरोपीय दर्शनशास्त्र को पढ़कर भी उन्हें आत्मजिज्ञासा का उत्तर खोजे नहीं मिला था। इसी समय ईशावास्योपनिषद् की 'ईशावास्यमिदं सर्वम्' श्लोक अकस्मात् उनके हाथ लग गया। ब्रह्मसमाज के आचार्य रामचन्द्र विद्यावागीश की सहायता से उन्हें जब इस श्लोक का अर्थ का पता चला, तभी से उपनिषदों के प्रति उनका आग्रह उत्पन्न हो जाता है। इसी समय उन्होंने तत्त्वबोधिनी सभा की स्थापना की, बाद में इसी के साथ तत्त्वबोधिनी पाठशाला की स्थापना की जो बहुत दिनों तक चलकर बन्द हो गयी। उसके बाद राजा राममोहन के प्रभाव से उन्होंने ब्राह्म धर्म को ग्रहण कर लिया।

ब्राह्म धर्म ग्रहण करना देवेन्द्रनाथ के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटना है। इसके बाद वे हिमालय भ्रमण के लिए जाते-आते समय रायपुर के जमींदार प्रतापसिंह के यहाँ उपासना के लिए ठहरते हैं। उसका विवरण इस प्रकार है- इसी वर्ष की एक उल्लेखनीय घटना (1 मार्च 1863) देवेन्द्रनाथ ने रायपुर के जमींदार प्रतापनारायण आदि से बोलपुर के नजदीक भुवनडीगा गाँव के बाँध से लगी बीस बीघा जमीन वार्षिक 5 रुपया लगान पर मारूखी हकदार के रूप में खरीद ली। सुना जाता है कि प्रतापनारायण ने देवेन्द्रनाथ की देखरेख में कलकत्ता में रहकर पढ़ाई-लिखाई की थी और इसी समय उनके प्रति आकर्षित हो गये थे। 1854 ईस्वी में शिमला से राजनारायण वसु को देवेन्द्रनाथ ने लिखा था- ''तुम सुनकर अवश्य आह्लादित होंगे कि वीरभूमि निवासी प्रतापनाायण सिंह ब्रह्मरस का आस्वाद पाकर इसके प्रति अत्यन्त अनुरक्त हो गये हैं। हिमालय से लौटते समय देवेन्द्रनाथ दो बार रायपुर गये थे। उसी समय उन्होंने भुवनडोंगा की जो सुदूर प्रासीदी भूमि देखी, उसी की ओर उनका मन आकर्षित हो गया था। शान्तिनिकेतन के आश्रमवासी अघोरनाथ चट्टोपाध्याय ने लिखा है - रायपुर आते-जाते समय इस दिगन्तप्रसादी प्रान्तर के अपूर्व गाम्भीर्य से महर्षि का चित्त आकृष्ट हो जाता है। इस विशाल प्रान्तर में दृष्टि अबाध, अनन्त आकाश के अतिरिक्त दिग्वलय में और कुछ भी नहीं है। अनन्तस्वरूप के इस उदात्त सौन्दर्य से उनका हृदय और मन प्लावित हो गया, उन्मुक्त आकाश के नीचे यह निर्जन प्रान्तर तपस्या के लिए एकदम अनुकूल है, ऐसी धारणा उनके मन में बद्धमूल हो गयी।

रवीन्द्रनाथ ने स्वयं इस स्थान के बारे में लिखा है। बोलपुर के पास महर्षि ने सन् 1863 ईस्वी में 20 बीघा जमीन मोल लेकर एक बगीचा लगाया था। वहीं उन्होंने एक मकान बनवाया था और एक साधना भवन जिसमें बैठकर वे जगन्नियंता का चिन्तन किया करते थे। यहाँ का प्राकृतिक दृश्य बड़ा मनोरम था। थोड़ी दूर पर एक पतली-सी सरिता बहती थी और समस्त वायुमण्डल फूलों की सुगन्ध से पूर्ण रहता था।

विश्वभारती - शान्तिनिकेतन : श्री निकेतन

विश्वभारती का विधिपूर्वक उद्घाटन 22 दिसम्बर 1921 में हुआ था। इस सम्बन्ध में रवीन्द्रनाथ के जीवनीकार प्रभातकुमार मुखोपाध्याय ने लिखा है : जब रवीन्द्रनाथ की उम्र मात्र दो वर्ष थी तभी महर्षि देवेन्द्रनाथ ने रायपुर के जमींदारों से बोलपुर के निकट बीस बीघा जो जमीन खरीदी थी (1 मार्च 1863) जिसका उल्लेख पीछे किया जा चुका है। आगे चलकर यहीं पर उन्होंने एक अट्टालिका बनवा दी थी। वही 'शान्तिनिकेतन' के नाम से परिचित हो गयी थी। इसके पच्चीस वर्ष बाद (1294 बंगाब्द) देवेन्द्रनाथ ने ट्रस्ट डीड बनाकर इस अट्टालिका से लगी हुई जमीन शान्तिनिकेतन के नाम दान कर दी थी और उसके व्यय निर्वाह के लिए अपनी जमींदारी का कुछ हिस्सा उसी में लगा दिया था। ट्रस्ट डीड के अनुसार वहाँ पर किसी तरह की मूर्ति अथवा प्रतिमा या प्रतीक की पूजा नहीं हो सकती थी। किसी धर्म की निंदा, माँस-मछली, मद्य का सेवन और

जीव हिंसा वहाँ निषिद्ध थी। निन्दनीय आमोद-प्रमोद की भी वहाँ नहीं हो सकता था। इसी एकान्त स्थान में ठाकुर परिवार के लोग कभी-कभी कलकत्ते के कोलाहल से दूर समय बिताने आया करते थे। महर्षि के पुत्र बलेन्द्रनाथ यहाँ एक आश्रम विद्यालय स्थापित करना चाहते थे। रवीन्द्रनाथ उनके हर कार्य में सहयोग किया करते थे। जब रवीन्द्रनाथ शिलाइदुह में रहा करते थे तब बच्चों की शिक्षा के लिए वहाँ कोई व्यवस्था नहीं थी। जब वहाँ का निवास समाप्त कर वे कलकत्ता आए तब उन्होंने शान्तिनिकेतन में एक आश्रम विद्यालय स्थापित करने का प्रस्ताव महर्षि के सामने रखा जिसे महर्षि ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस प्रकार शान्तिनिकेतन में 1902 में आश्रम विद्यालय की प्रतिष्ठा हुई। किन्तु 28 वर्ष तक इसमें कोई खास प्रगति नहीं हुई, क्योंकि अंग्रेजी शिक्षा से दूर भारत की प्राचीन आश्रम पद्धति पर जैसा विद्यालय रवीन्द्रनाथ बनाना चाहते थे। आश्रम विद्यालय वैसा रूप धारण नहीं कर सका। रवीन्द्रनाथ सोचा करते थे -

रवीन्द्रनाथ का प्रस्ताव था कि प्राचीनकाल की तरह तपोवन में पुनः विद्याशिक्षा का केन्द्र स्थापित करना होगा, जहाँ पर विद्यार्थी गुरुगृह में वास करेंगे। यह स्थान शहर से दूर निर्जन में होगा। प्रकृति के बीच रहना छात्र जीवन के लिए आवश्यक है। ब्रह्मचर्य के पालन द्वारा जीवन संयमित और कर्मकुशल हो जाता है। नीति-उपदेशक द्वारा जीवन का निर्माण नहीं होता है, अभ्यास के द्वारा चरित्र गढ़ा जाता है। इसी के लिए वन का प्रयोजन है और गुरुगृह भी चाहिए।

विश्वभारती की परिकल्पना

1918 ईस्वी के ग्रीष्मावकाश के बाद कलकाता और झरिया प्रवासी गुजरात के अनेक छात्र आश्रम में विद्यार्थी बनकर आते हैं। शान्तिनिकेतन अपने बंगालित्व की संकीर्ण सीमा का उल्लंघन कर जो बाहर के छात्रों का आह्वान कर सका है- इस घटना ने कवि मन को खूब प्रभावित किया था। पूजावकाश के लिए विद्यालय बन्द हो जाने के पूर्व उन्होंने एक दिन ऐण्ड्रूज और रवीन्द्रनाथ से कहा, 'शान्तिनिकेतन को भारतीयों का शिक्षा केन्द्र बनाना होगा। यहाँ पर भारत के नाना प्रदेशों के छात्र आएँगे और वास्तविक भारतीय शिक्षा वे लोग ग्रहण करेंगे, विभिन्न प्रदेशों के छात्र अपने-अपने आचार-विचारों का पालन कर सकेंगे, बचपन से ही यहाँ रहकर एक राष्ट्रीय आदर्श का अभ्यास करने में सक्षम हो जाएँगे। 1916 में अमेरिका के शिकागो से उन्होंने रवीन्द्रनाथ को जो चिट्ठी लिखी उसमें इसी विचार की अभिव्यक्ति थी। पत्र में उन्होंने लिखा था : शान्तिनिकेतन विद्यालय को विश्व के साथ भारत के योगसूत्र के रूप में बनाना होगा, यहाँ पर सारी जातियों के मनुष्यत्व के अभ्यास का एक केन्द्र बनाना होगा, स्वजातीय संकीर्णता का युग अब शेष होने को आया है। भविष्य के लिए जिस विश्वजाति के महामिलन यक्ष की प्रतिष्ठा हो रही है, उसका सबसे पहला आयोजन इसी बोलपुर क्षेत्र में होगा।

7 सितम्बर 1921 को रवीन्द्रनाथ की कलकाता में गाँधी जी से भेंट हुई। उसके दूसरे ही दिन 8 सितम्बर को वे कलकत्ता से शान्तिनिकेतन चले आये। यहाँ वे 28 सितम्बर तक रहे। इसी दौरान विश्वभारती की स्थापना हुई। 1922 ईस्वी की 16 मई को विश्वभारती एक रजिस्टर्ड सोसायटी के रूप में गठित हो गयी। रवीन्द्रनाथ ने विश्वभारती को अपने बांगला ग्रंथों का सर्वाधिकार सौंप दिया और शान्तिनिकेतन में कवि की जो चल-अचल सम्पत्ति थी वह भी विश्वभारती के नाम कर दी। विश्वभारती संस्थान इस प्रकार रवीन्द्रनाथ का मानसपुत्र है, उनका मन ही इसका जनक है।

यहाँ का वातावरण गुरुदेव के समय कैसा था, यहाँ की शिक्षा पद्धति कैसी थी, छात्र यहाँ किस रूप में रहते थे, इसका विस्तृत वर्णन उमेशचन्द्र मिश्र ने अपने ग्रंथ विश्वकवि रवीन्द्रनाथ में किया है, जब बंगाल में अंग्रेजी शिक्षा का विरोधी वातावरण तैयार हुआ, तब रवीन्द्रनाथ के मस्तिष्क में भी एक ऐसे स्कूल की स्थापना का विचार आया जो उन सभी दुर्गुणों से मुक्त हो जो तत्कालीन शिक्षण संस्थाओं में पाये जाते थे और जिनके प्रति उनके मस्तिष्क में शैशव से ही घृणा के भाव पैदा हो गये थे। वे एक ऐसे आदर्श स्कूल का सपना देख रहे थे, जिसमें छात्र प्रकृति के सीधे सम्पर्क में रहकर शिक्षा प्राप्त करें। उन पर कोई बन्धन-नियंत्रण न हो। जहाँ छात्र के हृदय और मस्तिष्क का साथ-साथ विकास हो।

वहाँ पर छात्रों की जीवनचर्या इस प्रकार थी। छात्र साल भर नंगे पाँव रहा करते थे और भोजन पकाना छोड़कर शेष सब काम अपने हाथ से किया करते थे। सवेरे नित्य नियम से निवृत्त होकर सब छात्र और अध्यापक एक वृक्ष के नीचे एकत्र होकर समवेत स्वर से वैदिक मंत्रों का उच्चारण करते थे या रवीन्द्रनाथ का रचा हुआ कोई गीत गाते थे। प्रार्थना के समय सभी को रेशमी वस्त्र पहनना पड़ता था। वृक्षों की छाया में पढ़ाई होती थी। सभी खर्चा कवि अपने पास से देते थे। फीस का बाद में नियम बना जो प्रतिमास प्रति छात्र 15 रुपये था। इसी समय शान्तिनिकेतन में योग देने सतीशचन्द्र राय, मोहितचन्द्र सेन, अजितकुमार चक्रवर्ती जैसे लोग आ गये, जिनकी योग्यता, समर्पण और सेवाभाव के कारण और विश्वास उत्पन्न किया। इसी विश्वास ने उन्हें भारत के शिक्षण-सम्बन्धी पुरातन आदर्शों की ओर चलने का संदेश दिया है।

शांति निकेतन आने वाले कुछ प्रसिद्ध विदेशी विद्वान

Moriz Winternitz

Bruno Bauer

C.F. Andrews

Charles Fabri

Giuseppe Tucci

William_Winstanley_Pearson

Patric Geddes

Slella Kramrisch

Sylvain_L+¬vi

शान्तिनिकेतन के आश्रम विद्यालय की काफी उन्नति हुई। 1908 में क्षितिमोहन सेन आ गये जो आजीवन शान्तिनिकेतन में ही बने रहे। विधुशेखर भट्टाचार्य (शास्त्री) ने भी शान्तिनिकेतन में संस्कृत शिक्षा के प्रचार-प्रसार में काफी योग दिया। उन्होंने काशी से बोलपुर तक की अपनी यात्रा का बड़ा लोमहर्षक वर्णन किया है। उस समय शान्तिनिकेतन का आश्रम विद्यालय कैसा था, इसका भी उन्होंने विस्तार से चित्र खींचा है। उन्होंने लिखा है : पहली बार देखने में ही आश्रम मुझे अच्छा लगा। धीरे-धीरे उसके चारों ओर घूम-फिर कर मैं वहाँ का सारा दृश्य देखने लगा। आश्रम शाल और ताड़ वृक्षों से परिवेष्टित एक बगीचे के बीच में था। मेरे मकान के नजदीक ही विशाल अतिथि भवन था। यह एक दो तल्ला मकान था। उसके सामने लाल कंकड़ों से ढँका हुआ एक चौड़ा रास्ता था। इसके दोनों किनारों पर बड़े-बड़े आमलक वृक्षों की पंक्तियाँ थीं। इसके बाद एक बहुत बड़ा फाटक था। उसके ऊपर सुनहले अक्षरों में लिखा हुआ था- 'ऊँ तत् सत् ब्रह्म। एक मेवाद्वितीयम्।'

प्रभात हुआ। ब्रह्मचारियों का नियमित कार्य चल रहा था। थोड़ा दिन चढ़आया था। रवीन्द्रनाथ आदि कुटीर के सामने आ खड़े हुए। उनके साथ दो-एक अध्यापक भी थे जिनके नाम मुझे याद नहीं। एक आदमी ने मुझसे कहा कि गुरुदेव आपको बुला रहे हैं। मैं जल्दी से उनके पास पहुँचा। दूर से ही देखा, वे चहलकदमी कर रहे थे। कैसी उज्ज्वल मूर्ति थी। पितृ श्राद्ध के उपक्रम में उन्होंने मुण्डन कराया था, इससे उनका चेहरा और भी चमक रहा था। उन्होंने सफेद पशमीने का एक आपादलम्बित चोगा पहन रखा था। वहाँ पहुँचकर मैंने उन्हें नमस्कार किया, उन्होंने भी नमस्कार किया। प्रथम दर्शन में ही वे मुझे इतने अच्छे मालूम पड़े कि मैं उन्हें प्यार करने लगा और मुझे लगा कि उन्होंने भी मुझे स्नेहभरी निगाह से देखा है।

आ. क्षितिमोहन सेन के संस्मरणों में शान्तिनिकेतन का और भी सजीव चित्र मिलता है। उन्होंने लिखा है: ''शान्तिनिकेतन की स्थापना तो महाकवि द्वारा 7 वर्ष पूर्व ही हो चुकी थी पर मैं, वहाँ अध्यापक बनकर जुलाई 1908 में गया। जब मैं बोलपुर स्टेशन पहुँचा रात हो चुकी थी और मूसलाधार पानी गिर रहा था। सवारी के लिए केवल बैलगाड़ियाँ उन दिनों मिलती थीं। जैसे-तैसे वह रात मैंने स्टेशन पर ही बितायी और दूसरे दिन तड़के ही पैदल शान्तिनिकेतन की ओर चल दिया। बोलपुर उन दिनों छोटी-सी बस्ती थी, मैं कुछ ही दूर पहुँचा था कि प्रातसमीरण में प्रवाहित संगीत की लहरें मेरे कानों में पड़ी। कवि अपनी कुटी 'देहली' के छज्जे पर बैठे हुए अपने मधुर गीतों द्वारा उदयोन्मुख सूर्य का स्वागत कर रहे थे। उन दिनों उनका कण्ठ गजब का सुरीला था और प्रभात के शान्त वातावरण में उनका गीत एक मील की दूरी से। साफ-साफ सुनायी देता था। उस सुरीली आवाज की स्मृति, जिसने मेरा इस प्रकार अभिनन्दन किया कि आज भी मेरे हृदय में वैसी ही ताजी है।

क्षितिमोहन सेन ने अपने निबन्ध 'रवीन्द्रनाथ और उनका आश्रम' में लिखा है : आश्रम उन दिनों छोटा-सा था। कुछ झोपड़ियाँ थीं। छात्र और अध्यापक साथ-साथ में रहते थे। केवल एक कुटी अलग थी जिसमें स्व. जगदानन्द राय अपने बच्चों के साथ रहते थे। हम लोग सब मिलकर संख्या में पचास थे, सब एक ही भोजनालय में भोजन करते थे। अपने साथियों सहकारियों में दो पुराने सहसाथियों श्री विधुशेखर भट्टाचार्य और श्री भूपेन्द्रनाथ सान्याल को पाकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। जब हम लोग बनारस में थे, इन दोनों ने मेरा नाम 'ठाकुरदादा' रख छोड़ा था, जिसका भेद मुझे यहाँ आने पर मालूम हुआ।

'देहली' जो कवि की कुटी का नाम था, एक छोटी-सी इमारत थी। मुझे आश्चर्य हुआ कि कवि इतने छोटे मकान में क्यों रहते हैं। पीछे से मेरी समझ में आया कि वे केवल किसी वस्त्र के छोटे या शान-शौकत से रहित होने के कारण ही उसे घृणा नहीं करते हैं। उनके इसी गुण ने उन्हें बच्चों से प्रेम करना सिखाया और उनके मन में इस छोटे-से आश्रम के संचालन के लिए कवि के हृदय में उत्साह और विश्वास उत्पन्न किया। इसी विश्वास ने उन्हें भारत के शिक्षण-सम्बन्धी पुरातन आदर्शों की ओर चलने का संदेश दिया है।

विधुशेखर भट्टाचार्य के अतिरिक्त यहाँ जगदानन्द राय, हरिचरण बंद्योपाध्याय (बंगीय शब्दकोश के रचयिता- लेखक) और अजितकुमार चकवर्ती वे तीन शिक्षक और थे। चक्रवर्ती जी अनोखे मेधावी थे। मेरे एक वर्ष बाद नेपालचन्द्र राय भी आ गये थे, जो करना तो वकालत चाहते थे, पर कुछ दिनों के लिए आश्रम में आ गये थे। पर उनका यह कुछ दिनों 25 वर्ष तक रहा। सन् 1912 में बंगाल सरकार की शान्तिनिकेतन पर कोप दृष्टि हुई। उसने एक गोपनीय सरकुलर सरकारी नौकरों के पास भेजा जिसमें लिखा था कि शान्तिनिकेतन के विद्यालय में सरकारी नौकर अपने लड़के पढ़ने के लिए न रखे। इससे बहुत-से सरकारी नौकरों के लड़के आश्रम से चले भी गये। इन्हीं दिनों एक अमेरिकन वकील मायरन एच. फेल्पस शान्तिनिकेतन देखने आए और इसके ऊपर उन्होंने समाचार पत्रों में एक प्रशंसापूर्ण विज्ञप्ति छपाई। एक विदेशवासी की इस गुण ग्राहकता से रवीन्द्रनाथ के मन पर बहुत प्रभाव पड़ा और उन्होंने शान्तिनिकेतन का परिचय योरपवासियों को देने के लिए योरप-यात्रा का निश्चय कर लिया। यह यात्रा सन् 1913 में हुई, विदेशों में पहुँचकर कवि को अनुभव हुआ कि शान्तिनिकेतन के द्वार अब बाहरी विद्यार्थियों के लिए खोल देना आवश्यक है। एक पत्र में उन्होंने लिखा था-

''यदि हम अपने आश्रम को विश्व के प्रकाश में रखकर देखें तो हमारी सारी अनिश्चितता दूर हो जाएगी। यदि हम अपनी संस्था को देश और काल की सीमाओं से घिरा रखेंगे तो उसकी सारी पवित्रता नष्ट हो जायगी। हमारा ध्येय पूर्ण मानवता का विकास है। अतः हमें अपना लक्ष्य इसके नीचे नहीं स्थापित करना चाहिए।''

क्षितिमोहन सेन ने लिखा है : इन्हीं दिनों दीनबन्धु सी.एफ. एण्ड्रूज और पियर्सन साहब ने अपनी सेवाएँ शान्तिनिकेतन के लिए समर्पित कीं। सन् 1914 में कवि के साथ ये दोनों महान् पुरुष भारत आये। इनका आगमन शान्तिनिकेतन के लिए बड़े महत्त्व का प्रमाणित हुआ। सन् 1916 में कवि ने जापान और अमेरिका का भ्रमण किया। वहाँ से लौटकर उन्होंने 22 दिसम्बर 1918 को शान्तिनिकेतन में छात्रों और अध्यापकों की एक सभा की। इस सभा में उन्होंने शान्तिनिकेतन को एक नया रूप देने की योजना सबको समझाई। इसी समय कवि ने इसका नाम 'विश्वभारती' रखा जिसकी स्थापना आदि के अनुष्ठान का उल्लेख पीछे किया जा चुका है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस संस्था के लिए एक वैदिक मंत्र की खोज विधुशेखर भट्टाचार्य ने की। वह मंत्र है : 'यत्र विश्वम्भवत्येकनीडम्' जहाँ पूरा विश्व एक घोंसले जैसा हो जाय। यह आज तक विश्वभारती के साथ जुड़कर उसके मंतव्य को प्रकाशित कर रहा है।

सन् 1919 में इन्हीं विधुशेखर भट्टाचार्य की अध्यक्षता में विश्वभारती में विद्याभवन का कार्य चला और बौद्ध साहित्य, वैदिक और प्राचीन संस्कृत, पाली, प्राकृत, तिब्बतियन और चीनी भाषाओं के ग्रंथों का अनुशीलन आरम्भ हुआ। आचार्य क्षितिमोहन सेन शास्त्री महोदय के सहायक के रूप में नियुक्त किये गये।

कला और संगीत का रवीन्द्रनाथ की शिक्षा-प्रणाली में आरम्भ से ही प्रमुख स्थान रहा है। सन् 1918 में विश्वभारती में कला और संगीत का विभाग भी खुल गया। श्री नन्दलाल बसु इसके अध्यक्ष नियुक्त हुए जिनके कारण यह विभाग विदेशों में प्रख्यात हो गया और दूर-दूर क्षेत्रों के छात्र पूर्वी चित्रकला तथा संगीत सीखने यहाँ आने लगे।

1920-21 में रवीन्द्रनाथ यूरोप के कई देशों और अमेरिका भ्रमण के लिए गये थे। वहाँ पर उन्होंने 'पूर्व और पश्चिम' विषय पर अनेक भाषण दिये थे। इन भाषणों को सुनकर एक नवयुवक जिनका नाम श्रीयुत् एल.के.एमहर्स्ट था, बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने कवि से मिलकर इच्छा प्रकट की थी कि यदि शान्तिनिकेतन के निकट ही ग्रामोद्धार के लिए कोई केन्द्र स्थापित किया जाए तो वे उसमें सक्रिय सहयोग देने को तैयार हैं। उनका विश्वास था कि सभ्यता का पूर्ण संतुलन शहरों

और गाँवों में संगति स्थापित होने पर ही रह सकता है। कवि एमहर्स्ट अएव के विचार से पूर्ण सहमत थे। सन् 1915 में कवि ने शान्तिनिकेतन के पास सुरूल गाँव में कुछ भूमि मोल ली थी और वहाँ कृषि, पशुपालन तथा वहाँ ग्राम-सुधार के प्रयोग आरम्भ कर दिये। एमहर्स्ट साहब के सहयोग ने इस संस्था में नवजीवन डाल दिया और उनकी अध्यक्षता में इसका काम जोरों से चल निकला। एमहर्स्ट साहब की पत्नी ने इस आश्रम के लिए पचास हजार रुपये की वार्षिक सहायता प्रदान की। इस संस्था का नाम 'श्रीनिकेतन' रखा गया। ग्राम सुधार और आधुनिक, साधनों से कृषि करने की ग्रामीणों को शिक्षा देना तथा उनका भाँति-भाँति की दस्तकारियाँ सिखाकर उनकी आय बढ़ाना और इस प्रकार ग्रामोद्योग को प्रोत्साहन देना 'श्रीनिकेतन' का मुख्य उद्देश्य था। श्रीनिकेतन में बुनाई, सिलाई, ट्रेनिंग, चमड़े का काम, बर्तनों का काम आदि की जिनकी देहाती जीवन के लिए आवश्यकता पड़ती है, शिक्षा दी जाती थी।

सन् 1921 में विश्वभारती का विधिवत् उद्घाटन हुआ, जिसका उल्लेख पीछे किया जा चुका है। 1921में ही यहाँ छात्राओं के लिए एक सुन्दर बोर्डिंग हाउस नारीभवन के नाम से निर्मित हो गया।

विश्वभारती की स्थापना के बाद उसका काम उत्तरोत्तर बढ़ने लगा। कवि का आमंत्रण पाकर बाहर के प्रतिष्ठित विद्वान् शान्तिनिकेतन आकर छात्रों को पढ़ाने लगे, इन विद्वानों में पेरिस के सिल्वाँ लेवी, चेकोस्लोवाकिया के प्रोफेसर विंटरनीज, नार्वे के प्रोफेसर स्टेनकोवी, इटली के प्रोफेसर कार्लोफारनिसी और जी. तुस्सी और हंगरी के जर्मेनस, ईरान के आगा पुरेदाऊद आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है। कलाभवन और श्रीनिकेतन की भी काफी उन्नति हुई।

शान्तिनिकेतन की स्थापना करते समय रवीन्द्रनाथ की आयु 40 वर्ष थी। 41 वर्ष के निरन्तर परिश्रम से शान्तिनिकेतन एक विख्यात संस्था बन गयी।

हिन्दी की दृष्टि से अगर विचार किया जाए तो बनारसीदास चतुर्वेदी के प्रयास से वहाँ हिन्दी भवन की स्थापना हुई। जिसके पहले अध्यक्ष हजारीप्रसाद द्विवेदी बने। उन्होंने शान्तिनिकेतन के संस्मरण लिखते हुए कहा है :

देश में ऐसे सैकड़ों विश्वविद्यालय हैं जहाँ अध्यापक विद्यार्थियों को अनेक प्रकार की जानकारियाँ दिया करते हैं। शान्तिनिकेतन उनसे भिन्न है, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार रामचरितमानस सैकड़ों पौराणिक कहानियों से भिन्न है। शान्तिनिकेतन कविवर रवीन्द्रनाथ के काव्यों की भाँति ही निपुण भाव से निबद्ध और सुचिन्तित योजना पर आधारित है।

शान्तिनिकेतन की स्थापना के कुछ ही दिन बाद उन्होंने अपने एक अध्यापक मित्र को लिखा था कि बालकों के अध्ययन का काल व्रत-पालन का काल है। मनुष्यत्व की प्राप्ति स्वार्थ नहीं, परमार्थ है। यह बात हमारे पितृ-पितामहों को मालूम थी। इस मनुष्यत्व की प्राप्ति की आधारभूत शिक्षा को वे ब्रह्मचर्य व्रत कहते थे। यह व्रत केवल पढ़ाई सीख लेने और परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाने का नाम नहीं है। संयम से, भक्ति-श्रद्धा से, शुचिता से और एकाग्रनिष्ठा से संसार के लिए और संसार से परब्रह्म के साथ अनन्त योग-साधना के लिए प्रस्तुत होने की साधना को ही ब्रह्मचर्य व्रत कहते हैं। यह एक धर्मव्रत है। दुनिया में बहुत-सी चीजें खरीद-बिक्री की सामग्री है, किन्तु धर्म इससे भिन्न है। फिर उन्होंने आगे लिखा है कि प्राचीन भारत की शिक्षा पण्य द्रव्य नहीं थी। आजकल जो लोग शिक्षा देते हैं वे शिक्षक हैं, लेकिन उन दिनों जो लोग शिक्षा देते थे वे गुरु होते थे। उन्होंने इसी क्रम में लिखा- वे लोग शिक्षा के साथ एक ऐसी वस्तु भी देते थे जो गुरु और शिष्य के आध्यात्मिक सम्बन्ध से भिन्न किसी प्रकार का देना-पावना हो ही नहीं सकती। फिर उन्होंने शान्तिनिकेतन स्थापना के उद्देश्य की चर्चा करते हुए लिखा कि ऐसे ही पारमार्थिक सम्बन्ध की स्थापना ही शान्तिनिकेतन विद्यालय का मुख्य उद्देश्य है। (मृत्युंजय रवीन्द्रनाथ, पृ. 209-210)।

विश्वभारती में हिन्दी भवन की स्थापना कैसे हुई इस सम्बन्ध में हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है- वह शुभ दिन था जब पं. बनारसीदास जी, श्री सीताराम जी सेकसरिया के साथ शान्तिनिकेतन पधारे थे। सीताराम जी ने पाँच सौ रुपये देकर हिन्दी भवन की स्थापना की सम्भावना में वृद्धि की थी। बाद में श्री सेठ श्री भागीरथ जी कानोडिया आये और हिन्दी-भवन की स्थापना उनके ही शुभ संकल्पों से सम्पन्न हुई।

पं. बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है : शान्तिनिकेतन गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर की सर्वोत्तम कृति मानी जाती है। यद्यपि उन्होंने उच्चकोटि के तथा विविध विषयों के ग्रंथों का निर्माण किया था, तथापि भारतीय शिक्षा-क्षेत्र में, उनके शान्तिनिकेतन तथा विश्वभारती का जो प्रभाव रहा। वह निःसंदेह अधिक व्यापक था। स्वयं बनारसीदास चतुर्वेदी शान्तिनिकेतन में 1918 ईस्वी में 14 महीने गुरुदेव के सान्निध्य में रहे हैं। प्रसिद्ध शिक्षाविद् और गाँधीवादी विचारक काका साहब कालेलकर भी शान्तिनिकेतन रहे थे। उन्होंने लिखा है :

सन् 1914 ईस्वी की बात है। शिक्षा-शास्त्री रवीन्द्रनाथ के शांतिनिकेतन में रहकर उनके विचारों को समझ लेने की और यह देखने की कि ये विचार वहाँ कैसे अमल में लाये जाते हैं, इच्छा मन में पैदा हुई। इसी इच्छा से प्रेरित होकर काका साहब कालेलकर ने एक पत्र में लिखा आपका काव्य पढ़कर आपके कवि हृदय का परिचय ही मैंने पा लिया है, किन्तु अब आपकी संस्था में रहकर राष्ट्रीय शिक्षा के बारे में आपके विचारों को जानना चाहता हूँ। मेरी दृष्टि से शिक्षा केवल सिद्धान्त नहीं है। वह तो जीवन को विकसित करने की एक पद्धति है। वह पद्धति प्रत्यक्ष देखे बिना न तो संतोष होगा, न प्रेरणा मिलेगी। (युगमूर्ति रवीन्द्रनाथ, काका साहब कालेलकर, पृ.125)

इसके बाद कवि के आमंत्रण पर काका साहब शान्तिनिकेतन गये और वहाँ कुछ दिनों रहे। यहीं पर उनकी सबसे पहले भेंट गाँधीजी से हुई। शान्तिनिकेतन और विश्वभारती का प्रभाव काका पर आजीवन बना रहा।

'आमादेर शान्तिनिकेतन' शिवानी की छोटी-सी पुस्तक है। इसमें उनके शान्तिनिकेतन विश्वभारती में शिक्षा ग्रहणकाल के संस्मरण हैं। उन्होंने आश्रम के सम्बन्ध में लिखा है : जिस आश्रम की स्थापना केवल पाँच छात्रों को लेकर हुई थी, वहाँ पर अब सैकड़ों छात्र-छात्राओं का दल ज्ञानार्जन कर रहा था। उनके आश्रम की इस सफलता का रहस्य स्वयं गुरुदेव के ही शब्दों में स्पष्ट हो उठा था- "शिक्षा संस्कार एवं पल्ली संजीवनी ही मेरे जीवन का मुख्य ध्येय है। मैं यहाँ कवि नहीं हूँ, मैं यहाँ साहित्य का करोबार नहीं करता एवं मेरे कार्यक्षेत्र में जो वाणी मुखर हुई है, जिस आलोक-प्रभा की दीप्ति स्पष्ट हो उठी है, उसी में देश के अभाव और उसकी भावना का उत्तर निहित है।

यहाँ तक शान्तिनिकेतन, आश्रम विद्यालय, विश्वभारती की स्थापना और उसके विकास की मूल प्रेरणाओं, परिस्थितियों का वृत्तान्त दिया गया। इन संस्थाओं के मूल में महर्षि देवेन्द्रनाथ का त्याग, आर्ष दृष्टि और रवीन्द्रनाथ जैसे महापुरुष का पारस व्यक्तित्व था। इस संस्था में पढ़कर गुरुदेव के सान्निध्य में आकर कला, साहित्य, संगीत, नृत्य, ज्ञान-विज्ञान, चित्र और प्रतिमा विज्ञान, समाज और संस्कृति के क्षेत्र के अलावा ग्रामीण उन्नयन और स्वदेश भक्ति के क्षेत्र में कितनी प्रतिमाएँ प्रेरित होकर देश के उत्थान में लग गयीं। इसकी तालिका बहुत लम्बी है। इस लेख के निमित्त मुझे जिन ग्रंथों का अनुशीलन करना पड़ा उससे मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि किसी भी संस्था के मूल में जब तक कोई त्यागी, निःस्वार्थ, ध्येयनिष्ठ व्यक्ति नहीं होता है तब तक उस संस्था का उत्थान नहीं हो सकता है। रवीन्द्रनाथ जैसे व्यक्ति किसी देश में शताब्दियों में उत्पन्न होते हैं और उनका व्यक्तित्व पार्थिव रूप में उनके लोकातीत होने के बाद भी प्रेरणा का केन्द्र बना रहता है। स

1260, नया रामनगर,
पाठक का बगीचा, उरई-285001
मोबा. 09839617349

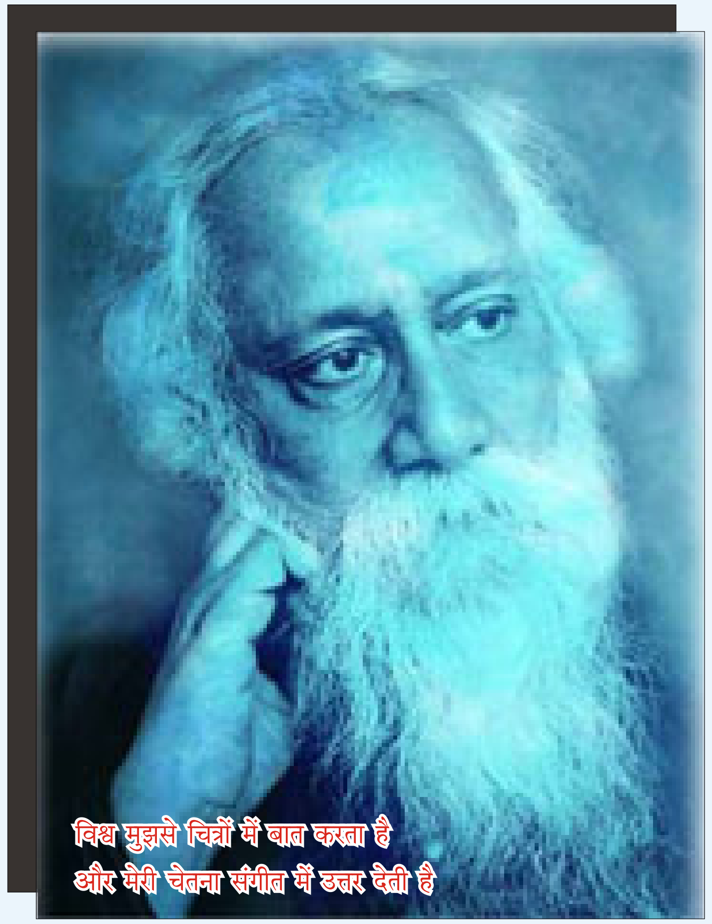

बांग्ला आलेख

रवीन्द्रनाथ के चित्र

यामिनी राय

रवीन्द्रनाथ खाटी यूरोपियन विषयवस्तु लेकर चित्र बनाया करते हैं। इसलिए हमें उनके चित्रों को समझने के लिए सबसे पहले आधुनिक यूरोपीय चित्रकला के वास्तविक उद्देश्य और समस्याओं को समझना होगा।

एक प्रसिद्ध यूरोपीय मूर्तिकार ने एक बार अपनी समसामयिक मूर्तिकला पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि अगर इन मूर्तियों को पहाड़ से नीचे फेंक दें तो हो सकता है टूट-फूट कर इनमें थोड़ी-बहुत जीवंतता आ जाए। यानी यूरोपी की शिल्पकला के विशुद्ध सच की अभिव्यक्ति उस आदिम युग में ही हो गई थी तब शिल्प पर सभ्यता का आवरण चढ़ाने की कोशिश नहीं की गई थी, तब फोटोग्राफिक फिडेलिटी की ओर लोगों का रुझान भी नहीं बढ़ा था। विषयवस्तु के सामान्य लक्षण जिस आवेग को जगाते हैं, उसे पूरी तरह उघाड़ कर व्यक्त करना ही उद्देश्य था। परिणामस्वरूप जब किसी गुफा के प्रागैतिहासिक चित्र में किसी घोड़े को देखता हूँ तो मुझे समझ में आता है वह घोड़ा ही है, लेकिन घोड़े या इस घोड़े के साथ मिलान करके देखने लायक त्रुटिहीन वर्णन उसमें नहीं है। यानी घोड़े का केवल मूल स्वरूप है। फिर सभ्यता जितनी आगे बढ़ती गई लोगों का रुझान रियलिज्म की ओर बढ़ता गया। मनुष्य को अपने नग्न शरीर को लेकर कुण्ठा हुई तो उसने कपड़े और गहनों का आविष्कार किया और इससे रोज की कृत्रिमता का बोझ बढ़ता चला गया। कलाकारों को भी ठीक इसी तरह खालिस भावावेगों से कुण्ठा होने लगी तो अपने निर्माण को त्रुटिहीन करने की कोशिश, पॉलिश करने की कोशिश की ओर ही वे ध्यान देने लगे। पॉलिश की जाने लगी, लेकिन रचना के प्राण प्रायः दब ही गए। गठन और गढ़न खो गया। सभ्यता की विडम्बना की वजह से कला हाँफने लगी। इसीलिये आज के कलाकारों ने ही इस रियलिज्म के खिलाफ अभियान छेड़ दिया है। 'पॉलिश करना छोड़ो, जीवंतता की फिक्र करो' यह हुई उनकी बात।

तो फिर क्या प्रागैतिहासिक चित्रों और आज के शिल्प में कोई फर्क नहीं है? जरूर है, कारण यह है कि इसका इतिहास, इसके उद्देश्य में भ्रांति भले ही रही हो, लेकिन यह पूरी तरह अर्थहीन नहीं है। इसकी वजह यह है एक तरह से इसका एक बहुत बड़ा शिक्षामूलक मूल्य भी है। प्रागैतिहासिक चित्र अवचेतना के स्तर पर थे, उस समय के शिल्पियों को जिस सत्य का आभास हुआ था वह नितांत ही आकस्मिक था। पहाड़ से लुढ़क कर किसी मूर्ति को यदि जीवंतता मिल जाए तो वह भी आकस्मिक ही होगा। इस अवचेतन और आकस्मिक-सत्य को चेतना के स्तर पर लाना ही आधुनिक कलाकार का उद्देश्य है और इसे साकार करने में शिल्प के इतिहास का धारावाहिक अनुभव होना लगभग अनिवार्य हो जाता है। यानी जितने दिनों से कला रियलिज्म के भ्रांत मोह में भटक रही है, उतने दिनों में भटकते रहने के मामले में बहुत सारे अनिवार्य अनुभव संचित हुए हैं जैसे कि चित्रकारी के रंग और सामंजस्य वाला मामला। एकमात्र इसी अनुभव के दम पर ही प्रागैतिहासिक कला के उद्देश्य को अवचेतन के स्तर पर लाया जा सकता है। इसलिए हम देखते हैं कि आज यूरोप में जो लोग प्रागैतिहासिक चित्रकारी की ओर ध्यान दे रहे हैं, उनमें से लगभग सभी ने पहले-पहल रियलिस्टिक विषयवस्तु को देखल करने के लिए कितनी मेहनत की थी, जबकि दिलचस्प बात यह है कि इनका उद्देश्य इसी रियलिस्टिक चित्रकारी को ही तोड़ना था। पिकासो, मर्डिस इन सभी का यही उद्देश्य था और होता भी क्यों न ? जो कानून को तोड़ना चाहता है उसे तो पहले काननू के बारे में पुख्ता जानकार होना ही पड़ता है।

रवीन्द्रनाथ के चित्रों के विषय में जबर्दस्त चीज हुई है। उन्हें कला के इतिहास के मध्यवर्ती स्तरों के सम्बन्ध में किसी तरह का अनुभव नहीं था। ऐसे मामलों में पतन अनिवार्य ही है, लेकिन सबसे बड़ा विस्मय यह है कि वैसा हुआ नहीं। उनके श्रेष्ठ चित्रों को देखकर हम सोच ही नहीं सकते कि उन्होंने इस क्षेत्र में अभी-अभी कदम रखा है। उनकी इस अनुभवहीनता के छिप जाने की एकमात्र व्याख्या मुझे उनकी कल्पना की असामान्य छन्दोमय शक्ति में दिखाई देती है। फिर चाहे वह रेखा की बात हो या फिर रंग की बात हो, सब कुछ उन्होंने इसी कल्पनाशक्ति से ही हासिल किया है, उनके यहाँ अनभिज्ञता-जनित कमी ढूँढ़ना एक विडम्बना ही होगी। लेकिन कल्पना की प्रबलता हर वक्त एक जैसी तथा सजग नहीं रहती और दुर्बलता का मौका देखकर कभी-कभी शायद उनकी अनभिज्ञता ने सिर भी उठाया है। जैसे 'असम्बद्ध' सिरीज के कुछ चित्रों में सब कुछ एकसमान रूप से चित्रित करने के बाद नाक या आँख के वक्त ब्रश चलाते हुए वे साधारण रियलिस्टिक स्ट्रोक दे बैठे। हालांकि किसी कलाकार की चर्चा करते हुए उनकी श्रेष्ठ रचना को लेकर ही बात की जानी चाहिए और रवीन्द्रनाथ के श्रेष्ठ चित्रों में दमदार कल्पना की चौकसी में अनभिज्ञता पास फटक ही नहीं पाई है।

इसके अलावा रियलिज्म की यह जो छुअन है उससे क्या आधुनिक यूरोपियन कला पूरी तरह बचकर निकल पाई है? मुझे तो लगता है कि आज तक भी वह ऐसा नहीं कर पाई है। हम पिकासो को ही लें। कितना तोड़ा-मरोड़ा है उन्होंने, कितने जी-जान से वे डाइमेन्शन के साथ जूझ रहे हैं, लेकिन उनमें

रियलिज्म की छुअन लग ही रही है। एक बार देगस अपने से आधुनिक लोगों की एक चित्र-प्रदर्शनी देखने गए। वहाँ उन्होंने कहा था "मुझे इनमें कुछ भी नयापन तो दिखाई नहीं दे रहा। मैंने तो चाहा कि मैं एक पूरा, साबुत प्याले का चित्र बनाऊँ और ये लोग तोड़-फोड़ कर साबुत प्याला बना रहे हैं तो फिर नयापन कहाँ है ?" यह बात काफी हद तक सच हैं सच मतलब, उसकी रियलिस्टिक चित्रकला और अतिआधुनिक यूरोपीय चित्रकला के नजरिये में कोई फर्क नहीं है। मुझे लगता है कि चाहे वह चीन हो, जापान हो, समूची दुनिया में कलाकारों का नजरिया एक ही है। व्यतिक्रम केवल भारतीय कला में है। रियलिज्म की छुअन से इस तरह कोई और बच नहीं सका है। पुराण का एक भावचित्र लीजिए- जटायु के साथ यथार्थ के पक्षी का कोई सम्बन्ध नहीं है, इसके जन्म का इतिहास भी अनोखा है, वहाँ पर रियलिज्म की छुअन नहीं लगी है, लेकिन क्या जटायु को आप जरा भी नहीं पहचान पाते हैं ? निश्चित रूप से पहचान पाते हैं, लेकिन कल्पनालोक का पक्षी है, उसमें रियलिज्म की छुअन जरा भी नहीं है। मुझे लगता है कि जिस दिन आधुनिक चित्रकार अपनी कला-साधना के विभिन्न स्तरों के अनुभवों का उपयोग कर पौराणिक जगत् की निश्चयता और स्वच्छंदता को चित्रित कर सकेगा, उसी दिन आधुनिक यूरोपीय कला का आदर्श परिपूर्ण हो सकेगा। मेरा विश्वास है कि आज चित्रकला इसी तरह के पौराणिक जगत् के निर्माण की दिशा में अग्रसर है।

रवीन्द्रनाथ के द्वारा बनाए चित्रों में जब मनुष्य को देखता हूँ तो मुझे लगता है कि वह यूँ नहीं गिर पड़ेगा, लगता नहीं है कि वह हवा के झोंकों से हिल रहा है। मुझे साफ-साफ उस आदमी का वजन महसूस होता है सतेज वह सिर उठाए खड़ा है। रवीन्द्रनाथ के चित्र जो शक्तिशाली बन पड़े हैं, वे इन्हीं हड्डियों की वजह से ही है। छन्द के गठन की वजह से ही हैं। मेरा मत है कि पिछले दो सौ वर्षों से राजपूतकाल से लेकर आज तक, हमारे देश के चित्रों में जिस चीज का अभाव बढ़ने लगा था, रवीन्द्रनाथ उसी अभाव के विरुद्ध प्रतिवाद करना चाहते हैं, चित्रों के लिए यह दृढ़और स्वाभिमान से भरी हुई तलाश है।

रवीन्द्रनाथ के चित्रों के प्रति मेरे मन में श्रद्धा उनकी ताकत की वजह से है, छन्द की वजह से उनमें विराट रूप-बोध का जो विराट आभास मिलता है, उसकी वजह से। आजकल मुझे आपत्ति के स्वर सुनाई देते हैं कि इन चित्रों में एनॉटॉमी का अभाव है। लेकिन मुझे लगता है कि आजकल के चित्रों में एनॉटॉमी का बोध अगर सचमुच कहीं है तो वह केवल इन्हीं चित्रों में है। कारण कि चित्रों के लिए एनॉटॉमी की जरूरत असल में है ही कितनी? यह शास्त्र कलाकार को शरीर के विषय में केवल जानकारी देगा, इससे ज्यादा वह और क्या देगा ? शरीर के लिए हड्डियों का मुख्य उद्देश्य होता है शरीर को गिरने से रोकना, उसको खड़ा रखना, सतेज और मजबूत बनाए रखना। हम जिस चित्रकला की चर्चा कर रहे हैं क्या उसमें यह सतेज होने का भाव सबसे अधिक नहीं है ? रवीन्द्रनाथ के द्वारा बनाए चित्रों में जब मनुष्य को देखता हूँ तो मुझे लगता है कि वह यूँ नहीं गिर पड़ेगा, लगता नहीं है कि वह हवा के झोंकों से हिल रहा है। मुझे साफ-साफ उस आदमी का वजन महसूस होता है सतेज वह सिर उठाए खड़ा है। रवीन्द्रनाथ के चित्र जो शक्तिशाली बन पड़े हैं, वे इन्हीं हड्डियों की वजह से ही है। छन्द के गठन की वजह से ही हैं। मेरा मत है कि पिछले दो सौ वर्षों से राजपूतकाल से लेकर आज तक, हमारे देश के चित्रों में जिस चीज का अभाव बढ़ने लगा था, रवीन्द्रनाथ उसी अभाव के विरुद्ध प्रतिवाद करना चाहते हैं, चित्रों के लिए यह दृढ़और स्वाभिमान से भरी हुई तलाश है।

रवीन्द्रनाथ के चित्रों में वृहत् की अभिव्यक्ति मुझे बहुत विस्मयकर लगती है। मैं क्या कहना चाहता हूँ उसे समझाने के लिए दो चित्रों की तुलना ठीक रहेगी। मान लीजिए दो चित्रकार विशुद्ध कल्पना के सहारे एक लड़की का चित्र बनाना चाहते हैं, अर्थात् दोनों ही देखे हुए व्यक्ति का चित्र नहीं बनाना चाहते। एक चित्रकार उस अदेखे को नितांत घरेलू अंदाज में बना रहा है, वहाँ कल्पना का प्रसार नहीं है। और दूसरा चित्रकार लड़की का चित्र बना रहा है, हालाँकि वह भी बिना देखे ही बना रहा है- लेकिन वह उसे देखने की सीमारेखा के भीतर लाने की कोशिश ही नहीं कर रहा। वहाँ कल्पना का उन्मुक्त प्रसार साफ-सा दिखाई देता है, वृहत् के दर्शन होते हैं। इसे मैं थोड़ा समझाकर कहता हूँ। पोर्ट्रेट को देखकर बनाया जाता है, वैज्ञानिक पोर्ट्रेट को देखकर बता सकता है कि मॉडल चित्रकार से कितने फुट दूर, कितने इंच नीचे बैठा था, उजाला किस ओर से आ रहा था वगैरह-वगैरह। मैं जब देख-देख कर किसी व्यक्ति का चित्र बनाता हूँ तब जब तक उसका चेहरा बनाता हूँ तब तक केवल उसका चेहरा ही देखता हूँ और कुछ नहीं देखता और जब शरीर का निचला हिस्सा बना रहा होता हूँ तो फिर उस समय चेहरे की ओर नहीं देखता, केवल निचला हिस्सा देखता हूँ। एक व्यक्ति दस फुट दूर खड़ा होता है तो उसे किसी और ढ़ंग से देखता हूँ, अगर वह सौ फुट दूर हो तो वह ढ़ंग कुछ और होता है, लेकिन वही व्यक्ति जब नजर से ओझल हो जाता है तब भी क्या मैं उसे नहीं देखता ? मैं तब भी तो उसे देखता हूँ। उसे संपूर्णता में देखता हूँ, उसकी उन आँखों से अदेखे चित्र को बनाना ही भारतीय चित्रकला की विशेषता है। रवीन्द्रनाथ के चित्रों में यही विशेषता उभर आई है। रवीन्द्रनाथ आज के व्यक्ति हैं इसलिए उनमें पौराणिक जगत् की कोई खास स्थिरता या निश्चयता नहीं है। इसी वजह से उनके चित्रों में यह विशेषता उनकी व्यक्तिगत कल्पना की लाला में ही अभिव्यक्त होती है।

रवीन्द्रनाथ के चित्रों को लेकर मेरी उनसे एक बार जो चर्चा हुई थी, यहाँ वह अवान्तर न होगी। उन्होंने कहा था- "यहाँ मेरे पास तो आर्ट स्कूल से पढ़कर प्राप्त की हुई विद्या तो है नहीं, मेरे चित्र संभवतः पूरे नहीं बन पाते।" मैंने कहा था कि मैंने तो देखा है कि ग्यारह साल स्कूल में पढ़ने के बाद भी कई बार लड़के मूर्ख ही रहते हैं। दूसरी ओर जो कभी स्कूल के पास भी नहीं फटके, ऐसे लड़कों के मुँह से ज्ञान की बातें सुनता हूँ - चित्रों के मामले में आपके साथ भी ऐसा ही हुआ है। स

मूल बँगला से अनुवाद : उत्पल बैनर्जी
भारती हाउस सीनियर प्रथम तल डेली कॉलेज कैम्पस
इन्दौर - 452001, मध्यप्रदेश
फोन - 9425962072

भारतीय चित्रकला परंपरा और रवीन्द्रनाथ ठाकुर

रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविताओं, कहानियों, नाटकों और उपन्यासों के विशाल भंडार के लगभग समानांतर उनके असंख्य चित्र भी हैं, जिनके बारे में गंभीर चर्चा न के बराबर हुई है, जबकि बीसवीं सदी के आरंभिक दशकों के दौरान भारतीय चित्रकला का विकास जिस रास्ते पर चलकर हो रहा था, उसे पूरी तरह से त्याग कर रवीन्द्रनाथ ने आधुनिक भारतीय चित्रकला की नींव रखी, जिस पर चलकर वास्तव में आधुनिक भारतीय चित्रकला का विकास संभव हो सका।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों के बारे में बातचीत की शुरूआत, रवीन्द्रनाथ के समय को बिना जाँचे-परखे संभव नहीं है। जैसा कि हम जानते हैं कि रवीन्द्रनाथ का जन्म बंगाल के एक ऐसे धनी परिवार में हुआ था जिसने कला, संस्कृति और धर्म के क्षेत्र में अपनी खास भूमिका अदा की थी। इस परिवार का तत्कालीन अंग्रेज शासकों के साथ गहरा रिश्ता था इसलिए भारत में पाश्चात्य साहित्य, संस्कृति और दर्शन के साथ जुड़ने वालों में यह परिवार अग्रणी था। इसी परिवार ने हिन्दू धर्म की रूढ़ियों के विरोध में 'ब्रह्म समाज' की स्थापना में केंद्रीय भूमिका अदा की थी। हालाँकि धनी और संभ्रांत ठाकुर परिवार, अपने वर्ग की खासियत के चलते आम जन-जीवन के करीब नहीं पहुँच सका और इस परिवार का प्रभाव शहर के अन्य धनियों, बुद्धिजीवियों और अपने करीब के प्रजाओं तक ही सीमित रहा।

ऐतिहासिक बंग-भंग और स्वदेशी आंदोलन के अंतिम दौर में (1907) कलकत्ते में इण्डियन सोसायटी ऑफ ओरिएण्टल आर्ट की स्थापना हुई थी। एक लंबे समय से भारत में चित्रकला शिक्षा यूरोपीय चित्रकला से आयातित तरीकों और नियमों के आधार पर ही होता आ रहा था। इण्डियन सोसायटी की स्थापना भारतीय चित्रकला को विदेशी प्रभावों से मुक्त करने के साथ-साथ नव भारतीय चित्रकला के स्वरूप का निर्धारण करने के लिए हुआ था। इस संस्था का मानना था कि भारत महादेश के विभिन्न प्रांतों में फैली सदियों पुरानी कला धाराओं का अध्ययन कर और उसे आधार मानकर ही नई भारतीय कला के स्वरूप का निर्धारण संभव है।

इण्डियन सोसाइटी ऑफ ओरिएण्टल आर्ट की स्थापना में ठाकुर परिवार का महत्त्वपूर्ण योगदान था। अवनीन्द्रनाथ ठाकुर और ई.बी. हैवल (कलकत्ता आर्ट कॉलेज के संस्थापक अध्यक्ष) ने मिलकर इस संस्था को बनाया जरूर था पर इसके पीछे लार्ड किचनार, वैरन कारमाईकल, आर्ल ऑफ रोनाल्डसे, नार्मन व्लाउन्ट जैसे अंग्रेज राजपुरुषों का योगदान था। इस संस्था के साथ जुड़े अन्य लोगों की सूची को देखने से संस्था का स्वरूप और भी स्पष्ट हो जाता है। इस संस्था के पृष्ठ पोषकों में प्रमुख थे वर्धमान के महाराजा विजयचंद महातप, नाटोर के महाराजा जगदीन्द्र नारायण, आनंद कुमार स्वामी, सर जॉन उड्रॉक, मि. पेन्टन यूलर, मि. रोदेस्टाइन आदि। यह भारतीय स्थानीय सामंतों और अंग्रेज औपनिवेशिक शासकों का एक ऐसा वर्ग था जो सामंत या शासक होने के साथ-साथ बुद्धिजीवी भी था- या यों कहें कि अपने को बुद्धिजीवी कहलाने की इच्छा रखता था।

औपनिवेशिक शासन के दौर में अंग्रेजों के प्रभावों से भारतीय कला को मुक्त करने के लिए संभ्रांतों की इस संस्था को अंग्रेज शासन की ओर से दस हजार रुपये का विशाल वार्षिक अनुदान मिलने लगा था। 'भारतीय' कला और विचारों के प्रचार के लिए इस संस्था ने 'रूपम' कला पत्रिका का प्रकाशन (संपादक : ओ.सी. गांगुली) भी किया। चूँकि, यह उस समय एकमात्र कला पत्रिका थी, इसने बखूबी कलाप्रेमियों के बीच एक खास वर्ग की कला का प्रचार किया और 'नव भारतीय चित्रकला' को चिह्नित करने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

भारतीय कला में 'भारतीयता' की खोज के ऐसे आयोजन के पीछे निःसंदेह अंग्रेज शासकों की कूटनीति सक्रिय थी। चित्रकार अतुल बसु (1898-1977) ने अपनी पुस्तक 'शिल्पचर्चा' (पृ. 39-40) में अंग्रेजों के इस कूटनीतिक साजिश के बारे में लिखा है, "चित्रकला की दुनिया में 1907 के आसपास यकायक गतिविधियाँ बढ़गई थीं। भारतीय महान् कला परम्परा के प्रति अपनी गहरी श्रद्धा के चलते, अंग्रेज राज के अधिकारियों की कोशिशों से लार्ड किचनार की अध्यक्षता में अवनीन्द्रनाथ ठाकुर को सामने रखकर इण्डियन सोसाइटी ऑफ ओरिएण्टल आर्ट की स्थापना की गई। अंग्रेजों की इस कूटनीतिक चाल से उत्पन्न 'भारतीय कला परम्परा' या 'हेरिटेज ऑफ इण्डिया' जैसी अवधारणाओं का तुरन्त जादुई असर पड़ा - यह मानो हिन्दू जागरण का पर्याय-सा था। राष्ट्रवादी हिन्दुओं के लिए, हिन्दु राष्ट्र की पुनर्स्थापना के लिए, ऐसी अवधारणाएँ जरूरी-सी लगने लगी। कितनी

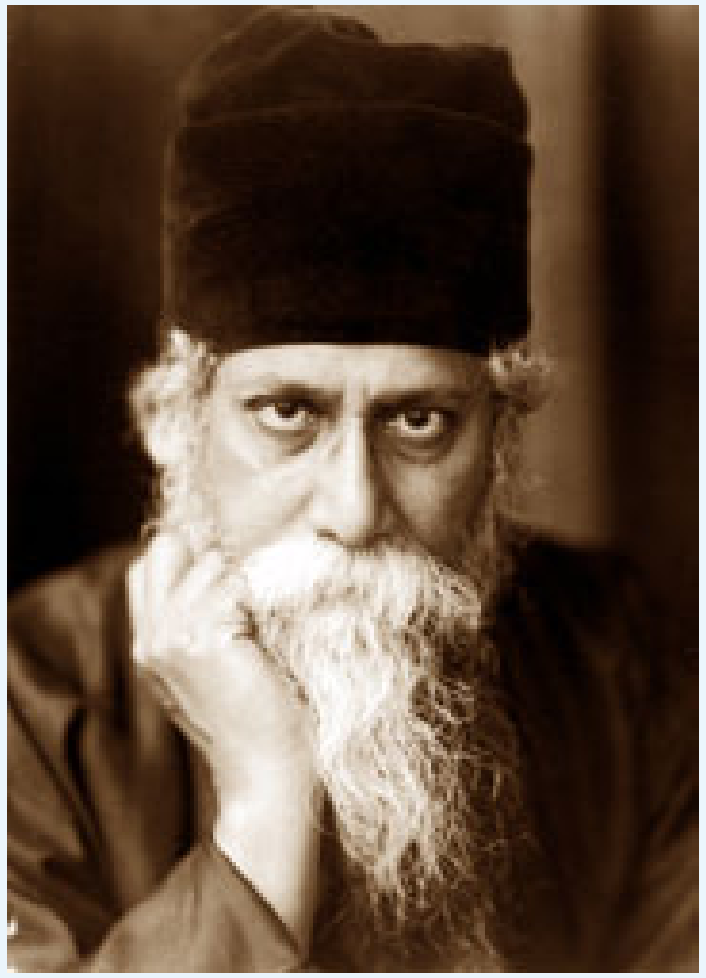

आसानी से हिन्दू अध्यात्मवाद पश्चिम के भौतिकवाद से श्रेष्ठतर प्रमाणित हो गया - इस अहसास से हिन्दुओं की खुशियों का मानो ठिकाना न था। उनके विजयोल्लास के कोलाहल में मानो भौतिकतावाद अदृश्य हो गया। इस जादू के प्रभाव से एक भी तत्कालीन भारतीय नेता मुक्त नहीं थे।''

चित्रकार अतुल बसु की ऐसी महत्त्वपूर्ण टिप्पणी अपने नौकरशाहों के माध्यम से रूपायित अंग्रेजों की कूटनीतिक चालों को समझने में मदद करती है। हम उन कारणों को समझ पाते हैं, जिनके चलते भारत में 150 वर्ष शासन करने के बाद अचानक भारतीय कला के प्रति अंग्रेज शासक क्यों इतना सक्रिय-सदय हो उठा था। लॉर्ड कर्जन के बंग-भंग के मसौदों का हिन्दुओं और मुसलमानों ने मिलकर विरोध किया था। पर शासकों ने अन्ततः अपना मक़सद पूरा कर लिया था। भारतीय कला के पुनरुत्थान के नाम पर हिन्दू कला और हिन्दू धार्मिक कथाओं को प्रचारित कर मुसलमानों को अलग करने में काफी हद तक वे सफल भी रहे। 1857 के समय अंग्रेजों ने हिन्दू-मुसलमान की एकजुटता की ताकत को देखा-समझा था। बीसवीं सदी के आरंभ में बंग-भंग को मूर्त करते समय उन्हें एक बार फिर इस एकजुटता का सामना करना पड़ा था, इसीलिए 1901 से उन्होंने भरतीय कला के जरिए स्पष्ट विभाजन करने की एक सोची-समझी हुई योजना के तहत कला को संस्थाबद्ध किया। हिन्दू राष्ट्रवाद के सपने से भारतीय बुद्धिजीवी और सामंत झूम उठे- अंग्रेजों को बस इतना भर काम करना था बाकी स्वतः स्फूर्त ढ़ंग से अपना रास्ता खुद-ब-खुद बनने लगा और 1947 तक आते-आते हिन्दू-मुसलमानों ने धर्म के आधार पर हिन्दुस्तान के टुकड़े कर डाले। ऐसी नव-भारतीय चित्रकला को मूर्त रूप देने में अवनीन्द्र नाथ, नंदलाल बोस, असित कुमार हालदार, वैंकटप्पा, क्षितीन्द्र नाथ मजुमदार, वीरेश्वर सेन, हकीम मुहम्मद खाँ, शमीउज्जमान आदि चित्रकारों ने अग्रणी भूमिका निभाई। पर इनका मार्गदर्शन ई.वी. हेवल, सिस्टर निवेदिता और आनंद कुमार स्वामी जैसे बुद्धिजीवी कर रहे थे।

चित्रकार अतुल बसु के बंग-भंग और भारतीय चित्रकला के नए आंदोलन के बारे में विचार निः संदेह महत्त्वपूर्ण हैं पर यहाँ कतई नहीं माना जा सकता है कि तत्कालीन भारतीय चित्रकारों का दल अंग्रेजों की इस साजिश में हिस्सेदार थे, बल्कि उन्हें ऐसी साजिश के शिकार के रूप में देखा जाना चाहिए। यहाँ यह भी सच है कि बंगाल का सामंत वर्ग, बुद्धिजीवी वर्ग इतना निरीह और नासमझ भी नहीं था। समाज में बंगाली-हिन्दू के वर्चस्व के लिए वे निश्चय ही लालायित थे जो ऐसे विभाजन से ही संभव था। इनकी हिन्दू-राष्ट्र की कल्पना भी इतनी संकीर्ण थी कि वह बंगाल को एक राष्ट्र के रूप में ही कल्पित करते थे। बीसवीं सदी के आरंभिक कुछ दशकों में बांग्ला कविता एवं गीतों में जिस देश-प्रेम का व्यापक रूप से प्रचार हुआ था दरअसल वह देश बंगाल की सीमा के बाहर नहीं था और राष्ट्र-देश-स्वदेश यह सब अन्ततः उनका बंग प्रेम ही था, इसमें कोई संदेह नहीं है।

इण्डियन सोसाइटी ऑफ ओरिएण्टल आर्ट और कलकत्ता आर्ट स्कूल से जुड़े तमाम चित्रकारों ने पूरी निष्ठा के साथ अजंता और बाघ की गुफाओं की यात्रा के साथ ही मुगल, राजस्थानी, पहाड़ी आदि भारत की तमाम प्रांतीय कलाओं का अध्ययन किया था। मुगल कला की रूपगत विशेषताओं का अनुकरण करते समय अवनीन्द्र नाथ उसके कथ्य से दूर नहीं जा सके और समकालीन यथार्थ को उनकी कला में स्थान नहीं मिल पाया। 'शाहजहाँ की मृत्यु' चित्र अपने कथ्य और रूप में मुगलकला का अनुकरण ही बनकर रह गया। नंदलाल बोस, असित हालदार आदि चित्रकारों ने अजंता के चित्रों से न केवल स्वरूप को ही ग्रहण किया, बल्कि अपने-अपने समय से कट कर वे देवी-देवताओं और कथा-नायकों को चित्रित भी करते रहे।

हालाँकि ऐसे चित्रों और चित्रकारों की प्रशंसा में उस समय का बुद्धिजीवी वर्ग न केवल मुखर रहा, बल्कि उनका मानना था कि कलाकारों के ऐसे समर्पित दल ने नव-भारतीय चित्रकला को चिह्नित कर लिया था।

यहाँ दो बातें गौरतलब हैं। पहला, कि नव भारतीय कला के विकास में क्यों केवल चित्रों पर ही ध्यान दिया गया? और क्यों भारतीय मूर्ति कला और स्थापत्य कला की महान् परम्परा पर ध्यान नहीं दिया गया। दूसरा भारतीय कला परंपरा की खोज करने के लिए चित्रकारों का दल अजंता और बाघ की गुफाओं की यात्रा पर गया, तमाम भारतीय राजाश्रित कलाओं का अध्ययन किया, वसली और अन्य चित्रित पोथियों पर भी इनका ध्यान गया पर बंगाल के ही पट-चित्र, बारली, मधुबनी और तमाम अन्य भारतीय लोककलाओं पर इन लोगों ने क्यों नहीं गौर किया ?

तत्कालीन कला समीक्षकों और बुद्धिजीवियों की रचनाओं में हमें इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं मिलता है। इस दौर के कलाकारों को सिस्टर निवेदिता ने विचारों को प्रभावित किया था। सिस्टर निवेदिता ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'द मास्टर एज आइ सॉ हिम' में अपने भारत प्रेम और हिन्दू प्रेम के बारे में सविस्तार लिखा है। उन्होंने हिन्दू रीति-रिवाज, पूजा-पाठ और त्योहारों के बारे में जो कुछ लिखा है वह निश्चय ही आम हिन्दू को आकर्षित करता है। पर अपनी पुस्तक में वह हिन्दू धर्म की रूढ़ियों और पतनशील मूल्यों की समर्थक बनी दिखती है।

सिस्टर निवेदिता, हिन्दू विधवाओं की जीवन शैली से बेहद प्रभावित हुई थीं। चित्रकार नंदलाल बोस ने जिस विश्वास और लगन के साथ 'सती' चित्र में सती प्रथा को महिमामण्डित किया है वह निश्चय ही सिस्टर निवेदिता की प्रेरणा से संभव हो सका था। नंदलाल बोस के इस चित्र को न केवल सिस्टर ने सराहा था, अवनीन्द्र नाथ ठाकुर ने भी इसकी काफी प्रशंसा की थी। अवनीन्द्र नाथ 'ब्रह्म-समाजी' थे जहाँ मूर्ति पूजा के निषेध के साथ-साथ हिन्दू धर्म की कुरीतियों का भी विरोध था। इसके बावजूद अवनीन्द्र नाथ का 'सती' चित्र की प्रशंसा करना, अपने शिष्यों को देवी-देवताओं के चित्र बनाने के लिए प्रेरित करना और स्वयं 'भारत माता' के रूप मे एक नई देवी का निर्माण करना, हमें निश्चय ही अचरण में डालता है। हिन्दू देवी-देवताओं से प्रभावित होकर ही अवनीन्द्र नाथ ने 1905 में अपना प्रसिद्ध चित्र 'भारत माता' बनाया था। भगवा वस्त्र पहने इस हिन्दू चतुर्भुजा देवी के हाथों में रुद्राक्ष की माला, पोथी, धान की बाली और कपड़ा था। 'भारत माता' की ऐसी परिकल्पना ने हिन्दू राष्ट्रवादी बुद्धिजीवियों को बहुत आकर्षित किया और यह चित्र कई पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर प्रसिद्ध भी हुआ। सिस्टर निवेदिता ने इस चित्र की तारीफ में यहाँ तक कह डाला कि, ''यदि मेरे पास आर्थिक सुविधा होती तो मैं इसे बड़ी संख्या में छपवा कर केदार-बद्री आश्रम से लेकर कन्याकुमारी तक फैले भारत के हरेक किसान के घरों तक पहुँचाती।''

इस दौर के सभी चित्रकारों और कला समीक्षकों को सिस्टर निवेदिता ने किस हद तक प्रभावित किया था, अवनीन्द्र नाथ, नंदलाल बोस, असित हालदार, क्षितीन्द्र मजुमदार आदि चित्रकारों के असंख्य चित्र इसके दस्तावेज हैं।

सन् 1907 के इण्डियन सोसायटी ऑफ ओरिएण्टल आर्ट से जुड़े बुद्धिजीवियों, चित्रकारों और कला समीक्षकों ने जिस कला को जन्म दिया, उसे नव-भारतीय कला के रूप में प्रचार भी किया गया, पर वास्तव में यह कला नव-बंगाल चित्रकला शैली ही साबित हुई।

उस समय, इस शैली और विचारों से दीक्षित बंगाली चित्रकारों का दल बहुत तेजी से भारत के विभिन्न प्रांतों में बने कला विद्यालयों में शिक्षकों के रूप में पहुँच गया। कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा स्थापित शांतिनिकेतन के कला भवन का दारोमदार नंदलाल बोस ने सँभाला तो असित कुमार हालदार लखनऊ आर्ट कॉलेज में आए। इसी तरह बड़ौदा, पटना, जयपुर, मद्रास आदि कला शिक्षा केन्द्रों में भी नव-बंगाल स्कूल के प्रतिनिधि कलाकारों को हम सक्रिय होते पाते हैं। और इस प्रकार बीसवीं सदी के आरंभिक वर्षों में अंग्रेजों ने जिस योजना को कार्यान्वित करने का काम शुरू किया था वह अपनी तयशुदा मंजिल तक पहुँच सका था।

धुर्जटी प्रसाद मुखर्जी ने अपने एक लेख में (1938) इस कला -प्रवृत्ति की व्याख्या प्रस्तुत करते हुए लिखा था, ''इन चित्रों में जो कुछ ऐतिहासिक था वह इनके विषय तक सीमित था। पुराण-कथाओं का वर्णन ही इसकी आधारभूमि है। इन्हें देखकर तो ऐसा लगता है मानो प्रमुख देवी-देवताओं का दल अचानक स्वर्ग से उतरकर बंगाल में छुट्टियाँ बिताने आए हो। अब चित्रकारों ने इनमें से अपने-अपने पसंद के देवी-देवताओं को चुन लिया - किसी ने शिव लिया तो किसी की पंसद विष्णु बने या फिर इनका परवर्ती रूप किसी को भाया, पर सर्वत्र केवल कोमल और मधुर भावों का चित्रण ही दिखा। यहाँ कठोर हृदय वाले देवी-देवताओं को पूरी तरह से त्यागा गया। यहाँ तक कि पुराण कथाओं के आदर्श नायकों या इतिहास के महान् राजाओं तक का खास जिक्र न था। बुद्ध, बोधिसत्व, अशोक आदि हालाँकि इन चित्रों में दिखे। शकुंतला, मेघदूत, रामायण, महाभारत आदि के अलावा कई प्राचीन काव्य ग्रंथों पर भी चित्र बने। पुराण के प्रति अचानक ऐसा प्रेम या आग्रह क्यों? यह सवाल किसी ने नहीं पूछा।''

धुर्जटी प्रसाद ने नव-बंगाल कला शैली में धर्म के इस प्रभाव के बारे में जो सवाल उठाए हैं उसकी सही व्याख्या चित्रकार अतुल बसु ने अपनी पुस्तक 'शिल्पचर्चा'में प्रस्तुत की है। पर धुर्जटी प्रसाद जैसे प्रगतिशील आलोचक चित्रकला की इस प्रवृत्ति को कला बाजार और उसके बदलते स्वरूप के साथ भी जोड़ते हैं।

बीसवीं सदी के आरंभिक दशकों में बंगाल की चित्रकला अन्य कला रूपों के समानांतर नहीं विकसित हुई। साहित्य, संगीत, रंगमंच में एक तरह की सामाजिक प्रतिबद्धता स्पष्ट दिख रही थी। अंग्रेजों के शोषण के विरोध में एक प्रतिरोध की संस्कृति वहाँ बनती हुई दिख रही थी पर इसमें चित्रकला की साझेदारी नहीं हो सकी। चित्रकारों का बड़ा-सा समूह अपने चित्रों में पुराणकथाओं और देवी-देवताओं का चित्रण कर 'अराजनैतिक' बने रहने की राजनीति में लगा रहा, क्योंकि चित्रकारों को नौकरी देने वाली संस्थाएँ सरकारी थीं और इसीलिए कला में किसी प्रकार की क्रांतिकारिता उनके सरकारी नौकरी मिलने के मार्ग में आड़े आती थी। जाहिर है कवियों, साहित्यकारों, रंगकर्मियों के लिए ऐसी कोई समस्या नहीं थी।

पर एक समय के बाद सरकारी नौकरी भी धीरे-धीरे बंद होने लगी, क्योंकि अंग्रेजों ने सरकारी कला विद्यालयों का विस्तार रोक दिया और विभिन्न सरकारी संस्थाओं में चित्रकारों की नियुक्तियाँ भी कम कर दी गई। ऐसे समय में चित्रकारों ने 'बाजार' की ओर रुख किया। इस दौर में केवल भारत में ही नही, विश्व भर में कला, समाज और बाजार के आपसी रिश्ते में व्यापक परिवर्तन दिखने लगा था। भारत में एक लंबे समय तक हस्तशिल्प और ललितकला के बीच कोई भेद नहीं था - कलाकार और कारीगर दो विपरीत ध्रुवों के प्राणी नहीं थे। पर औद्योगिक क्रांति ने यूरोप में हस्तशिल्प और ललित कला को पूरी तरह दो अलग अस्तित्व के रूप में स्थापित किया। हस्तशिल्प के केन्द्रों के कम होते जाने के साथ ही कलाकारों को पहली बार यह अहसास हुआ कि लंबे समय से सामंतों और धार्मिक संस्थाओं की पृष्ठपोषकता ने उनकी कला को आम जनजीवन से दूर कर दिया था। सामंतवाद के खत्म होने के बाद चित्रकारों के पास ही एक ही विकल्प था कि वे अपने चित्रों के खरीदारों की तलाश आमजन के बीच करे। ऐसी स्थिति में अपने चित्रों के लिए आम जनता की स्वीकृति उनके लिए जरूरी हो गया। (यहाँ आम जनता का अर्थ उस वर्ग से है जो सामंती जड़ों से कटा था, लेकिन उसके पास चित्र खरीदने के लिए पर्याप्त पैसा था)। लगभग ऐसा ही कुछ भारत में भी देखने को मिला। आम जनता में कला-संस्कृति को लेकर किसी प्रकार का भ्रम नहीं था वे संगीत, साहित्य और रंगकर्म के साथ-साथ चित्रकला में भी रुचि रखते थे पर चित्र खरीदकर उस चित्र के 'मालिक' बनने की कोई इच्छा उनमें नहीं थी। बंगाली 'बाबू' वर्ग को कला-रसिक होने का गर्व तो था पर वे न तो पर्याप्त रूप से शिक्षित थे और न ही उनके पास पहले जैसा पैसा था। इसलिए ऊँची नौकरी कर रहे कुछ लोग और जमींदारों का एक छोटा-वर्ग चित्रकला के पृष्ठ पोषक के रूप में सामने आते दिखे। बाजार के इस कदर संकुचित होने के फलस्वरूप चित्र के इस 'खरीददार' वर्ग ने ही अपने को असली 'कला मर्मज्ञ' समझा। यह सहज ही अनुमेय है कि ऐसी मिथ्या बुर्जुआ आत्म गरिमा को और ज्यादा बढ़ावा देने के लिए चित्रों में 'सुंदर-सुकोमल' गुणों का समावेश किया जाने लगा।

इस दौर में चित्रों का शीर्षक देना बहुत जरूरी-सा लगने लगा जिससे चित्र की विषयवस्तु खरीदारों की 'समझ' में आ सके। इसी प्रयास में चित्रों में भी और भी ज्यादा धार्मिक और काव्यगुणों का समायोजन दिखा। यहाँ गौरतलब है कि बंगाली बुर्जुआ की कविता ओर धर्म के पति आसक्ति ने तत्कालीन चित्रकला के स्वरूप निर्धारण में एक अहम् भूमिका अदा की थी।

इन्हीं कारणों के चलते चित्रकला में रचनात्मकता गायब-सी हो गई।

कहानी कहने के अंदाज में चित्रों को रचा गया, कविता की लयात्मकता को चित्रों में लाने की कोशिश की गई और रंगों के चयन में अस्वाभाविक और कोमल रंगों को प्राथमिकता दी गई। किंवदंती और पुराण कथाओं की महत्त्वपूर्ण घटनाओं और नाटकीय क्षणों पर चित्र रचे गए। इन सबको देखते हुए इतना तो कहा ही जा सकता है कि इस दोर में इतनी बड़ी संख्या में बने चित्रों में और जो हो, इन्हें 'समकालीन' तो कतई नहीं कहा जा सकता है।

ऐसे दौर में चित्र रचना में यथार्थ-अनुभवों का परिसर न के बराबर था। देवी-देवताओं, राजा-रानियों की कथाएँ - चित्रकारों तक जिस साहित्य के जरिए यह पहुँचा था, वह साहित्य स्वयं ही व्यापक पाठक वर्ग के बीच अपनी लोकप्रियता गँवा रहा था। यह तथ्य आश्चर्यचकित करता है कि जिस समय पुराण कथाओं, लीला प्रसंगों, धार्मिक और ऐतिहासिक संदर्भों को केन्द्र में रखकर रचा जा रहा साहित्य, वक्त में बदलते हुए रूख के साथ अपना एक नया समकालीन और जनपक्षधर रूप विकसित कर रहा था, उस समय चित्रकार निरंतर अतीत में जाकर धार्मिक पुराण कथाओं के शास्त्रीय तत्त्वों को तलाश रहे थे।

धुर्जटी प्रसाद मुखर्जी ने अपने महत्त्वपूर्ण लेख, 'समकालीन चित्रकला का सामाजिक आधार' (न्यू इंडियन लिटरेचर, 1938) में लिखा है, ''बंगाल के चित्रकारों में अधिकांश अर्ध शिक्षित थे और निम्न मध्यमवर्ग से आए थे, उनमें प्रयोग करने की सामर्थ्य और परिवर्तन का साहस - दोनों की ही कमी थी। अपने अनुभवों के विस्तार के लिए अगर वे कलकत्ते के आस-पास के कारखानों और औद्योगिक इलाकों में गए होते तो वे देख पाते कि वास्तव में वहाँ क्या घटित हो रहा था। चाक्षुष पर्यवेक्षण से नए प्रकार के शिल्प को जन्म देने की प्रेरणा अगर लेनी हो तो उसे नए आग्रह और नजरिए से देखना जरूरी होता है।''

चित्रकला के ऐसे दौर में एक चित्रकार ऐसा भी था, जो सामंती ठाकुर परिवार के होने के बावजूद अवनीन्द्र नाथ ठाकुर और ई.बी. हैवेल द्वारा स्थापित इंडियन सोसायटी ऑफ ओरिएण्टल आर्ट से नहीं जुड़ा। भारतीय चित्रकला के 'पुनरुत्थान' के उस दौर में अपने चित्रों को किसी भी देवी-देवताओं और पुराण कथाओं के स्पर्श से मुक्त रखने की जिद लिए चित्रकला में सार्थकता और आधुनिकता की खोज करने का प्रयास सबसे पहले रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने ही किया।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर अपनी साहित्यिक रचनाओं में हिन्दू धर्म की रूढ़ियों पर सीधे प्रहार करते हैं। कविताओं में जहाँ बार-बार धार्मिक कर्मकाण्ड और नियतिवाद की आलोचना करते हैं, वहीं 'विसर्जन' नाटक के अंत में काली माँ की मूर्ति को तोड़ने का साहस भी दिखाते हैं। 'मुक्तधारा' नाटक में किसान आंदोलन, 'चाण्डालिका' में दलितों का उत्थान से लेकर 'रक्तकरबी' के प्रगतिशील और 'अचलायतन' के आधुनिक कथ्यों से हम परिचित होते हैं।

अपनी कविताओं, कहानियों, उपन्यासों, नाटकों में रवीन्द्रनाथ की तैयारी साफ दिखती है, जो कबीर को समझने और लालन फकीर को जानने के साथ-साथ गुरु ग्रंथ साहिब, गौतम बुद्ध से लेकर पाश्चात्य दर्शन, चित्रकला, साहित्य और संगीत के अध्ययन तक फैला हुआ है। 'ब्रह्मा-समाज' ने उनके व्यक्तित्व को एक खास तेवर दिया था जिसके चलते रवीन्द्रनाथ में रचने की सामर्थ्य के साथ परिवर्तन और प्रयोग करने का साहस भी था और इसीलिए कला की हर विधाओं में वे वैसा सब कुछ सके जो 'नया', समकालीन और आधुनिक था। अपने नाटकों में उन्होंने गीत, नृत्य, वाद्य, कविता, कथा और मंचसज्जा का कलात्मक समावेश कर एक सर्वथा नए संश्लेषण के रंगमंच को प्रस्तुत किया।

उनकी रंग प्रस्तुतियों में रंग और स्थापत्य का अभूतपूर्व प्रयोग हुआ है। पात्रों की वेशभूषा, साज-सज्जा, संवाद और भाव-भंगिमाओं में एक अद्भुत लयात्मकता दिखती है जो निःसंदेह अपने समय के दर्शकों के सौन्दर्य-बोध को बहुत गहरे तक तुष्ट करता था। इसके ठीक विपरीत हम रवीन्द्रनाथ के चित्रों में पाते हैं जो हमें अपने वैविध्य और वैचित्र्य से न केवल चमत्कृत करते हैं, बल्कि वे चित्रकला के एक ऐसे रूप से भी हमारा परिचय कराते हैं जिसे आम सौन्दर्य शास्त्रीय समझ से 'सुंदर' नहीं कहा जा सकता।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविताओं में एक शब्द बार-बार आया है, 'असुंदर'। असुंदर से कवि का तात्पर्य कुरूप से नहीं है। इसलिए यह शब्द सुंदर और कुरूप से हटकर है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर 'सुंदर' की आराधना सौन्दर्य के जिन उपकरणों के माध्यम से साहित्य में करते हुए दिखाई देते हैं, चित्रकला के लिए उनके वे उपकरण बिल्कुल भिन्न हैं। कविता में तो सुन्दर को वे प्रकृति और प्राणीजगत से ऊपर उठाकर उसे आध्यात्म के साथ जोड़ देते हैं पर, उनके चित्रों में हम सृजन की एक नईदुनिया को बनते हुए देख पाते हैं।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कब से चित्र बनाना शुरू किया था, इसकी कोई निश्चित जानकारी उपलब्ध नहीं है पर वे अपने जीवन के अंतिम दशक में चित्रकला में सक्रिय हुए थे और इसमें गहरे उतरे थे। चित्रकला को उन्होंने 'जीवन संध्या की प्रेयसी' कहा था, पर अपने इस प्रेम को रवीन्द्रनाथ ने पूरे आवेग के साथ निर्वाह किया था, इसमें कोई संदेह नहीं है।

रवीन्द्रनाथ ने अपने बेहद करीबी भारतीय चित्रकला की विभिन्न शैलियों के शोध और अध्ययन में जुटे अनेक चित्रकारों, कला-समीक्षकों और बुद्धिजीवियों को देखा था। इंडियन सोसायटी ऑफ ओरिएण्टल आर्ट की गतिविधियाँ उनके इर्द-गिर्द घटित होती रही थीं पर रवीन्द्रनाथ ने इस कला आंदोलन के प्रभाव से अपने को पूरी तरह से अलग रखा। रवीन्द्रनाथ अपने बचपन में चित्रकला के प्रति आकृष्ट हुए थे, बाद में उनका यह रुझान स्वतंत्र न रहकर कविता के साथ जुड़ गया। अपनी कविताओं को लिखते समय वे व्यापक संशोधन और संपादन करते थे। शब्दों को, पंक्तियों को काटते थे या नए शब्दों से उन्हें विस्थापित करते थे। यह प्रक्रिया निश्चित रूप से एक कवि का अपनी कविता के पहले पाठक बनने के साथ पहले आलोचक बनने की प्रक्रिया है, जो निःसंदेह एक बेहद गंभीर प्रक्रिया है। कविता का शुरूआती प्रारूप जिन शब्दों-वाक्यों के संयोजन से बनता था उसे अंतिम रूप देने के लिए, वे काटते-पीटते थे। रवीन्द्रनाथ ने इस प्रक्रिया के बारे में लिखा है, ''मैं उन परित्यक्त शब्दों को ससम्मान दफनाना चाहता था।'' और इसीलिए हम पाते हैं कि इस ससम्मान दफनाने में रवीन्द्रनाथ रेखाओं से जिस समाधि को रचते हैं वे अपने

आपमें कविता से कम सार्थक नहीं है। कला आलोचकों ने इस तरह की कृतियों को इरेशर्स कहा है।

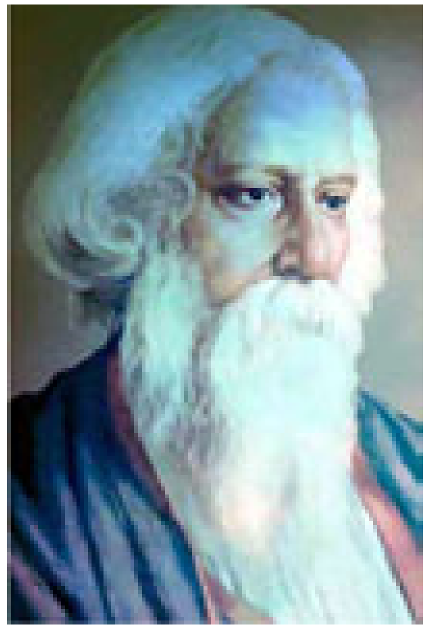

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कब से चित्र बनाना शुरू किया था, इसकी कोई निश्चित जानकारी उपलब्ध नहीं है पर वे अपने जीवन के अंतिम दशक में चित्रकला में सक्रिय हुए थे और इसमें गहरे उतरे थे। चित्रकला को उन्होंने 'जीवन संध्या की प्रेयसी' कहा था, पर अपने इस प्रेम को रवीन्द्रनाथ ने पूरे आवेग के साथ निर्वाह किया था, इसमें कोई संदेह नहीं है।

गैरजरूरी लगने वाले शब्दों को काटने-पीटने के जरिए संशोधन करने के उद्देश्य से बने 'उपोत्पाद' (बाइ प्रोडक्ट) जैसे लगने वाले इन चित्रों को देखने से दो बातें साफ नजर आती हैं। एक, कि ये चित्र केवल गैरजरूरी शब्दों को बिना किसी चित्र परिकल्पना के सघन रेखाओं के नीचे दफनाने मात्र से नहीं बने हैं। दूसरा, कि ये चित्र निश्चय ही कविता को अंतिम रूप तक पहुँचाने के बाद कवि का दूसरे चरण पर किया या स्वतंत्र काम है। यानी, एक ही कागज पर कविता रचना के खत्म होने पर स्वतंत्र चित्र रचना की गई है। यह बात इसीलिए भी सच है क्योंकि कविता के विषय या भाव से इन चित्रों के भाव बिल्कुल स्वतंत्र हैं। 1923 में लिखे 'रक्तकरबी' के मसौदे को देखें - यह न केवल रेखाओं के सघन जाल से निर्मित एक आकृति है, बल्कि इसमें रंग भी भरे गए हैं। इसी प्रकार 1924 का ऐसा ही चित्र कई मायनों में महत्त्वपूर्ण है। 1924 में अपनी पेरू यात्रा के दौरान रवीन्द्रनाथ अस्वस्थ हो गए थे, इसीलिए उन्हें अर्जेन्टीना के एक छोटे-से शहर साँ-इसीडोर में अपने मित्र विक्टोरिया ओका पो के घर रहना पड़ा था। विक्टोरिया ओका पो एक विदुषी महिला थीं जिन्होंने रवीन्द्रनाथ को गहरे रूप से प्रभावित किया था। रवीन्द्रनाथ ने अपना कविता-संग्रह 'पुरबी' विक्टोरिया ओका पो को ही समर्पित किया था। इस संग्रह की कविताएँ रवीन्द्रनाथ ने अपने अर्जेन्टीना प्रवास के दौरान लिखी थीं। इस संग्रह की पाण्डुलिपि में ऐसे अनेक चित्रों को हम पाते हैं जो अर्जेन्टीना-पेरू की आदिम कलाओं से लेकर कवि के अर्जेन्टीना प्रवास के अनुभवों को दर्ज किए हुए हैं। अंग्रेजी में लिखी कविता की कुछ पंक्तियाँ हैं पर, शब्दों को काट-पीट कर जो आकृति उभरकर सामने आती है वह एक तीखे नाक-नक्शों वाली स्त्री का है (जो भारतीय मूल की नहीं लगती) साथ ही इस चित्र में छिपी अनेक आकृतियाँ हैं जो पेरू की लोक और आदिम चित्रों में रचित आकृतियों की याद दिलाते हैं। 'पुरबी' संग्रह के ये चित्र रवीन्द्रनाथ के कला-जीवन के पड़ाव के एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज भी हैं।

रवीन्द्रनाथ आदिवासियों की कला से बेहद प्रभावित थे। ये कला दैनंदिन जीवन में काम आने वाली चीजों को आकर्षक बनाने के लिए घड़ों, बर्तनों, औजारों पर उकेरे जाते रहे हैं। यह कला कर्म की एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें रचनाकार से ज्यादा उसका समाज महत्त्वपूर्ण होता है, लिहाजा ऐसी कृतियाँ हस्ताक्षरित नहीं होती हैं। साथ ही इनमें किसी कलाकार विशेष की कला निपुणता से ज्यादा किसी कबीले या प्रांत की अपनी खास पहचान को देखा जा सकता है।

रवीन्द्रनाथ निश्चय ही मात्र सतही रूप से इन आदिम आकृतियों के प्रति आकृष्ट नहीं हुए थे, वे रचनाकार और कृति के बीच इस आदिम रिश्ते से भी प्रभावित थे, जो सभ्यता के विकास के साथ, समाज के वर्गों में बँटने के साथ कला-पृष्ठपोषक वर्ग जैसी अवधारणा के अस्तित्व में आने के साथ-साथ लुप्त हो गई।

रवीन्द्रनाथ के व्यक्तिगत पुस्तकालय के संग्रह में हम 'हिस्ट्री ऑफ मैनकाइन्ड' नामक पुस्तक पाते हैं। फ्रेडरिक रेटजेल लिखित, (1897) दो खण्डों में प्रकाशित इस महत्त्वपूर्ण पुस्तक में आदिम कला के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से चर्चा के साथ लगभग 1000 चित्र भी हैं जो आदिम सभ्यता की कला और संस्कृति के बारे में पाठकों को परिचित कराते हैं।

रवीन्द्रनाथ इस पुस्तक से निश्चय ही प्रभावित हुए थे, क्योंकि उनकी कला में आदिम आकृतियों और संरचनाओं का स्पष्ट प्रभाव दिखता है।

विचित्र चित्रों का समारोह

रवीन्द्रनाथ के चित्रों में विचित्र जीव आकृतियों की उपस्थिति उनकी सुंदर-असुंदर और कुरूप की अवधारणा को एक जमीन भी देती है। मानव सभ्यता के विकास क्रम में चित्रों के सुंदर होने की अनिवार्यता ने चित्रों के स्वाभाविक विकास को कई कृत्रिमताओं से बोझिल किया है जो यथार्थ चित्रण के नाम पर आँखों से देखे गए प्रकृति और प्राणी जगत के निपुण अनुकरण को चित्रकला के लिए जरूरी समझा गया। इस प्रक्रिया में चित्रकला में 'रचने' की गुंजाइश कम होती चली गई है और इसीलिए अन्य कलाओं से इसकी दूरी भी बढ़ी। 1860 के आसपास फोटोग्राफी का अगामन ने तो ऐसी कला के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न लगा दिया।

रवीन्द्रनाथ अपने चित्रों में कला की ऐसी कृत्रिम दुनिया से निकलकर विश्वकला के कई महत्त्वपूर्ण आधुनिक कलाकारों के साथ खड़े दिखाई देते हैं।

इन चित्रों में यदि हम ध्यान से देखें तो रवीन्द्रनाथ के चित्रों की एक शैलीगत विशेषता को समझ सकते हैं। इन चित्रों में उजली सफेद रेखाओं की उपस्थिति इन्हें एक खास पहचान देती है। इन रेखाओं को करीब से देखने पर हम पाते हैं कि ये सफेद रंग से बनी रेखाएँ नहीं हैं, बल्कि ये सफेद स्पेस या रिक्त स्थान हैं, जो दो गहरे रंगों के बीच बचे कैनवास या कागज का स्वाभाविक रंग है। यह रवीन्द्रनाथ के चित्रों का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है, क्योंकि ये 'रेखाएँ' यह भी प्रमाणित करती हैं कि रवीन्द्रनाथ के चित्र स्वतः स्फूर्त होने के साथ-साथ बेहद सावधानी से रचे गए पूर्व निर्धारित संयोजन है। ऐसी सफेद रेखाओं के जरिए (जो वास्तव में स्पेस का एक विशेष रूप है) चित्र रचना, एक खास मानसिक तैयारी की माँग करता है। रवीन्द्रनाथ की इन रेखाओं को हम उनके चित्रों में कई रूपों में पाते हैं। एक ओर जहाँ ये रेखाएँ लयात्मक हैं, वहीं अन्यत्र इनके शुद्ध ज्यामितीय स्वरूप से हम परिचित होते हैं। यहाँ यह गौरतलब है कि ऐसे दोनों प्रकार के चित्रों में संरचना के मूल लय को बरकरार रखा गया है।

रवीन्द्रनाथ के दो महत्त्वपूर्ण चित्रों में इन रेखाओं की उपस्थिति रात के अँधेरे में एक स्थापत्य को खास हाइलाइट देता है। जो किसी प्रकाश-उत्स पर निर्भर नहीं है, यानी ये रेखाएँ अपेन आपमें प्रकाशित हैं। जैसा कि हम प्रायः

अँधेरे में बने चित्रों में पाते हैं, उससे बिल्कुल अलग, किसी बाहरी उत्स से आते प्रकाश से ये हाइलाइट नहीं हुए हैं। इन दो चित्रों में ऐसे भवनों का चित्रण है जिसके स्थापत्‍और गतिविधियाँ हमें उस रंगमंच की याद दिलाती है जहाँ मंच सज्जा के उपकरणों और स्थापत्य की स्थिरता कके बीच अभिनेताओं की गतिविधियाँ एक नाटकीय कंट्रास्ट पैदा करता है, जो रंगद्वारी या प्रोसीनियम रंगमंच की एक विशेषता है।

अभिनय

रवीन्द्रनाथ के चित्रों के विशाल संग्रह में एक स्वतंत्र खण्ड के रूप में हम नाटक-अभिनय-नृत्य पर बने चित्रों को रख सकते हैं। हालाँकि ये चित्र न तो किसी खास शृंखला के अंतर्गत रचे गए हैं और न ही किसी नाटक विशेष से इन्हें हम सीधे जोड़ पाते हैं। नृत्य की गतिमय भंगिमा में एक बेहद आकर्षक चित्र है जिसमें तेजगति से उसके बिखरे हुए बालों और वस्त्र में एक अद्भुत लय दिखता है। दो अन्य चित्रों में भी हम नृत्य की विशेष मुद्रा में नर्तकियों को पाते हैं, पर ये दोनों चित्र इस मायने में विशिष्ट भी हैं, क्योंकि ये चित्र रवीन्द्रनाथ के उन चित्रों में से हैं जहाँ नर्तकियों की हथेलियों में आग है।

नाटक के अन्य अनेक चित्रों में हम किसी दृश्य को अभिनीत होते पाते हैं जहाँ संवाद को मुखर होते सुना जा सकता है।

चेहरे

रवीन्द्रनाथ ने असंख्य पोर्ट्रेट या चेहरों के चित्र बनाए थे। उनमें स्त्री, पुरुष, बच्चे अपने-अपने स्वतंत्र अंदाज में दिखते हैं, इसीलिए उनका हरेक पोर्ट्रेट विशिष्ट है। पर इन सबमें एक दिलचस्प पोर्ट्रेट है जिसे हम अन्य कारणों से भी महत्त्वपूर्ण कह सकते हैं। रवीन्द्रनाथ के चित्रों में प्रायः हमने उन्हें भारतीय

कला की पुनरुत्थानवादी कोशिशों से दूरी बनाये रखते देखा है, इस पोर्ट्रेट में आँखें, होंठ और चेहरे के आकार में हम अजंता के चित्रों के प्रभाव को साफ देख पाते हैं। यह रवीन्द्रनाथ के संदर्भ में एक महत्त्वपूर्ण व्यतिक्रम है।

रवीन्द्रनाथ के चित्रों की संरचना में हम एक तत्त्व को बार-बार आते देखते हैं। रवीन्द्रनाथ चित्र रचना में स्पेस का एक खास आजादी के साथ इस्तेमाल करते हैं जिसमें संयोजन के प्रचलित नियमों के प्रति पूरी तरह से उपेक्षा दिखती है। उनके चित्र, प्रायः कैनवास के एक छोर से दूसरे छोर तक - बाँयें से दाहिने और ऊपर से नीचे तक फैले हैं। ऐसे कसाव भरे संयोजन प्रायः उनके चेहरों के चित्रण या पोर्ट्रेट में देखा जा सकता है जहाँ, कई बार सर का ऊपरी हिस्सा कैनवास की सीमा के पर चला जाता है।

रवीन्द्रनाथ के पोर्ट्रेट में हास्य कौतुक से भरे चेहरे भी है। ये चेहरे नाटक के विदूषकों के से लगते हैं जिनके चेहरों की रेखाओं को इतनी सावधानी से उकेरा गया है कि हम इनमें एक खास भाव को स्पष्ट देख पाते हैं। ऐसे ही अनेक विशेष भाव हमें उनके दूसरे पोर्ट्रेट्स में मिलते हैं जो उनके चेहरों के चित्रों में एक विशिष्ट वैविध्य प्रदान करता है। रवीन्द्रनाथ ने कई सेल्फ पोर्ट्रेट भी बनाए थे जो प्रायः उनके फोटोग्राफ पर आधारित लगते हैं पर इनमें से कुछ ऐसे भी चित्र हैं जो उनके आत्मविश्वास से भरी रेखाओं की शक्ति से हमें अवगत कराते हैं।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर के पोर्ट्रेट या चेहरों के चित्रों का एक बड़ा हिस्सा महिलाओं के चित्रों का है। उन्होंने जिस सम्मान और प्रेम से महिलाओं को अपने चित्रों में प्रस्तुत किया है उसी लगन से अपनी रचनाओं में भी उन्हें उनका स्थान दिया है। उनके लिए सौन्दर्य एक नए अर्थ के साथ सामने आता है, जैसे इस कविता को ही लें, जहाँ एक काली लड़की के बारे में वे लिखते हैं (लेखक द्वारा भावानुवाद) : उसे मैं कृष्णकली कहता हूँ/गाँव के लोग उसे काली कहते हैं/एक बादल से गहराए दिन मैंने देखे थे/ उस काली लड़की के काले हिरण-नयन। कई आलोचकों ने रवीन्द्रनाथ के चेहरों के चित्रों में कृष्णकली को चिह्नित करने की कोशिश की है। रवीन्द्रनाथ ने इन चित्रों में ऐसी महिलाओं के चित्र बनाए हैं जो समाज के निम्न वर्ग से आती हैं। ऐसे चित्रों में आदिवासी महिला का चित्र इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह एकमात्र चित्र है जहाँ रवीन्द्रनाथ ने किसी महिला के वक्ष को अनावृत दिखाया है, पर साथ ही यहाँ यह भी गौर करने लायक है कि यह चित्र न्यूड चित्रों के सेन्सुअस गुणों से परे है। यह चित्र पत्थर को तराशकर बनी नारी मूर्ति-सी लगती है, जिसके आत्मविश्वास और सरलता को रवीन्द्रनाथ ने गहरे ममत्व के साथ चित्रित किया है। रवीन्द्रनाथ के चेहरों का चित्रण प्रायः यूरोपीय पोर्ट्रेट बनाने के प्रचलित ढंग से भिन्न है। गौर से देखने पर हम पाते हैं कि अधिकांश पोर्ट्रेट्स में पुरुष या स्त्री, चित्रकार को सीधे नहीं, बल्कि अपने कंधों के ऊपर से मुड़कर देख रहे हैं। ऐसे पोर्ट्रेट्स में चेहरा ठीक उसी प्रकार पूरा दिखता है जैसा शास्त्रीय यूरोपीय पोर्ट्रेट्स में दिखता है, पर रवीन्द्रनाथ अपने चित्रों में इन चेहरों को 'आधार' देते हैं। कई चित्रों में यह 'आधार' कहीं कंधा है, कहीं (महिलाओं के चित्र में) बालों की लटें या साड़ी के पल्लू हैं। इन खास संरचना में बने चेहरों के चित्रों में, दर्शक की नजर मूल चेहरे पर बेहतर ढंग से केन्द्रित होती लगती है। महिलाओं के पोर्ट्रेट्स में उन्होंने कुछ विदेशी महिलाओं के चित्र भी बनाए हैं पर कई चित्रों में तत्कालीन भारतीय समाज में शिक्षित होती महिलाओं को भी हम सहज ही पहचान लेते हैं। रवीन्द्रनाथ के ऐसे चित्रों की कला विथिका में जितने भी चित्र हैं, वे सब अपने आप में स्वतंत्र हैं, ठीक रवीन्द्रनाथ की रचनाओं के नारी पात्र जैसे। 'घरे-बाइरे' की विमला, 'नष्ट नीड़' की चारुलता, 'रक्तकरबी' की नन्दिनी या फिर चाण्डालिका के बीच फैले वैविध्य के समानांतर हम रवीन्द्रनाथ के चित्रों में नारियों को पाते हैं - वे वर्ण में, वर्ग में, शिक्षा में और साहस में एक-दूसरे से भिन्न हैं। इनकी आँखों में कहीं विजय का उल्लास है तो कहीं पराजय की ग्लानि, कहीं शिक्षा का आत्मविश्वास है तो कहीं नारीत्व का गर्व। रवीन्द्रनाथ के महिलाओं के चित्र अपने समय के एक महत्त्वपूर्ण यथार्थ को भी प्रस्तुत करते हैं जो उनके साहित्य के यथार्थ के बहुत करीब जाता है।

प्रकृति चित्र

रवीन्द्रनाथ के प्रकृति चित्रों में कोलाहल से दूर एक खास प्रकार की गम्भीरता को सहज ही देखा जा सकता है। उनके लेण्डस्केप की यह खामोशी उनके अन्य चित्रों में नहीं मिलती। इन प्रकृति चित्रों में प्रयोग की व्यापकता नहीं है, बल्कि इनमें कुछ समानताएँ हैं जिसे चित्रकार ने बड़ी सजगता के साथ सभी लेण्डस्केप में मौजूद रखा है।

रवीन्द्रनाथ के प्रकृति चित्रों में डीटेल्स नहीं है, यहाँ पेड़ की पत्तियों का विवरण नहीं है, चरियल मैदान है पर उस पर घास का अस्तित्व नहीं दिखता। कहीं तनों से लेकर पूरे पेड़ में फैली हरियाली है पर इसकी व्याख्या नहीं है। इन सभी प्रकृति-चित्रों में कहीं भी मानव या अन्य प्राणियों की उपस्थिति नहीं है। पर इन सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण पक्ष इन प्रकृति चित्रों का आकाश है, जो चित्रों में डीटेल या विवरण की अनुपस्थिति में हमारा पूरा ध्यान अपनी ओर ले जाता है। एक विशाल प्रकृति-चित्र में रवीन्द्रनाथ ने पूरे चित्र को जंगल के पेड़ों के तनों-शाखों और पत्तियों की हरियाली से भरकर एक छोटा हिस्सा खुला छोड़ दिया है। जहाँ से हम आकाश के एक छोटे टुकड़े को ही देख पाते हैं। यह एक ऐसा अभिनव प्रयोग है जिसके जरिए बावजूद अपने छोटे दृश्य आकार के आकाश की विशालता कम नहीं हो पाती। प्रकृति चित्रों के ऐसे आकाश को हम दूसरे रूपों में देख पाते हैं। प्रकृति चित्रण में रवीन्द्रनाथ के सीमितप्रयोग के बावजूद उनके कुछ लेण्डस्केप हमें जापानी-चीनी चित्रकला की प्रकृति की याद दिलाती हैं। रवीन्द्रनाथ ने रेखाओं से (स्याही-कलम) कुछ प्रकृति चित्र बनाए हैं जिनका अपना एक स्वतंत्र भाव है, यहाँ हम मन्दिर, उसका गर्भगृह और उस पर उभरते हुए दरार को देख पाते हैं- आसपास की वनस्पति एक खास उजाड़, परित्यक्त और निस्तब्ध वातावरण बनाती है, जिसे सहज ही अनुभव किया जा सकता है।

पर, संख्या में रवीन्द्रनाथ के लेण्डस्केप कम हैं, शायद इसलिए कि अपनी साहित्यिक रचनाओं में प्रकृति के जिस व्यापक रूप की कल्पना रवीन्द्रनाथ ने की थी उसे चित्रों में उभारना शायद उनके लिए असंभव न था पर उन्हें यह जरूरी नहीं लगा होगा। कई विधाओं में सचल रचनाकारों के साथ ऐसा होते प्रायः देखा गया है कि यदि वे किसी एक विषय को किसी एक विधा में पूरी तरह से व्यक्त कर अपने को निःशेष या एक्जास्ट कर लेते हैं तो दूसरी कलाविधा में उस विषय पर वे काम करने की जरूरत नहीं महसूस करते हैं। रवीन्द्रनाथ के साथ प्रकृति चित्र की रचना में शायद ऐसा ही घटित हुआ होगा। रवीन्द्रनाथ ने साहित्य में जिस प्रकृति का वर्णन किया है वह उनके देखे हुए प्रकृति का अनुभव मात्र नहीं है। अपनी रचनाओं में कवि ने प्रकृति की व्यापकता और विविधता की पुनर्रचना की है। उदाहरण के लिए हम कुछ कविता की पंक्तियों को देख सकते हैं (लेखक द्वारा भावानुवाद)

गृहों से गृहांतर तक की यात्रा
रोशनी हाथों में लिए निकले हैं
अंधेरे के यात्री/ग्रह, तारों और सूर्य,
गाँव के परे उस लाल माटी के पथ पर
खेतों की फसलों में तुम्हारे प्राणों के

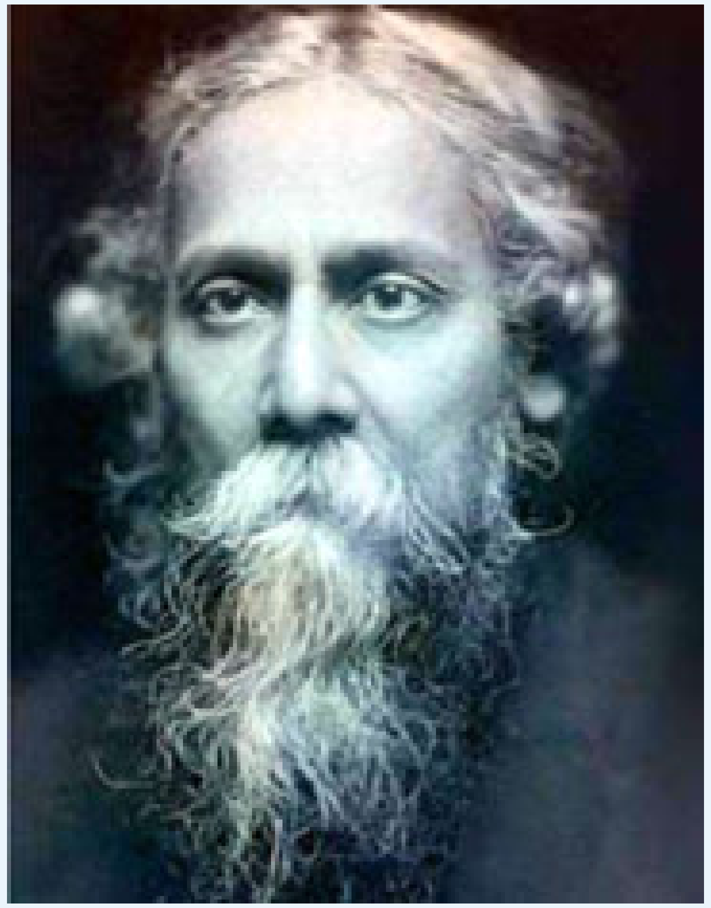

स्पर्श हैं
फूलों-फूलों पर अपने चरण-चिह्न
छोड़ जाते हो,
सूर्य-तारों से भरा है यह आकाश/विश्व
भरा है प्राणों से या
मुध-महक से भरे/कोमल-स्निग्ध छाँव
वाले बाँस-कुंज तले/साँवली सी कौन
स्वप्न-माया/बनी रहती है वर्षा जल में।

रवीन्द्रनाथ प्रकृति को अपनी इंद्रियों से अनुभव करते हैं इसलिए उनकी साहित्यिक कृतियों में वर्ण-गन्ध-ध्वनि-स्वाद-स्पर्श सभी उपस्थित हैं, यही नहीं इस अनुभव के साथ कल्पना को जोड़कर वे अपने सृजन को एक ऐसी ऊँचाई तक ले जाते हैं जहाँ अमूर्त भी मूर्त हो उठता है। हम उनकी रचनाओं में उनके 'जीवन-देवता' का जिक्र पाते हैं जो देवता सम्बन्धी आम धार्मिक अवधारणा से परे है। पर बार-बार वे अपनी रचनाओं में सृष्टि में इस जीवन देवता की उपस्थिति को चिह्नित करते हैं।

पक्षी

रवीन्द्रनाथ के चित्रों में पक्षियों के चित्रों का भी एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। पक्षियों के चित्रों में अधिकांश चित्र पक्षियों के लयात्मक शारीरिक संरचना के अनुरूप हैं। पर कुछ चित्रों में रवीन्द्रनाथ ने इन्हें ज्यामितीय रेखाओं और आकारों में बनाया है। कहीं-कहीं ये प्रागैतिहासिक चोंच में दाँत जड़े आर्कियाप्टेरिस जैसे लगते हैं तो कभी मिथकीय पक्षी आईकेरस जैसे। झुण्ड में चिड़ियों के दो चित्र यहाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, क्योंकि इन चित्रों की संरचना में चित्रकार रवीन्द्रनाथ की सृजनशीलता की एक नई ऊँचाई से हम

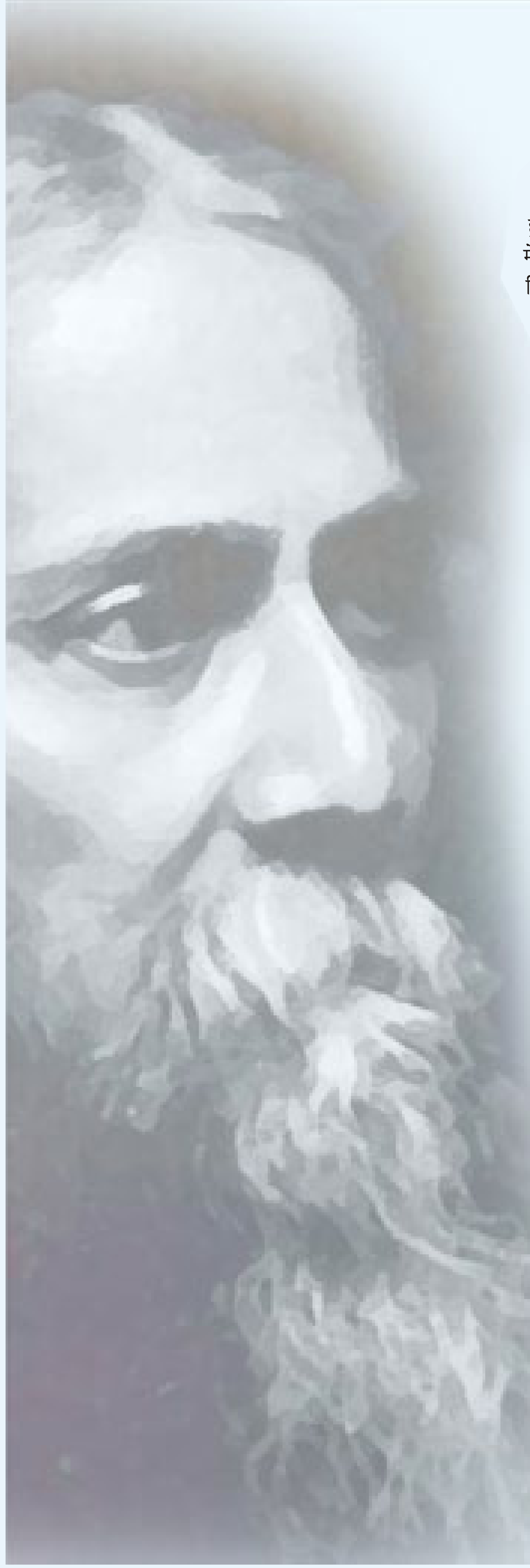

परिचित होते हैं। दोनों ही जटिल संरचनाएँ हैं, पर एक चित्र में सभी चिड़ियाँ आपस में जुड़ी हुई हैं जो न केवल पूरे कैनवास पर फैले हैं, बल्कि उसके बाहर तक भी उनका विस्तार है। चित्र का ट्रीटमेंट ऐसा है कि जिससे उड़ती हुई पक्षियों के हल्केपन को दर्शक महसूस करता है। इससे काफी भिन्न एक दूसरे चित्र में सुस्ता रहे चिड़ियों का एक झुण्ड है जो बावजूद एक झुण्ड में होने के यहाँ हरेक चिड़िया स्वतंत्र भाव, मुद्रा और आकार में उपस्थित है।

रवीन्द्रनाथ के चित्रों में आमजन

रवीन्द्रनाथ के चित्रों में देवलोक की लीला कथाएँ नहीं हैं, न ही उनके चित्रों में भारतीय धार्मिक पुराण कथाओं का चित्रण है। उनकी कला में पतनशील मूल्यों के पुनरुत्थान के विरोध में किया गया एक सार्थक प्रतिरोध है। रवीन्द्रनाथ अपने समस्त शिल्पकर्म के माध्यम से हम तक एक जरूरी संदेश भी पहुँचाते हैं कि प्रतिरोध की कला, कला के वैकल्पिक स्वरूप की प्रस्तुति से ही संभव है।

अवनीन्द्रनाथ, ई.बी. हैवल, असित कुमार हालदार, नंदलाल बोस आदि चित्रकारों का विशाल दल कला के माध्यम से जिस भारतीय हिन्दू स्वरूप के पुनरुत्थान में जुटा था, रवीन्द्रनाथ उसमें सिरे से असहमत थे। पर उन्होंने इसके विरोध के लिए सबसे सार्थक प्रयास एक विकल्प की चित्रकला को सामने लाकर किया। भारतीय कला की पुनरुत्थानवादी चित्रकला में जहाँ राजा-रानियों देवी-देवताओं का ही चित्रण था, वहीं रवीन्द्रनाथ ने इन कलाकारों के विकल्प के रूप में अपने चित्रों में पहली बार आमजन को स्थान दिया। गाँव की महिलाओं-पुरुषों के समूह को, उनके सुख-दुःख के साथ उनके जय-पराजय के मुहूर्तों को चित्रित कर वे आने वाली पीढ़ी के चित्रकारों के लिए जनपक्षधर कला की संभावनाओं के दरवाजे खोलते हैं। उनके चित्रों में आमजन के मुरझाए हुए चेहरे हैं, ठीक उसी तरह जैसे प्रेमचन्द की रचनाओं के पात्र के हैं। वे देवकीनंदन खत्री के तिस्मी पात्रों को पीछे छोड़ प्रेमचन्द के पात्रों से अपना रिश्ता कायम करते हैं। इसलिए रवीन्द्रनाथ के ऐसे चित्र भारत के सभी प्रांतों के दर्शकों के लिए भाषा की सीमाओं के परे, प्रासंगिक हैं।

रवीन्द्रनाथ की चित्रकला का एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक पहलू यह भी है कि उन्होंने पहली बार अपने कैनवास पर समाज के हाशिए पर रहे लोगों को चित्रित कर भारतीय कला को दिखाया कि केवल राजा-महाराजा या देवी-देवताएँ ही नहीं, आमजन भी चित्र के विषय बन सकते हैं।

शायद इसी समझ से प्रेरित होकर जैनुल आबेदिन पाश्चात्य कला शिक्षा और नवभारतीय कला की जड़ता को तोड़कर अपने कैनवास पर भूखे, अकाल पीड़ित और शोषित लोगों को ले आ पाते हैं। चित्त प्रसाद इसी रास्ते पर चलकर झुग्गी-झोपड़ियों में जी रहे लोगों के सपनों और संकल्पों को रंगते हैं और अवनीन्द्र नाथ, नंदलाल, यामिनी राय, असित हालदार के संभ्रांत अभिजात और सुकोमल 'दीवाने खास' के दरवाजे तोड़कर आम जनता के प्रवेश को संभव बनाते हैं।

चित्त प्रसाद, जैनुल आबेदिन, सोमनाथ होड़, कमरूल हसन जैसे चित्रकार साहित्य और रंगमंच की जनपक्षधरता के समानांतर चित्रकला के जनपक्षधर स्वरूप को पहली बार स्थापित कर भारतीय चित्रकला की एक सार्थक और समर्थ कला विधा के रूपों से हमारा परिचय कराते हैं। और ऐसे प्रयासों की नींव के रूप में निः संदेह रवीन्द्रनाथ के चित्र और उनकी कला चेतना का महत्त्वपूर्ण योगदान है। स

(साभार : रविभूषण, अनिल सिन्हा, मधु अग्रवाल, रतन परिभू, सुब्रतो विश्वास)

आदित्य शुक्ल की कविताएँ

"विद्रूपताओं के प्रति हर गुस्सा यूँ तो जायज है लेकिन यदि उसे सर्जनात्मक आँच में और तपा दिया जाए तो फिर वह सार्थक प्रतिरोध हो उठता है। युवा कवि आदित्य शुक्ल की कविताएँ इसी आँच में तपकर निखरी कविताएँ हैं। उन्हें समकाल की समझ और चिन्ता तो है ही, विषमताओं के प्रति एक नियंत्रित नाराजी भी। 'नियंत्रित' इसलिए कि वह गुस्से की भाप बनकर नारों में स्खलित होने के बजाए तप्त लू बन कर हमें एक बेचैन बुखार से भर देती है। कहना न होगा कि यह बेचैन ताप ही तमाम परिवर्तनों का बीज होता है। पहली कविता 'गवैयों का मौसम' अपनी स्थानीय स्मृतियों, जड़ों और वापसी की कसक को लेकर लिखी गई कविता है-एक मंद और थिर तापमान वाली कविता। 'कि हे जय जीवन प्राण/ इन वर्षों कहाँ-कहाँ भटका' की पीड़ा कवि-मन के अन्तर्तम में अवस्थित विषाद और कलप को अभिव्यक्त करती है। यह निरा नॉस्टैल्जिया न होकर अपने स्थानीय पर्यावरण को धरोहर मान लेने का आत्मीय आग्रह है। 'समीकरण' एक छोटी कविता है लेकिन उतनी ही बड़ी राजनीतिक चेतना और समझ लिए! यहाँ जेनुइन और पाखण्डी सभी मनुष्यता के पतन का रोना रोते हैं-अपनी भाषा, अपने व्याकरण और अपनी सुविधा के अनुसार। संत, चोर, हत्यारे, बाबा, पण्डे, चाय-चौकीदार जैसे शब्दों का प्रयोग यहाँ एक प्रभावी अर्थ-व्यंजना रचता है जिसमें हमारे समय का क्लिष्ट समीकरण खुलता जाता है।तीन छोटी कविताओं में युवा कवि आदित्य शुक्ल ने कुछ स्थितियाँ या यूँ कहें कि शब्द-चित्र प्रस्तुत किये हैं जो इस विघटित और जर्जर हो रही अवस्था का सूक्ष्म आकलन है। यह आकलन एक वस्तुनिष्ठ सत्य है। 'किराए के लिए घर से लेकर जलने के लिए श्मशान' के लिए अब एक नम्बर भर काफी है। जीवन स्थितियों और संवेदनों के इस तरह व्यवसायीकरण का कच्चा चिट्ठा बहुत बेबाकी से खोलती हैं ये तीन छोटी कविताएँ। इन छोटी कविताओं से बड़े अर्थ निकालने के लिए पत्ती और फूलों के गिरने के स्थान का फर्क और उनके हश्र का बीजगणित समझना आवश्यक है। 'अभी इस जगह से कोई सिसक पड़ेगा' छोटी और अंडरटोन कविता है जिसमें वेदना और दु:खों के संसार का एक दृश्य है। झिंगुर, साँप, छिपकलियाँ, मृतात्माएँ एक विषाद-संसार का फैण्टेसीनुमा दृश्य रचती हैं जहाँ रोने को हर कोई तैयार है लेकिन रोने का कोई ठिया नहीं। 'एक अदद बंदूक की जरूरत' इस दुनियावी भीड़ में अकेलापन झेल रहे मनुष्य की मनोदशा और मनोविज्ञान की कविता जो एक पागलपन, स्किजोफ्रेनिया या भयावह कल्पना संसार में जीने को अभिशप्त है। वह निराश भले न हो लेकिन इतना विवश अवश्य है कि उसे बीड़ी, गांजा या बंदूक कुछ भी 'ऑफर' किया जा सकता है इन मानसिक अवस्थितियों से जूझने के लिए! लेकिन ऐ भाई, ये सरेण्डर नहीं है। 'नींद ही है कि सच है' एक अलग शिल्प और आस्वाद की कविता है। इस कविता को आपको व्याकरण की बेड़ियों से निकालकर पढ़ना होगा। यहाँ अर्धविराम, पूर्णविराम न खोजिएगा क्योंकि इस बेचैन कविता में भी कहीं विराम नहीं है। एक पहाड़ी नदी की तरह एक शोर के साथ बहती जा रही कविता का वेग ही उसके भीतर के आक्रोश को अभिव्यक्त करता है। यहाँ भयावह सच्चाईयाँ भी हैं और एक फैण्टेसी भी जिन्हें बेहद खूबसूरती से आदित्य ने इस कविता में साधा है-'तितलियाँ ही हैं कि न जाने कुछ और और स्वप्न में नींद का ऐसा खुमार है कि तितलियाँ जान पड़ती हैं वे।''बस स्टैण्ड पर' कविता में एक आम स्थल का जिक्र है जिसमें हरे पत्तों और कागज के टुकड़ों के माध्यम से एक दृश्य-बन्ध या कुछ दृश्य-बन्धों को रचा गया है। इस कविता में बहुत उतार-चढ़ाव नहीं है- यह ऐसी ही थिर कविता है जैसे कि किसी कस्बे का जीवन होता है। रेखांकित करने योग्य यह है कि यहाँ कवि ने कविता का विषय बस स्टैण्ड चुना है जो कि किसी भी ठहरे हुए कस्बे का सबसे गतिमान स्थल होता है। एक से दृश्यों का दोहराव..और पुनरावृत्ति इस कविता में अंर्तव्याप्त उदासी को खोलती है। 'वे मेरे गाँव के कब्र' भी एक अंडरटोन कविता है जिसमें अनुपस्थित और उपस्थित के बीच एक सम्बंध स्थापित किया गया है। फूलों की उपस्थिति और कब्र की अनुपस्थिति के बीच में वेदना भी है और दर्शन भी। यहाँ कवि को स्वयं की भी खोज है यहाँ तक कि अपनी असफलताओं की भी। 'कुर्सी की आत्महत्या के बाद' एक फैण्टैसी है। यह दरअसल एक समग्र राजनीतिक कविता है जो सत्तातंत्र की दुरभिसंधियों और क्रूरताओं का बयान है। कवि कुर्सी की आत्मा को लौटाना चाहता है ताकि ताबूत में मुर्दा या जिन्दा मनुष्यों को दफन करने से रोक सके क्योंकि सत्ता के लिए इन दोनों में कोई फर्क नहीं है। 'जब मैं...' कविता में युवा कवि नदी, पर्वत, बर्फ, बादलों जैसे प्राकृतिक बिम्बों के सहारे एक समय-यात्रा करता है जिसमें अतीत, वर्तमान और भविष्य सभी अन्तर्निहित है। 'मेरे अंदर एक मरा हुआ' एक बेचैन कवि का अन्तर्द्वन्द्व है, एक आत्म संघर्ष है। उसकी इस बेचैनी में काफ्का, पेसोआ और मार्केज शामिल हैं। यह एक लेखक की 'मल्टीपर्सनॉल्टी' का महज बखान न होकर विभिन्न लेखकीय व्यक्तित्वों की एक मनुष्य के भीतर एक टकराहट या आवाजाही है जो अंतत: एक लेखक है। भले ही इन विलक्षणों द्वारा उसे धीमे-धीमे दीमक की तरह चाटा जा रहा हो। 'पता न चल पाने वाली घटना' एक और महत्वपूर्ण और अंतत: एक उम्मीद की कविता है। बेहद मामूली और गैरजरूरी समझ लिए जाने वाले प्रसंगों को अपनी तरह से डिकोड करती यह कविता हर चरण, हर पद में एक मानवीयता की पुरजोर माँग है। अभीष्ट यही कि गाने के लिए मौसम की नहीं एक गीत भर की जरूरत होती है। युवा कवि आदित्य शुक्ल एक अत्यंत प्रतिभाशाली, तार्किक, मार्मिक लेकिन बेचैन कवि हैं। इस बेचैन और गुस्साई कविताई को उन्होंने अपनी अनूठी सर्जनात्मक प्रतिभा से साधा है जिसका प्रतिफल है ये कविताएँ जो हमारे भीतर भी वही सधी हुई बेचैनी उत्पन्न करती हैं जो किसी बदलाव के लिए एक चैनेलाइज्ड और जरूरी तापमान होता है।"

निरंजन श्रोत्रिय

गवैयों का मौसम

किसी वासन्ती दिन कूक बन तुम्हारे गाँव आ पधारूँ
किन्हीं पत्तों की ओट में छिप जाऊँ
किसी आखिरी उपलक्ष्य तुम्हें स्मृतियों में रखूँ
निरखूं परखूँ
कि हे जय जीवन प्राण
इन वर्षों कहाँ-कहाँ भटका
कहाँ से कहाँ आ गई मेरी नौका इस संकट नदी में
कितनी हूक से उड़ा था पंछी
एक अजनबी की मानिन्द
अपने ही दरवाजे से गुजरता रहा
मुझे देखकर मेरे घर की दीवारें मेरा नाम पुकारती हैं
किसी दीन-सा निःसंग
यह गवैयों का मौसम।

समीकरण

संसार में कई तरह के सुखी लोग हैं
अपना बिछावन खुद बनाने वाले बेसहारा लोग
मरते हुए अकेली रात बिताने वाले विकल लोग
सांसारिक गणित से ऊबे हुए
संत, चोर, हत्यारे, बाबा, पंडे, हलवाई, चाय-चौकीदार
दूबे, पाण्डे, चौबे, छब्बे, क्षत्रिय, वैश्य
अपनी-अपनी तरह से लोग रोना रोते हैं
मनुष्यता के पतन का।

तीन छोटी कविताएँ

आवश्यक सूचनाः
इश्तिहार के लिए बोर्ड खाली है
किराए के लिए घर
चलने के लिए सड़क
खाने के लिए रेस्तरां
जलने के लिए श्मशान
आप किधर जा रहे हैं? नीचे दिए फोन पर सम्पर्क करें।
००

मौसम बदल चुका है
आदमी की नीयत भी
पहले बकरी से काम चला लेने वाला आदमी
आदमखोर हो गया है।

००

सूखी पत्तियाँ मुझ पर गिरती हैं
फूल नहीं गिरते
फूल सड़क पर बीच में गिरते हैं
कारों-ट्रकों से कुचल जाने के लिए।

अभी इस जगह से कोई सिसक पड़ेगा

अंधकार मुझमें झिंगुर बनकर बजने लगा है
झाड़-झंखाड़ियों में बोल रहे हैं साँप
न घर में एक दीया है
ना एक फूटी लालटेन
बिस्तर पर जगह-जगह गिरी हैं छिपकलियाँ
रोने की जगह नहीं है कोई मेरे लिए
हर ओर हर जगह कोई न कोई है
--रोने की फिराक में।
जहाँ कोई नहीं है,
वहाँ भटकती है मृत आत्माएँ
अँधेरे से फूटती हैं अधूरी रह गई सिसकियाँ।

एक अदद बंदूक की जरूरत

मैं इतना अच्छा आदमी हूँ कि सनक गया हूँ
अँधेरे में मुझे आता देख
एक साठ साला औरत अपना आंचल संभालती है
ये शर्म की बात उससे अधिक मेरे लिए
मैं अपने सौ से भी ज्यादा टुकड़े कर सकता हूँ
मेरे मस्तिष्क में कीड़ों का साम्राज्य उग आया है
उनकी टांगें मेरे सिर पर
छोटे-छोटे सींग जैसी बढ़रही हैं
आप मुझे कुछ भी ऑफर कर सकते हैं
बीड़ी, गांजा या बंदूक।

नींद ही है कि सच है

अधखुली आँखों से नींद टपकती
बिस्तर रेशमी होता जाता है। तुम्हें आधा देखते और आधा छूते मैं पूछता हूँ
देखो तो सुबह हो आई है क्या, यह झुटपुटा-सा क्यों है, सूरज लाल है क्षितिज पर देखो तो।
मानसून की पहली बारिश है हो रही। सड़कें भींग गई है। कोई दो प्रेमी इस मिट्टी के रास्ते से गुजरे हैं। बारिश हो रही है। आँखों से टपकती है नींद बिस्तर रेशमी होता जाता है तुम कहती हो चलो कहीं चले चलते हैं।
दूर।
तो क्या तुम मेरे साथ गाँव चलोगी, वहाँ हम खेतों में काम करेंगे और गन्ने और मक्के उगाएंगे
गाँव के लोगों ने कामचोरी में आकर ऐसी खेती करना बंद कर दी है या शायद वे उम्मीद करते-करते ऊब गए हैं अब कुछ और नहीं, अब ईश्वर ही उनका एकमात्र सहारा है। वे अब मंदिरों और प्रार्थनाओं में अधिक मान्यताएँ रखने लगे हैं। बजाए इसके कि वे खेती करते।

गाँव चलोगी क्या

या अगर मन बदल जाए तो मैं तुम्हारे साथ गाँव को जाने के लिए बैठे ट्रक पर से अचानक उतरकर कहूँ

कि नहीं नहीं। चलो पहाड़ों पर चलते हैं जहाँ हमें कोई भी जानता नहीं। तो फिर भी तुम चलोगी क्या?

तुम मौन हो स्वप्न में मौन हो। पर तुम्हारी आँखें खुली हैं। पूरी की पूरी। तुम्हारी आँखों में दृश्य चल रहा होगा। दृश्य हमें मौन कर देते हैं फिर तुम कहती होः

हाँ, चलो न। चलो कहीं भी। कहीं से उतर कर कहीं भी चले चलेंगे। मैं थोड़ा-बहुत जितना भी जीना चाहती हूँ वो बस तुम्हारे साथ। अगर हम पहाड़ों पर चले तो वहाँ एक स्कूल चलाएँगे। अब मुझे कभी-कभी बच्चों को पढ़ाने का मन करता है।

यह कहकर अकस्मात् तुम्हारी आँखों से नींद टपकती है। बिस्तर किसी विशाल समुद्र में तब्दील हो जाता है।

मानसून की पहली बारिश है अलस्सुबह, अखबार बेचने वाला पुराने रेनकोट में आधा भीगते और चिल्लाते हुए कहीं से आ रहा है और कहीं ओर को चला गया। अखबार में पता नहीं कैसी-कैसी खबरें हैं। कोई अच्छी खबर होती तो वह मेरे घर की बाल्कनी में भी अखबार फेंक जाता या पिछले महीने का बकाया मांगने आ जाता जब मैं या तुम अधखुली नींद में एक घण्टे बाद आने को कह देते।

नींद ऐसे टपकती है कि सब कुछ रेशम हो जाता है शहतूत के पौधे पर लगे फल मीठे हो जाते हैं और हम तोड़ते बीनते खाते जाते हैं। नींद टपकती आँखों के सामने न जाने किस फूल के पौधे पर तितलियाँ मंडरा रही हैं तितलियाँ ही हैं कि न जाने कुछ और और स्वप्न में नींद का ऐसा खुमार है कि तितलियाँ ही जान पड़ती हैं वे।

बस स्टैण्ड पर

बस स्टैण्ड पर लोग-बाग बातें कर रहे हैं
और हो रही है बारिश
हवाएँ उड़ा लाई हैं कुछ हरे पत्ते
कागज के टुकड़े
जो ठिठक गए हैं आकर पोल के पायताने जमे पानी में

लोग-बाग बातें कर रहे हैं
उनकी बातों में हैं तमाम बातें
बस की अब नहीं है उन्हें कोई चिन्ता
बस आएगी अपने नियत समय पर
बादल गरजेंगे
बारिश होगी
रास्ते में लग जाएगा जाम
पोल के पायताने जमा रहेगा पानी
दूर रेडियो पर बजती रहेगी जानी-पहचानी धुन
बादल गरजते रहेंगे
लोग-बाग बातें करते रहेंगे
बस-स्टैण्ड एक दृश्य बनकर लटक जाएगा
सड़क किनारे
लोगों की बातों में
इन बातों का नहीं होगा कोई जिक्र
नहीं होगा कोई जिक्र
कि कैसे कौन हवाएँ उन्हें यहाँ लाकर ठिठका देती हैं
और फिर यकायक उड़ा भी ले जाती हैं
वे तो जानते तक नहीं
अपना रूकना, ठहरना, दृश्य बन जाना
बस के आने तक होगा दृश्य
टूट जाएगा फिर
लोग हँसते-मुस्कुराते इधर-उधर चले जाएँगे
अपनी-अपनी छतरियाँ खोले
फिर कहीं और ठिठक जाने के लिए।

वे मेरे गाँव के कब्र

मेरे गाँव में एक भी कब्र नहीं है
लेकिन खूब खुली-खुली जगहें हैं,
घास है,
ईंट/पत्थर/सीमेंट/कामगार हैं
लोग-बाग मरते भी हैं बहुधा
मेरे गाँव
फूल के बगीचे हैं
मेरे अपने फूल के पौधे।
काश, मेरी अपनी कब्र भी होती
खुले आसमान के नीचे
कहीं भी,
जिस पर अंकित होता मेरा परिचय, मेरे शब्द
मेरे स्वप्न
मेरी असफलताएँ
एक-एक कर
अपने सारे फूल मैं उस कब्र पर चढ़ा आता,
यूँ
फूलों का बोझ मेरे सर से उतर जाता।

कुर्सी की आत्महत्या के बाद

एक दिन भटक कर वापस लौट आई
कुर्सी की आत्मा
अपनी आत्महत्या के पूरी उन्नीस दिन बाद
जिसके गले में लटका फाँसी का फंदा
लतर रहा था जमीन पर गंदा होकर
आकर, घर लौटकर कुर्सी की आत्मा
कुर्सी पर गिर गई निढाल
आत्मा का स्पर्श मिला
हलचल हुई कुर्सी के कुछ हिस्सों में
पायों में, हत्थों में
रेंगने लगे लकड़ी के कीड़े

ज्यों अचानक थमा हुआ रक्त
बहने लगता है नसों में,
धमनियों में रेंगने लगे लकड़ी के कीड़े
छोटे-छोटे काले-भूरे कीड़े
किर्र-किर्र आवाजें करने लगे,
थमे हुए अँधेरे समय में होने लगा स्पंदन
कांपने लगा चेहरा
भुरभुराने लगे पाये बुरादा बनकर
अपनी आत्महत्या के ठीक उन्नीस दिन बाद
लौट आई कुर्सी की आत्मा
कि उसकी लकड़ी से कोई ताबूत न बना दें लोग
किसी जिंदा या मरे हुए इंसान को दफनाने के लिए।

जब मैं

जब मैं नदी था
जैसे जब मैं पर्वतों पर था
हरे पेड़, रंगहीन पत्थरों के बीच
मैंने कल्पना की एक निर्मल नदी की
नदी जो हालांकि
पहाड़ की चोटियों से उतर पत्थरों से लड़-टकरा
मेरे सामने से बह निकल रही थी
मैंने तब उस नदी की कल्पना की
जिसमें मेरी अंधी आँखों के सामने
श्रद्धालु लोग नहा रहे थे।
नदी जो तब वर्तमान थी,
वहीं मेरे आँखों के सामने
असल में तब वह नदी
मेरे भविष्य का हिस्सा थी
जिसमें मैं बह रहा था ...
जब मैं पठारों से होकर गुजरा
पठारों पर तब सफेद बर्फ (!) की बर्फबारी हुई
यह बर्फबारी जो हुई तो तब,
मगर आने वाले भविष्य का हिस्सा थी

जब मैं समुद्र तट
रेत पर लिख रहा था अपनी प्रेयसी का नाम
हिंसक लहरें जिसे मिटा मिटा देती
मुझे फिर फिर लिखने को विवश कर
तब उस वर्तमान में
बादलों के बीच होकर गुजरा एक जहाज
अतीत के फ्लैशबैक की मानिन्द।
जहाज के नीचे समुद्र में तमाम समुद्री जहाज
समानान्तर लकीरें बनाते जा रहे होते थे कहीं..
तब मैं अपने उस वर्तमान में
अतीत की तरह घटित हुआ
जिसे भविष्य मान लिया गया।

मेरे अंदर मरा हुआ

मेरे अंदर एक मरा हुआ काफ्का है
जो,
शाम को लिखने की टेबल पर बैठ
अपनी गर्दन खुजाता है..
सोचता है खाना क्या है आज शाम
और यह भी बहन के स्कूल की फीस
कैसे भरी जाएगी अगले महीने
सुबह बेतरतीब उठता है मेरे अंदर का काफ्का
बिस्तर छोड़ना ही नहीं चाहता कमबख्त
और मेरे अंदर एक पेसोआ भी है
अपने द्वीप महाद्वीप में विचरता है
चश्मा टिकाता है नाक पर,
छड़ी के सहारे किसी तरह चढ़जाता है
पाँचवी मंजिल पर
चाय पीते वक्त सोचता है प्रेयसी के बारे में
लिखता है बेचैनी की कविताएँ
मेरे अंदर फिर तीसरा भी है
मार्केज भी है
जादूगर होना चाहिए था जिसे
मार्केज ने पाले हैं मेरे दिल के भीतर
कुछ सौ सफेद हाथी
जिन्हें वो श्रीलंका से पकड़ लाया था
वह सपनों में जीता है हरदम
नीले पहाड़ों के स्वप्न पहली
बार मार्केज ही ने उगाये थे हमारे अवचेतन में
लाल मोर पर उसी ने की पहली फोटोग्राफी
उसका एक अपना तोता भी है
जिसे बूढ़े कर्नल को दे दिया मैंने और उसने
मेरे अंदर ये तीन हैं और, और भी हैं शायद
ये मुझे धीरे-धीरे खा रहे हैं
चाट रहे हैं दीमक की तरह।

पता न चल पाने वाली घटना

ठंड से ठिठुरते उस एक बूढ़े ने
मौसम को कोसा
कुछ गंभीर-गंदी गालियां बक दी मन-ही-मन
पता न चल पाने वाली एक घटना में
एक छोटा प्यारा बच्चा
टहक-अहक, सुबक-सुबक
सांसें टांग कर रोया
पेराम्बूलेटर में लेटे-लेटे
जब उसकी माँ दूर थी उससे
उसके लौट आने तलक चुप हो जाता है बच्चा
सुबकन बंद हो जाती है
जैसे कोई सुरीली तान चढ़कर उतर जाती है
पता न चल पाने वाली एक घटना में
उस बदसूरत लड़की को मिल जाता है
एक बॉयफ्रेंड
पता न चल पाने वाली एक घटना में
चिड़िया गीत गाती है बेमौसम
जैसा कहा था माया एंजेलो ने-
'चिड़िया गाती है क्योंकि
उसके पास एक गीत है'
और उसे,
गाने के लिए मौसम की जरूरत नहीं
पतझड़, बरसात, पूस
सबमें उसके गीत
उसीके रहते हैं
हमें बस पता नहीं चल पाता है। स

नाम :- आदित्य शुक्ल
जन्म :- 27 नवम्बर 1991, गोरखपुर (उ.प्र.)
शिक्षा :- आई टी एम गोरखपुर से बी.ई.
सृजन :- ब्लॉग लेखन और विभिन्न पत्रिकाओं में कविताएँ, कहानियाँ और ललित गद्य
प्रकाशित। 'सात समन्द की मसि करौं' नामक एन्थॉलॉजी में कविताएँ संकलित।
सम्प्रति :- सॉफ्टवेयर क्वालिटी एनालिस्ट
सम्पर्क :- डीएक्सक्सी टॅक्नोलॉजी, प्लॉट 271, फेज 2, उद्योग विहार, गुड़गाँव (हरियाणा)
122 001
मोबाइल :- 7836888984
ई-मेल :- shukladitya48@gmail.com

चयन : मुकेश वर्मा

अधूरी सी एक कहानी

श्रीराम दवे

वह एक छोटा-सा गाँव था, लेकिन रेल लाईन गुजरने से रेल्वे के नक्शे में आ गया था। अब वहाँ छोटा स्टेशन भी बन गया था। दिन भर में चार-छः रेलगाड़ियों के स्टॉप भी हो गये थे। स्टेशन से यों तो पचास-साठ गाड़ियाँ गुजरती थीं, किन्तु वहाँ बिना रुके।

जैसा कि होता है कि स्टेशन होने से वहाँ दिन भर और लगभग रातभर लोगों की आमदरफ्त होती रहती थी। कोई रेल के डिब्बे में चढ़ने के लिए दौड़ रहा है तो कोई उतरकर पानी के लिए दौड़ रहा है। रेलों के वहाँ रुकने से तीन-चार ठेलेनुमा दुकानें भी प्लेटफार्म नं. एक पर थी। प्लेटफार्म नम्बर दो करीब चार पटरियों के बाद सामने की ओर था जहाँ इक्का-दुक्का ट्रेन ही रुकती थी, जिससे वहाँ उतरने-चढ़ने वाले यात्रियों को ज्यादा भीड़-भाड़ का सामना नहीं करना होता था। हाँ दूरदराज के यात्रियों को खाने-पीने की चीजों के लिए मन-मसोस कर रह जाना पड़ता था। कोई भी वेन्डर इधर नहीं आता था। पीने के पानी के लिए दो नलों का एक स्टेण्ड इस ओर था अवश्य, लेकिन प्रायः उन नलों में पानी कम ही रहता था।

सुरेश जी जो किसी सरकारी दफ्तर में मुलाजिम थे रिटायर्ड होकर अपने इस पुश्तैनी गाँव के मकान में रहने लगे थे। ज्यादा अर्सा नहीं बीता था इसलिए सभी गाँववालों को नहीं जानते थे। हाँ कुछ उम्रदराज लोगों को वे जानते थे तथा उनसे उनकी स्मृतियाँ जुड़ी होने से पटती भी बहुत थी।

कई दिनों से गाँव वाले यह देख रहे थे कि दोपहर में दिल्ली की ओर जाने वाली पौने-दो की ट्रेन आने के समय वे प्लेटफार्म पर इधर से उधर कभी तेजी से तो कभी एक-एक डिब्बे की हर खिड़की में गौर से देखते हुए आगे बढ़ते जाते थे और जब ट्रेन गुजर जाती थी तो वे भी दस-पाँच मिनट तक किसी बैंच पर सुस्ता लेते थे। बोलते किसी से कुछ नहीं थे, लेकिन उनकी आँखों से टपकती निराशा से यह आभास होता था कि 'आज भी वह चेहरा नहीं दिखा।'

यह उन दिनों की बात है जब सुरेश जी अपनी सरकारी नौकरी के चलते सरकारी टूर पर दिल्ली जा रहे थे। बीच के किसी स्टेशन पर वह चेहरा उन्हें दिखाई दिया था जिसे वे उसे बार-बार देखे जा रहे थे।

तभी वह चेहरा उनके वाले कम्पार्टमेन्ट में आया और अपनी खनकती आवाज से बोल उठा- 'क्या थोड़ी देर के लिए मुझे खिड़की के पास बैठने देगें मुझे कुछ घबराहट हो रही है।'

हाँ, हाँ क्यों नहीं आइए। बल्कि ऐसा कीजिए आप इधर ही बैठिए - सुरेश जी बोले।

थैंक्स। दरअसल आज सुबह से मैं अनइजी फील कर रही थी, लेकिन काम से जाना जरूरी हो चला था इसलिए मजबूरी से जाना पड़ रहा है।'

'होता है कभी-कभी ऐसा कि आपको नहीं चाहते हुए भी वह सब करना पड़ता है जिसे आप करने के लिए तैयार नहीं होते हो। वैसे आप भी दिल्ली ही जा रही होंगी...!'

'नहीं-नहीं, मुझे तो कोटा तक ही जाना है । वहाँ मेरी बेटी कोचिंग ले रही है। दो दिन से उसकी तबियत कुछ ठीक नहीं है।'

'ओह !'

सुरेश जी और कुछ बोलना ही चाह रहे थे कि वह बोल पड़ी- 'दरअसल मैं एक सिंगल मदर हूँ तथा नागदा में स्कूल टीचर हूँ।'

उसके इस खुलासे से सुरेश जी के मन में उठ रहे कई प्रश्नों के उत्तर तो मिल गये, लेकिन अकेलेपन की अपनी पीड़ा भी उनके चेहरे पर पसरने लगी।

सुरेश जी की पत्नी पिछले साल ही गुजर गयी थी तथा बच्चे हुए ही नहीं थे। ले-देकर एक काका और काकी थे जो उनके इस पुश्तैनी गाँव के मकान में रहते थे।

रिटायर्ड होने के बाद सुरेश जी भी यहीं काका-काकी के पास चले आये थे और अब यहीं रहने लगे थे।

* * *

शायद कोई स्टेशन आने वाला था तभी गाड़ी धीमी हो गयी थी। हाँ श्यामगढ़था। गरम चाय, बिस्किट, समोसे की आवाजें आ रही थीं।

सुरेश जी बोल उठे क्या चाय वगैरा लेंगी ?

वैसे तो यहाँ चाय ठीक नहीं मिलती है, लेकिन फिर भी आपने पूछा है तो ले लेते हैं। चाय का सिप लेते हुए वह बोली- 'मैं सुमन मेहता हूँ, पहले कुछ लिखने-पढ़ने का शौक था, कविताएँ वगैरा लिखती थी, लेकिन जब से सिंगल मदर हुई हूँ तब से जैसे सब ठहर-सा गया है।'

सुरेश जी अब सुमन मेहता को गौर से देख रहे थे। तीखे नाक-नक्श, सादी किन्तु आभिजात्य तरीके से पहनी गयी साड़ी, तर्जनी ऊँगली में पुखराज लगी सोने की अँगूठी, गले में पतली-सी सोने की चेन, न गोरा न अधिक श्याम रंग तथा चेहरे पर सौम्य मुस्कुराहट, हाँ कपाल पर अण्डाकार लाल सुर्ख बिन्दी और उम्र 45के आस-पास।

'अरे ! कहाँ खो गये आप ?' सुमन के इस सवाल से जैसे उनकी तन्द्रा भंग हुई। मैंने तो अपने बारे में सब बता दिया, लेकिन लगता है आप अपने बारे में कुछ भी नहीं बताना चाहते हैं, शायद। कोई बात नहीं, एकाध स्टेशन बाद कोटा आने ही वाला है, मुझे तो वहाँ उतरना ही है।'

कई दिनों से गाँव वाले यह देख रहे थे कि दोपहर में दिल्ली की ओर जाने वाली पौने-दो की ट्रेन आने के समय वे प्लेटफार्म पर इधर से उधर कभी तेजी से तो कभी एक-एक डिब्बे की हर खिड़की में गौर से देखते हुए आगे बढ़ते जाते थे और जब ट्रेन गुजर जाती थी तो वे भी दस-पाँच मिनट तक किसी बैंच पर सुस्ता लेते थे। बोलते किसी से कुछ नहीं थे, लेकिन उनकी आँखों से टपकती निराशा से यह आभास होता था कि 'आज भी वह चेहरा नहीं दिखा।'

बातों-बातों में उलाहना और वस्तुस्थिति दोनों ही बताकर सुमन ने सुरेश जी को निरुत्तर कर दिया था, फिर भी सुरेश बोल उठे- ज्यादा कुछ नहीं है मेरे बारे में, पत्नी के स्वर्गवासी होने के बाद एकाकी जीवन जी रहा हूँ। हाँ, इतनी पेंशन मिलती है कि बूढ़े काका-काकी और मेरा अच्छी तरह जीवन निर्वाह हो जाता है, बल्कि कुछ बच भी जाता है।

'यह तो अच्छी बात है' उसने कहा। वैसे जीवन में संतुष्टि के अलावा और क्या चाहिए होता है? जवाबदारियाँ पूरी होना संतुष्टि के लिए अनिवार्य शर्त है। देखिये ना, आपके लिए बूढ़े काका-काकी भी जवाबदारी की तरह ही हैं, जबकि मेरे लिए नेहा किसी भी बड़ी जवाबदारी से कम नहीं है। देखती हूँ उसकी बिमारी का कारण क्या है। यदि पढ़ाई का बोझ ज्यादा है तो एमबीबीएस नहीं तो कोई और कोर्स के लिए उसे तैयार करूँगी। सिंगल मदर होना, हँसी-खेल नहीं है उसे कई मोर्चो पर अलर्ट रहना पड़ता है। हालत यह है कि मुसीबत के समय में वह किसी को भाईसाहब कहकर भी पुकार नहीं सकती।'

'बात तो सही कह रही हैं आप, लेकिन अभी तो आपके सामने लंबी जिंदगी शेष है, आखिर ऐसे कब तक चलेगा? नेहा के सेटल होने के बाद आपको तो अपनी धारा बदलना ही पड़ेगी।' 'देखती हूँ क्या हो सकता है।' वह अपना लगेज जमाने लगी।

सुमन का स्टेशन आने ही वाला था बैग आदि उठाते हुए बोली अच्छा सुरेश जी! आपके साथ रहते ढाई-तीन घंटे कैसे बीत गये, पता ही नहीं चला। दोनों हाथ जोड़ती हुए वह बोली अच्छा, मैं चलती हूँ, ईश्वर ने चाहा तो फिर कभी मुलाकात होगी!

सुरेश जी सुमन को उतरते हुए और सधी चाल से आगे बढ़ते हुए एकटक देखते रहे तभी उनकी गाड़ी चल पड़ी। वे पछताते ही रह गये कि न तो उन्होंने सुमन का पता लिया और न ही कान्टेक्ट नम्बर !

* * *

ये अपेक्षाएँ भी बड़ी विचित्र होती हैं। भला सुमन का पता और फोन नम्बर लेकर वे क्या करना चाहते थे? क्या सिंगल मदर होना सुमन की कमजोरी है? ऐसे ही कई सवालों को मन में बिठाये सुरेश जी दिल्ली पहुँच गये थे। दो दिन वहाँ रहकर सरकारी काम करके वापस भी आ गये, लेकिन सुमन का चेहरा वे भूल नहीं सके। रिटायर्ड होने के बाद जब वे अपने पैतृक गाँव में बस गये तो अचानक उन्हें सुमन का स्मरण हो आया और तभी से वे नियत समय पर रेल्वे स्टेशन आ जाते और उस ट्रेन के हर डिब्बे गोया हर यात्री को देख लेते कहीं सुमन दिख जाए.....!

भले ही सुरेश जी, सुमन के निवास नागदा या उनक बेटी के कोचिंग स्थल कोटा जाने की हिम्मत नहीं जुटा पाये हों, लेकिन रेल्वे स्टेशन आने में और हर डिब्बे में सुमन को देखने में उन्होंने कोई कोताही नहीं की। यह अलग बात है कि उस दिन की सुमन से उनकी स्मृतियों में बैठी सुमन उनके ज्यादा नजदीक है, लेकिन उन्हें लगता है कि जैसे सुमन का आभिजात्य दोनों हाथ जोड़े हुए के अन्दाज में पता नहीं उनसे क्या कहकर उनके आस-पास ठहर गया है।

* * *

गाँव वाले आश्चर्यचकित हैं कि सुरेश जी अब रोज रेल्वे स्टेशन खासकर उस ट्रेन के प्रत्येक डिब्बे के प्रत्येक यात्री को देखने नहीं आ रहे हैं.....! स

26 निर्माण नगर (रवीन्द्र नगर के पास) उज्जैन (म.प्र.)
मोबाइल - 94259-15010

समावर्तन की वार्षिक सदस्यता हेतु

- समावर्तन की वार्षिक सदस्यता ग्रहण करने हेतु रूपये 1500/- नियत है जो मनिआर्डर से अथवा चेक से भेजे जा सकते हैं। चेक पर केवल 'समावर्तन' लिखना होगा। चेक और मनिआर्डर डॉ.प्रभातकुमार भट्टाचार्य, माधवी, 129, दशहरा मैदान, उज्जैन 456010 के पते पर भेजना होगा।
- समावर्तन की वार्षिक व्यक्तिगत अथवा संस्थागत सदस्यता का शुल्क डिजिटल माध्यम से भी भुगतान किया जा सकता है। जिसके लिए बैंक डिटेल्स निम्नानुसार है।
  बैंक का नाम - आयडीबीआय, ब्रांच का नाम - फ्रीगंज ब्रांच, उज्जैन, खाता क्रमांक - 0088102000031620, खातेदार का नाम- समावर्तन
  आयएफएससी नं.- आयबीकेएल 0000088
- डिजिटल एवं चेक/मनिआर्डर से भुगतान करने पर तदनुसार पत्र द्वारा सूचित करने का कष्ट करें।

संपादक, समावर्तन, उज्जैन - संपर्क - 94259-15010

विश्व रंग विशेष

संतोष चौबे

प्रश्न :- देश के किसी भी विश्व विद्यालय ने इसके पहले विश्व रंग? यानी साहित्य एवं कला के अंतर्राष्ट्रीय आयोजन के बारे में नहीं सोचा। विश्व रंग? की विश्व अवधारणा क्या है?

उत्तर :- विश्व रंग की अवधारणा, विश्व के बारे में हमारी समझ से ही निकलती है। आप सचेत रूप से अपने आस-पास देखें तो पाएंगे कि विकास की जो प्रक्रिया हमने अपनाई है और प्रकृति का जिस तरह अंधाधुंध दोहन किया है वह स्वयं हमारे अस्तित्व के लिये ही घातक है। दूसरी ओर बायोटेक्नॉलॉजी एवं बायो इनफर्मेटिक्स के कन्वर्जेंस से जिस तरह के मनुष्य के निर्माण की बात की जा रही है उससे इस बात में भी संदेह पैदा होता है कि क्या मनुष्य स्वयं वैसा बचा रह पाएगा जैसा कि हम उसे जानते हैं। तीसरे, टेक्नॉलॉजी ने जीवन की गति इतनी तेज कर दी है कि उसे जानना-पहचानना ही मुश्किल होता जा रहा है। जैसा कि फ्रेडरिक जेम्सन ने कहा है, हमें नये नक्शे और नये को-आर्डिनेट्स की तलाश करनी होगी। मुझे लगता है कि जीवन के नये उपकरणों को तलाशने के साधन विज्ञान के पास उतने नहीं हैं जितने कला, संस्कृति और संगीत के पास हैं। विश्व के तमाम रचनाकारों, कलाकारों और संगीतज्ञों को इस संबंध में बातचीत शुरू करनी चाहिये और एक प्रभावी हस्तक्षेप करना चाहिये। विश्व रंग इसी दिशा में एक शुरूआत है।

इस कार्यक्रम का उद्देश्य् क्यो है?

जैसा कि मैंने ऊपर कहा, विश्व रंग साहित्य, शिक्षा, संस्कृति और भाषा में काम करने वाले रचनाकारों के बीच वैश्विक विमर्श की शुरूआत है। इसके दौरान कम से कम दस ऐसे प्रकाशन सामने आयेंगे जो इस समझ को प्रतिबिम्बित करते हैं। देश और विदेश के लगभग 50 विश्वविद्यालय भी इसमें हिस्सा ले रहे हैं, जिनमें आपसी बातचीत एवं शैक्षणिक नेटवर्क का निर्माण इस कार्यक्रम का बड़ा हासिल होगा। देशभर से लगभग 500 शीर्षस्थ रचनाकार इसमें शिरकत कर रहे हैं, और उम्मीद है कि उनके बीच संवाद का रिश्ता कायम होगा और सबसे बढ़कर, हिन्दी और भारतीय भाषाओं को केन्द्रीयता प्रदान करने का प्रयत्न किया जायेगा।

विश्व रंग में साहित्य, शिक्षा, विज्ञान, दर्शन, लोक, नाटक, फिल्म, चित्रकला, इतिहास, मीडिया आदि के लगभग 60 सत्र हैं। इनके माध्यम से आप क्या कहना चाहते हैं?

वनमाली सृजन पीठ और रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय का जो लगभग 35 वर्षों का साहित्य एवं कलाओं में काम करने का अनुभव है वह बताता है कि अंततः सभी कलाओं और अनुशासनों में एक तरह की आपसदारी बनती है और उसे पहचानना ही अपने कलात्मक क्षितिज का विस्तार करना है। इसी तरह अन्य अनुशासन भी कलात्मक विधाओं में हस्तक्षेप करते हैं। मसलन उपन्यास और कहानी में मिलान कुन्देरा, पाओलो कोहेलो और उदयप्रकाश के यहां आपको ऐसी शैलियों और अनुशासनों की छाया मिल जायेगी जिन्हें पहले उपन्यास या कहानी के डोमेन में नहीं रखा जाता था, उनमें आप इतिहास की, चित्रकला की, फिल्म तकनीक की, नाटक की और दार्शनिक निष्कर्षों की छाया पाते हैं। असल में ज्ञान-विज्ञान का विस्फोट जो हमरे आसपास हुआ है, उसने बहुत सारी पुरानी सीमा रेखाओं को तोड़ा है और उपरोक्त सभी सत्रों को आयोजन में शामिल करने का लक्ष्य इस नये उभरते मानचित्र को पहचानना है।

विश्व रंग में साहित्य, शिक्षा, विज्ञान, साहित्य और कलाएं यहाँ तक कि अभिलेखागारों का महत्व भी शामिल है। ये किसी भी लिटरेचर फेस्टिवल के हिस्से नहीं होते, ये विश्व रंग में क्यों? सारे उत्सव-महोत्सव पॉपुलर सब्जेक्ट्स और फीचर्स के बिना नहीं होते। ऐसे में इन सबके पीछे आपकी दृष्टि क्यों है?

पहली बात तो विश्व रंग? पॉपुलर सब्जेक्ट्स को खारिज नहीं करता बल्कि पॉपुलर और अकादमिक सत्रों के बीच एक अद्भुत संतुलन बनाने की कोशिश करता है। जहां एक ओर लोक और शास्त्र, शिक्षा और विज्ञान और भाषाओं पर केन्द्रित सत्र हैं तो दूसरी ओर अन्तर्राष्ट्रीय मुशायरा, उर्दू की रवायत में सुखन की महफिल और रघु दीक्षित जैसे पॉपुलर बड्स भी हैं जो युवाओं के लिये आकर्षण का केन्द्र होंगे। यहाँ तक कि अकादमिक सत्रों में भी लीक को छोड़कर थर्ड जेंडर का कविता पाठ, सोशल मीडिया पर सक्रिय रचनाकार तथा लेखक से मिलिए में स्वानंद किरकिरे, आशुतोष राणा और इरशाद कामिल जैसे फिल्म के रचनाकार हैं जो हिन्दी के वरिष्ठ रचनाकारों के साथ नजर आयेंगे। मुझे विश्वास है कि यह उत्सव पूरी तरह सफल होगा।

कला इतिहास पर नेशनल सेमिनार और कलाकारों के वर्कशॉप की जगह आर्टिस्ट्स मीट, कला प्रदर्शनी भी उन कलाकारों की जो गांव, कस्बों और दूरदराज के हैं। साथ में 50,000/- के 5 पुरस्कार, 175 चित्र आदि। इसकी अवधारणा में क्या कुछ है?

जैसे कि साहित्य ने अपने आप को जमीन से काटकर बड़े शहरों पर केन्द्रित कर लिया है, वैसे ही स्थापित कला दीर्घाओं में भी व्यावसायिकता हावी है और उभरते चित्रकारों के लिये, जो गांव, कस्बों और दूरदराजों के स्थानों से आते हैं कोई जगह नहीं है। हमारी कोशिश है कि उन्हें पहचाना जाए और उन्हें

प्रदर्शित किया जाए। जिस तरह का रिस्पांस इस प्रयास को मिला है, वह बताता है कि इन कलाकारों में किस तरह की छटपटाहट है। करीब एक हजार से अधिक प्रविष्टियां हमें प्राप्त हुई हैं जिनके रंगों और आकृतियों के प्रयोग अद्‌भुत, अछूते एवं अनोखे हैं। हम इसे वार्षिक इवेंट बना सकते हैं। यह कला की दुनिया में भी एक नया प्रयोग होगा।

इसमें टैगोर के नाटक, बैले, रबींद्र संगीत, रबींद्र की चित्र प्रदर्शनी और प्रकाशन भी हैं। 22 सत्र लेखकों के हैं। दीगर 36-38 और हैं। अब यह कोई दीर्घकालीन योजना है, या एक बार की दीवानगी।

सबसे पहले तो अर्ज करूं कि हमारे विश्विद्यालय का नाम ही गुरूदेव रबीन्द्रनाथ टैगोर के नाम पर है और ये हिन्दी भाषी क्षेत्र में स्थित है। जैसे-जैसे हम काम करते हैं तो पाते हैं कि लगभग पूरे हिन्दी भाषी क्षेत्र में टैगोर की विराट रचनात्मकता, विशेषकर उनकी पेंटिंग स्टाइल एवं नाटकों को लेकर कोई बहुत चेतना नहीं है और इसकी पुर्नस्थापना आवश्यक है। हमारे अपने देश के दिग्गज कलाकार, वो किसी भी प्रदेश के हो सकते हैं, को हमारे यहां के साहित्य महोत्सव में रेखांकित किया जाना चाहिये। इसलिये हमने चार दिन के साहित्य समारोह के पहले, तीन दिवसीय टैगोर रेट्रोस्पेक्टिव भी रखा है। आगे चलकर अन्य प्रदेशों के बड़े कलाकारों पर भी फोकस करेंगे। हमारा दूसरा वैचारिक आधार, जिसने सत्रों के डिजाइन में भूमिका निभाई है वह भाषाई विमर्श पर आधारित है। आप देखिये कि राजनीति ने हमारे देश में सारी भारतीय भाषाओं को एक दूसरे के खिलाफ खड़ा करने का काम किया जबकि वे सहोदर हैं और एक-दूसरे से बड़ी ताकत पा सकती हैं। वैसे ही बोलियों को भी हिन्दी के खिलाफ खड़ा करने का प्रयास है जबकि स्वयं हिन्दी भाषा अपना रस इन जीवन सिक्त बोलियों से ही प्राप्त करती है। अतः बोलियों और भाषाओं पर सत्र है जोकि हमारी उपरोक्त अवधारणाओं को अभिव्यक्त करेंगे। आगे के फेस्टिवल भी इन्हीं अवधारणाओं पर आयोजित होंगे। हो सकता है फोकस अलग-अलग समय में अलग-अलग हों।

विश्व रंग में जानकारी के अनुसार विश्व भाषा के कवि, प्रवासी लेखक और शिक्षाविदों सहित लगभग 60 लोग आ रहे हैं। इनकी क्या भूमिकाएं हैं?

जब हम भारतीयता पर जोर देते हैं तो ये कोई जड़ राष्ट्रीयता नहीं है। हमारी भारतीयता वैश्विक संदर्भों से जुड़े और अपने अनोखेपन में प्रकाशित भारतीयता है जिसमें विश्व कविता का भी उतना ही स्थान है जितना भारतीय कविता का। ये शायद पहली बार होगा कि किसी फेस्टिवल में विश्व कविता के दो सत्र आयोजित हैं। इसी तरह प्रवासी भारतीय लेखक भी अपनी जड़ों से जुड़े रहना चाहते हैं लेकिन उनके लेखन के प्रकाशन और मूल्यांकन को लेकर कोई ठोस प्रयास देश में नहीं होते। विश्व के प्रमुख प्रवासी भारतीय लेखकों को आमंत्रित करने का लक्ष्य है कि उनसे संवाद कायम किया जाये एवं उनके साहित्य के मूल्यांकन के प्रयास किये जायें। इस समय भारत के बाहर करीब 66 विश्वविद्यालय ऐसे हैं जहां हिन्दी पढ़ाई जाती है। इनके साथ सहयोगी वातावरण बन सके इसलिये इन्हें भी आमंत्रित किया गया है। अंततः वैश्विक हिन्दी के निर्माण में इनकी बड़ी भूमिका होगी।

इस महोत्सव का आगाज उत्तर भारत के 50 गांवों, कस्बों, जिलों से पुस्तक यात्रा के साथ हुआ। फिर हजारीबाग, वैशाली, बिलासपुर, खंडवा और भोपाल में तीन दिवसीय युवा उत्सव हुए। इतनी सांस्कृतिक भव्यता का देश समाज के लिए क्यास महत्वख है?

जिस तरह हमारे गांव व कस्बों ने पुस्तक यात्राओं को हाथोंहाथ लिया उससे उम्मीद बनती है कि पुस्तक संस्कृति अभी हमारे देश में जीवित है। बच्चे और युवा किताबें पढ़ना चाहते हैं, हम ही उन तक नहीं पहुंच पाते। पुस्तक यात्रा इस भ्रम को तोडती है कि किताबें के पाठक कम हो रहे हैं। वो बताती है कि किताबें अब भी बातें करती हैं, और व्यापक भारतीय समाज में ज्ञान की भूख अभी बरकरार है। ये सांस्कृतिक भव्यता नहीं बड़ी जरूरत की पहचान है। हम अगले एक साल में एक लाख से अधिक पुस्तक मित्र बनाने का प्रयास करेंगे।

दिल्ली में भी 11 अक्टूबर को टैगोर पर आयोजन है और नोबल लारेट्स की कविताओं का अनुवाद का प्रोग्राम है। इसे दिल्लीर में ही करने की कोई खास वजह?

आईसेक्ट आज देश का लगभग सबसे बड़ा सामाजिक उद्यमिता आधारित नेटवर्क है और वह समाज के पास जाने में विश्वास रखता है। दिल्ली में इस कार्यक्रम को करने का मूल कारण नेशनल मीडिया की वहाँ उपस्थिति, अधिकतर अनुवादकों की उपलब्धता और एक नये समूह के बीच अपनी बात कहने की ललक है।

यह जो विश्व रंग की शुरूआत है इसका भविष्य क्या है?

तेजी से बदलते समय में कोई भी भविष्य की घोषणा नहीं कर सकता पर विश्व रंग एक ऐसी रचनात्मक समावेशी प्रक्रिया की शुरूआत करना चाहता है, जिसमें कलाएं मानव व मानवीय संवेदनाओं के पक्ष में खड़ी हों, सस्टेनेबल डेव्लपमेंट हमारी चिन्ता के केन्द्र में हो और हिन्दी और भारतीय भाषाओं को विश्व में उचित स्थान मिले, रचनात्मक विस्तार की जगह मिले। राष्ट्र के भीतर उनमें आदान-प्रदान बढ़े। आगे भी हमारी कार्यवाही का आधार उपरोक्त अवधारणायें ही होंगी। विचार के साथ-साथ एक्शन पर भी बल देंगे। इसी से आगे के रास्ते प्रकाशित होंगे। स

संतोष चौबे
निदेशक टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव, भोपाल
मो. : 9826256733
ई-मेल : : choubey@aisect.org

फिल्मों की स्क्रिप्ट और गीतों से लेकर सेट बनने का सफर बयां होगा 'विश्वरंग' में

स्वानन्द किरकिरे, ज्योति कपूर और जयंत देशमुख की जुबानी, सुनी जाएगी फिल्मों के बनने की कहानी

सिनेमा की जादुई दुनिया से हर कोई जुड़ना चाहता है। पहले सिनेमा हॉल, फिर टेलिविजन और अब मोबाइल के कारण शायद ही ऐसा कोई हो जो फिल्मों की चकाचधि और उसके जादू से बच पाया हो। हमारे देश में सिनेमा की शोहरत और ग्लैमर सर चढ़कर बोलता है। एक समय था जब अभिनय ही सिनेमा में जाने का आकर्षण हुआ करता था। मगर समय बदलने के साथ अब पर्दे के पीछे की हकीकत, उसके विचार, कहानी और पटकथा से लेकर गीत, संगीत, सेट और आर्ट डाइरेक्शन जैसी विधाएँ भी युवाओं को आकर्षित करने लगी हैं। अपनी भव्यता में भी रचनात्मकता के सूत्र तलाशने की 'विश्वरंग' की इस बार की पहल में सिनेमा बनने का सफर एक खास सत्र के रूप में शामिल हुआ है। विचार, लेखन और परिकल्पना में फिल्मों के सोचने-बनने, साहित्य और कला के दायरों को तलाशने और उसके पेशे के हुनर को समझने का यह खास मौका है। हिन्दी सिनेमा के ख्यात गीतकार, अभिनेता स्वानन्द किरकिरेय युवा फिल्म लेखिका और स्क्रीनराइटर्स एसोसिएशन की वाइस प्रेसिडेंट ज्योति कपूर तथा जाने-माने कला निर्देशक जयंत देशमुख इस खास सत्र के प्रतिभागी होंगे। भारतीय फिल्म और टेलिविजन संस्थान के पूर्व छात्र और युवा लेखक-निर्देशक सुदीप सोहनी इस सत्र के मॉडरेटर होंगे। समारोह के अंतिम दिन 10 नवंबर को शाम 5 से 6.30 बजे तक यह सत्र मिंटो हॉल स्थित सभागार में होगा। इस सत्र में भागीदारी के लिए आइसेक्ट समूह के निदेशक सिद्धार्थ चतुर्वेदी और ख्यात कला समीक्षक विनय उपाध्याय की उपस्थिति में सवाल-जवाब और संवाद का सिलसिला और भी दिलचस्प होगा। पटकथा, कथा और संवाद लेखन से लेकर गीत लेखन, अभिनय और कला निर्देशन जैसे महत्त्वपूर्ण विभागों की जानकारी, अनुभव और पेशेगत व्यवहार की सीखों से रूबरू होने का यह मौका 'विश्व रंग' उपलब्ध करा रहा है।

अपने गीतों 'बंदे में था दम' (फिल्म : लगे रहो मुन्नाभाई) और 'बहती हवा सा था वो' (फिल्म : 3 इडियट्स) के लिए दो बार के राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार से नवाजे गए तथा चमेली, परिणीता, 3 इडियट्स, लगे रहो मुन्नाभाई, पीपली लाइव, बर्फी आदि फिल्मों के लिए गीत लिख चुके स्वानन्द किरकिरे हिन्दी फिल्म इंडस्ट्री के नामचीन गीतकार हैं। मराठी फिल्म 'चुंबक' के लिए इस वर्ष उन्हें सहायक अभिनेता का राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार भी घोषित हुआ है। यशराज प्रोडक्शन्स की दावत-ए-इश्क सहित पिछले साल आयुष्मान खुराना-नीना गुप्ता अभिनीत सफल फिल्म 'बधाई हो' जैसी फिल्मों की लेखिका ज्योति कपूर विशेष रूप से इस सत्र में उपस्थित रहेंगी। खास यह भी कि फिल्मों में लेखकों के अधिकारों के लिए काम करने वाली संस्था स्क्रीनराइटर्स असोसियेशन की वे वाइस प्रेसिडेंट भी हैं। इसके साथ ही ज्योति देश-विदेश के कई प्रमुख फिल्म संस्थानों में बतौर फेकल्टी पढ़ाती भी हैं। बवंडर, मकबूल, दीवार, आँखें, राजनीति जैसी 50 से भी अधिक फिल्मों सहित तारक मेहता का उल्टा चश्मा, ये रिश्ता क्या कहलाता है, बिदाई जैसे अनेक धारावाहिकों के कला निर्देशक रहे चुके जयंत हिन्दी फिल्म इंडस्ट्री में जाना-पहचाना नाम हैं। एक ही मंच पर गीतकार, पटकथा लेखक और कला निर्देशक से उनके अनुभवों को सुनना-सहेजना निश्चित ही इस सत्र के मुख्य आकर्षणों में से एक होगा।

साहित्य और कलाओं के आसपास सिनेमा को देखना हमेशा से ही फिल्मकारों और सिनेमाप्रेमियों के लिए उत्सुकता का विषय रहा है। कला और साहित्य के साथ बाजार का रिश्ता भी सिनेमा को दर्शकों तक पहुंचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सिनेमा में बाजार का यही हस्तक्षेप उसे उद्योग का दर्जा देते हुए इसे 'कमर्शियल आर्ट' की श्रेणी में खड़ा करता है। मगर, इन सबके बीच विचार और कला के रूप में उसकी उपस्थिति को नकारा नहीं जा सकता। यह जितना कलात्मक उतना ही पेशेगत भी। इसके साथ ही सार्वजनिक माध्यम में सिनेमा की पहुँच इसे लोकतान्त्रिक कला माध्यम बनाती है। जिसमें किसी दर्शक के पास अपने संज्ञान से उसे स्वीकृत या अस्वीकृत करने का अधिकार है। लिखे हुए और कहे हुए शब्द और विचार को कहानी, डायलॉग, स्क्रिप्ट, गीत, अभिनय, दृश्य आदि में जिस तरह से पिरोया जाता है वह कितना साहित्य है और कितनी कला और कितना पेशेगत हुनरय इन्हीं सवालों के आसपास यह सत्र रहेगा। सिनेमा माध्यम में कहने और बाजार की चुनौतियों के बीच रचनात्मकता के सूत्र भी इस दिलचस्प सत्र में साझा होंगे। सिनेमा में काम करने के इच्छुक और सिनेमा के विद्यार्थियों के लिए निश्चित ही यह सत्र उपयोगी होगा। विश्वरंग की वेबसाइट www.tagorelitfest.com पर रजिस्ट्रेशन के बाद इस सत्र में निःशुल्क प्रवेश की व्यवस्था रहेगी। स

जाड़े की गुलाबी दस्तक के साथ भोपाल में महकेगा 'विश्वरंग'

शुभारंभ के साथ ही बिखरेंगी सांस्कृतिक छटाएँ, साहित्य और संस्कृति का होगा विराट समागम

- 4-10 नवंबर 2019 तक मिंटो हॉल सहित भारत भवन, रवीन्द्र भवन में होंगे विभिन्न आयोजन
- टैगोर पर केन्द्रित होंगे तीन दिनय पूर्व राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी आएंगे भोपाल
- 60 सत्रों में सैकड़ों राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय साहित्यकार-कलाकार होंगे शामिल
- 30 देशों के हिन्दी भाषी साहित्यकार, प्रवासी भारतीय साहित्यकारों सहित नोबल-ज्ञानपीठ-साहित्य अकादमी पुरस्कार सम्मानित रचनाकारों व देश-दुनिया के वरिष्ठ व युवा साहित्यकारों के बीच होगा रोचक संवाद
- विश्व कविता, थर्ड जेंडर कवियों का कविता पाठ, अंतर्राष्ट्रीय मुशायरा, सिनेमा और चित्रकला सहित संगीत और नृत्य से गुलजार होंगी शामें

मौसम की चौखट पर जाड़े की गुलाबी दस्तक के साथ ही राजधानी की फिजाओं में आदाब और तहजीब के मुख्तलिक रंग खिलेंगे। रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय की पहल पर 'विश्व रंग' के नाम से हो रहे अब तक के सबसे भव्य साहित्य-कला उत्सव में देश और दुनिया के पाँच सौ से भी ज्यादा हस्ताक्षर शामिल होंगे। भारत भवन, मिंटो हॉल और रवीन्द्र भवन में साहित्य, संस्कृति, शिक्षा, विज्ञान, मीडिया, सिनेमा, पर्यावरण जैसे जरूरी मुद्दों पर संवाद और बहस के साथ ही मुलाकातों का दिलचस्प सिलसिला होगा। टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केंद्र के निदेशक तथा विश्वरंग के सांस्कृतिक समन्वयक विनय उपाध्याय के अनुसार कलाओं और संस्कृति के शहर भोपाल के पहले अंतर्राष्ट्रीय साहित्य और कला महोत्सव को लेकर देश भर में खासा उत्साह है। रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय की पहल पर टैगोर विश्व कला एवं संस्कृति केंद्र और वनमाली सृजन पीठ सहित आइसेक्ट समूह के विश्वविद्यालयों के संयोजन में 'विश्व रंग' की आहट पिछले दो महीनों से जारी है। किसी भी विश्वविद्यालय की पहल पर होने वाला यह संभवतः पहला समारोह है जिसमें हिन्दी सहित देश की प्रमुख भाषाओं के साहित्य और कलाओं का समावेश होगा। 60 सत्रों में होने वाले इस आयोजन में पाँच सौ से भी अधिक रचनाकार, कलाकार शामिल होंगे। अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया, चीन, जर्मनी, न्यूजीलैंड, बांग्लादेश, श्रीलंका, बर्मा, नेपाल सहित कई देशों के विश्वविद्यालयों में हिन्दी भाषी व्याख्याता, रचनाकार, प्रवासी भारतीय साहित्यकार, नोबल-ज्ञानपीठ-साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित वरिष्ठ और युवा रचनाकार इस आयोजन का हिस्सा होंगे। इसके साथ ही विश्व कविता, सिनेमा, चित्रकला, लोक कला व साहित्य, थर्ड जेंडर के कवियों का कविता पाठ होगा। आरंभ, मध्य और समाहार के रूप में 4 नवंबर को विश्वरंग कला उत्सव, 7 नवंबर विश्वरंग साहित्य उत्सव और 10 नवंबर को अलंकरण और वनमाली कथा सम्मान के आयोजन 'विश्वरंग' की विराट परिकल्पना को समेटे हुए हैं।

4 नवंबर को रवीन्द्र भवन में मध्य प्रदेश के माननीय राज्यपाल लालजी टंडन, रंगकर्मी और कला विदुषी उषा गांगुली, टैगोर अंतर्राष्ट्रीय कला व साहित्य महोत्सव के निदेशक संतोष चौबे 'विश्वरंग' का शुभारंभ करेंगे। 'टैगोर की विरासत का पुनरावलोकन' नाम से 'आरंभ' का यह तीन दिनी आयोजन 4 से 6 नवंबर तक भारत भवन और रवीन्द्र भवन परिसर में होगा जहाँ सुबह और शाम के सत्रों में क्रमशः विचार और कला के आयोजन होंगे। 7 नवंबर को मिंटो हॉल के परिसर में विश्वरंग साहित्य समारोह का शुभारंभ होगा। विभिन्न भारतीय भाषाओं के साहित्यकारों की उपस्थिति में होने वाले इस समारोह में हिन्दी कहानी के दस्तावेजी संग्रह 'कथादेश' का लोकार्पण, रवीन्द्र कैटलॉग तथा विश्व रंग कैटलॉग का विमोचन किया जाएगा। इस अवसर पर ध्रूपद गायक गुंदेचा बंधुओं द्वारा स्वस्तिगान, टैगोर के नाटक 'चांडालिका', टैगोर की ही कविताओं पर आधारित संगीत-नृत्य रूपक 'गीतांजलि' तथा ख्यात सुंदरीवादक भिमन्ना जादव एवं समूह का सुंदरीवादन, आर्मी बडि, हारमनी ग्रुप और रेनी वृंद का का वृंद संगीत, सत्येन्द्र सिंह सोलंकी-भास्कर दास की संतूर-बांसुरी जुगलबंदी, आमीर खान का सरोद वादन, अमित मलिक का वायोलिन बादान, ध्रूपद गुरूकुल संस्थान का समूह गान, कबीर गायन तथा लोक और आदिवासी नृत्य संगीत की प्रस्तुतियाँ होंगी। सिनेमा से इरशाद कामिल, आशुतोष राणा, स्वानन्द किरकिरे, ज्योति कपूर, राजेन्द्र गुप्ताय वसीम बरेलवी, शीन काफ निजाम, राहत इंदौरी, राजेश रेड्डी जैसे नामचीन शायरय डॉ धनंजय वर्मा, चित्रा मुद्गल, ममता कालिया, पुरूषोत्तम अग्रवाल, नरेश सक्सेना, रमेशचन्द्र शाह आदि साहित्यकारय दुनिया के विश्वविद्यालयों के व्याख्याता आदि से मिलने-बतियाने-सुनने का यह अवसर होगा। 10 नवंबर को समाहार के रूप में अलंकरण और वनमाली कथा सम्मान में पूर्व राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी और उत्तर प्रदेश की माननीय राज्यपाल आनंदीबेन पटेल की विशेष उपस्थिति में चयनित रचनाकारों को वनमाली सम्मानों से विभूषित किया जाएगा। विश्वरंग की वेबसाइट www.tagorelitfest.com पर रजिस्ट्रेशन के बाद समारोह में निःशुल्क प्रवेश की व्यवस्था रहेगी। स

वनमाली कथा सम्मानों की घोषणा

वनमाली सृजन पीठ द्वारा प्रत्येक दो वर्षों में दिए जाने वाले प्रतिष्ठित वनमाली कथा सम्मान, वनमाली कथा आलोचना सम्मान और वनमाली साहित्विलक पत्रिका सम्मान की घोषणा कर दी गई है। इस वर्ष लोकप्रिय और चर्चित कथाकार प्रियंवद को राष्ट्रीय वनमाली कथा सम्मान, कथाकार रणेन्द्र और भगवानदास मोरवालको वनमाली कथा सम्मान, युवा कथाकार मनोज पांडेय, तरूण भटनागर और गौरव सोलंकी को वनमाली युवा कथा सम्मान प्रदान किया जायेगा। वरिष्ठ आलोचक विनोद शाही को वनमाली कथा आलोचना सम्मान और युवा आलोचक राहुलसिंह को वनमाली कथा युवा आलोचना सम्मान दिया जाएगा जबकि वनमाली साहित्यिक पत्रिका सम्मान साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित पत्रिका समकालीन भारतीय साहित्य? को दिये जाने का निर्णय लिया गया है। इस वर्ष वनमाली विशिष्ट कथा सम्मान से किरण सिंह और उपासना चौबे को सम्मानित किया जा रहा है।

इस वर्ष के वनमाली सम्माानों का चयन संतोष चौबे की अध्यिक्षता में पांच सदस्यी य समिति जिसमें मुकेश वर्मा, लीलाधर मंडलोई, बलराम गुमास्तात, महेन्द्रन गगन शामिलथे, ने किया। कथाकार प्रियंवद का चयन कहानी में उनके सरस कथन और विरलक्राफ्ट को दृष्टिगत करते हुए किया गया। वे प्रेम के अद्विमतीय चितेरे है। उनकी भाषा ठेठ गद्य की भाषा है और सूक्ष्मम अन्वेंषिण के चलते वे कथा को अधिक प्रभावी तथा विश्वैसनीय बनाते हैं। जबकि अन्यऔ कथाकारों का चयन कथा जगत में उनकी समकालीन उपस्थिति, सक्रियता और योगदान के चलते किया गया है। कथा सम्मा न के अतिरिक्त् चयन समकालीन परिवेश में उनके सार्थक हस्त क्षेप और सर्जनात्मगकता को ध्याघ्न में रखकर किया गया है।

गौरतलब है कि इन सम्मानों की स्थापना कथाकार जगन्नाथ प्रसाद चौबे वनमाली? की स्मृति में 1993 में की गई थी।

उक्त सभी पुरस्कार टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव विश्व रंग? के दौरान 10 नवम्बिर को प्रदान किये जाएंगे। वनमाली सृजन पीठ एवं रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय भोपालद्वारा हिन्दी और भारतीय भाषाओं को केन्द्र में रखते हुए वैचारिक विमर्श तथा सांस्कृतिक आपसदारी का विराट समागम विश्व रंग टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव 7 नवंबर से 10 नवंबर 2019 तक भोपालमें आयोजित किया जा रहा है। लगभग 60 सत्रों में संयोजित यह विश्व कुंभ अनेक विषयों का अनूठा मंच होगा जो भारत के पूर्व राष्ट्रपति भारत रत्न श्री प्रणव मुखर्जी एवं देश-विदेश के 500 से अधिक विद्वानों के आत्मीय सान्निध्य में सम्पन्न होगा। स

उक्त सभी पुरस्कार टैगोर अंतर्राष्ट्रीय साहित्य एवं कला महोत्सव विश्व रंग के दौरान 10 नवम्बर को प्रदान किये जाएंगे

प्रियंवद
उत्तरप्रदेश, भोपाल

रणेन्द्र
झारखण्ड, भारत

भगवानदास मोरवाल
हरियाणा, भारत

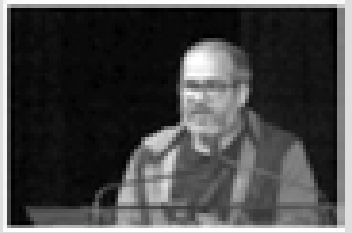

मनोज कुमार पांडेय
उत्तरप्रदेश, भारत

तरूण भटनागर
मध्यप्रदेश, भारत

उपासना चौबे
उत्तरप्रदेश, भारत

गौरव सोलंकी
महाराष्ट्र, भारत

विनोद शाही
हरियाणा, भारत

राहुल सिंह
झारखंड, भारत

किरणसिंह
उत्तरप्रदेश, भारत

हिन्दी भवन में हिन्दीतर भाषा हिन्दी सेवी सम्मान

भोपाल। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का वार्षिक आयोजन हिन्दी सेवी सम्मान समारोह 2019 गांधी जयंती पर सुबह साढ़े दस बजे हिन्दी भवन में राज्यपाल श्री लालजी टंडन के मुख्य आतिथ्य और जनसंपर्क मंत्री पी.सी.शर्मा के विशिष्ट आतिथ्य में संपन्न हुआ। समारोह के प्रारंभ में 150वीं जयंती पर राष्ट्रपिता गांधी और जन्मदिवस पर लालबहादुर शास्त्री को स्मरण किया गयां इस अवसर पर मंत्री संचालक कैलाशचन्द्र पंत ने स्वागत वक्तव्य दिया। हिन्दी सेवी सम्मान समरोह में राज्यपालजी ने अपने उद्बोधन में कहा कि दुनिया में हिन्दी एक ऐसी भाषा है जो सबको बाँधने वाली है। हिन्दी की बात करने का यह मतलब नहीं कि हिन्दी को दूसरी भाषाओं पर थोपा जाय। जनसंपर्क मंत्री पीसी शर्मा ने कहा कि गांधी दर्शन और विचार वास्तव में भारतीय समाज के विचार हें, भारत का दर्शन है। इस मौके पर समिति के उपाध्यक्ष रघुनंदन शर्मा, साहित्यकार और हिन्दी भाषाप्रेमी मौजूद थे।

इस अवसर पर हिन्दी को कार्यक्षेत्र की भाषा के रूप में अपनाने वाले जो अहिन्दी भाषी सेवी सम्मानित हुए वे हैं सर्वश्री विनायक व्ही टेन्भूर्ने, सुन्दर किशनानी, विलास मोहरीर, एस.डी.माहुरकर, व्ही. श्रीनिवास राव, एम.एल.तौरानी, श्रीमती नीलम भोगल, सरस्वती कामऋषि, श्रीमती अनीता सक्सेना, गुजरात प्रांतीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, अहमदाबाद, प्रोफेसर सूर्यप्रकाश चतुर्वेदी को एवं हिन्दीतर भाषी लेखकों की कृतियों पर पुरस्कार पाने वाले चन्द्रभानु आर्य, जया आर्य, श्रीमती अनघा जोगलेकर, राजेन्द्र शर्मा, सावित्री जगदीश, श्रीमती मीनाक्षी सिंह, श्रीमती मीरा सिंह, श्रीमती अमिता जैन, विवेक गुप्ता, चन्द्रशेखर शर्मा, कामना श्रीवास्तव, अजय दुबे, अनिमेष दुबे। हिन्दी सेवी सम्मान समारोह का संयोजन युगेश शर्मा एवं मंच का संचालन शीला मिश्रा ने किया।

प्रस्तुति : कांता राय, भोपाल

नमकसार का लोकार्पण एवं कृति-चर्चा

जयपुर। गत दिनों 'स्पंदन' संस्थान, जयपुर के तत्वावधान से रजनी मोरवाल के सामयिक प्रकाशन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित कहानी-संग्रह 'नमकसार' का लोकार्पण एवं कृति-चर्चा का आयोजन किया गया जिसमें प्रख्यात उपन्यासकार चित्रा मुद्गल ने कहा कि रजनी मोरवाल की कहानियों में भाषा बहती है और फार्मूला स्त्री-विमर्श को तोड़ती हुई कहानियाँ हैं जो सोचने को मजबूर करती हैं। श्रीमती नीलिमा टिक्कू, संस्थापक एवं अध्यक्ष, स्पंदन संस्थान ने सभी का स्वागत किया। कृति की समीक्षा प्रसिद्ध कथाकार चरणसिंह 'पथिक' तथा उमा जी द्वारा की गई। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि साहित्यकार नंद भारद्वाज ने संग्रह को 'स्त्री-विमर्श की गहरी पड़ताल करती कहानियाँ बताया। विशिष्ट अतिथि डॉ.दुर्गाप्रसाद अग्रवाल ने कहा कि रजनी मोरवाल की कहानियों में एक परिवेश शामिल होता है जो पाठकों के समक्ष चित्रण प्रस्तुत करता है जो कहानियों को अपने आप पढ़ाते चले जाते हैं। फ़ारूख अफरीदी, ईश मधु तलवार, गोविंद माथुर, पवन सुराणा,श बनज कुमार 'बनज' आदि गणमान्य साहित्यकारों ने कार्यक्रम में शिरकत की। संचालन प्रेमचंद गांधी ने किया और धन्यवाद ज्ञापन सामयिक प्रकाशन के महेश भारद्वाज ने किया।

प्रस्तुति : नीलिमा टिक्कू

कमलेश पाण्डेय को मिला ज्ञान चतुर्वेदी व्यंग्य सम्मान

उज्जैन। बेहतर व्यंग्य लेखन के लिए व्यंग्य की परम्पराओं का ज्ञान जरूरी है क्योंकि नए लेखन के पीछे परम्पराओं का ही योगदान होता है। ये विचार गत दिनों स्थानीय कालिदास अकादमी में राष्ट्रीय व्यंग्य लेखक समिति द्वारा आयोजन ज्ञान चतुर्वेदी व्यंग्य सम्मान में प्रख्यात व्यंग्यकार डॉ.ज्ञान चतुर्वेदी ने प्रमुख अतिथि के रूप में व्यक्त किये। अध्यक्षीय उद्बोधन देते हुए साहित्यकार प्रमोद त्रिवेदी ने कहा कि सार्थक लेखन वह है जो अपने समय की चुनौतियों को पेश कर सके। श्री राहुल देव ने इस अवसर पर स्व.सुशील सिद्धार्थ के अवदान को रेखांकित किया। व्यंग्य लेखक समिति के स्व.सुशील सिद्धार्थ द्वारा स्थापित वर्ष 2019 का ज्ञान चतुर्वेदी सम्मान, नई दिल्ली के वरिष्ठ व्यंग्यकार कमलेश पाण्डेय को, मुख्य अतिथि ज्ञान चतुर्वेदी प्रमोद त्रिवेदी, ईश्वर शर्मा, पिलकेन्द्र अरोरा, मुकेश जोशी और हरीशकुमार सिंह द्वारा सम्मान राशि ग्यारह हजार रूपये, शाल श्रीफल और सम्मान पत्र प्रदान कर सम्मानित किया गया। सम्मानित व्यंग्यकार कमलेश पाण्डेय ने कहा कि ज्ञान जी की परंपरा को आगे बढ़ाने का प्रयास करूंगा हालांकि ऐसा करना कठिन और चुनौतीपूर्ण है। स्वागत भाषण शांतिलाल जैन ने दिया। समारोह में भोपाल के व्यंग्यकार विजी श्रीवास्तव के व्यंग्य संकलन 'इत्ती सी बात और स्व.सुशील सिद्धार्थ के व्यंग्य संकलन 'आखेट' का विमोचन भी किया गया। उद्घाटन एवं सम्मान सत्र के बाद प्रख्यात व्यंग्यकार डॉ.शिव शर्मा की स्मृति को समर्पित व्यंग्य विमर्श के तीन सत्र आयोजन किये गये जिनमें व्यंग्य उपन्यास दशा और दिशा, सत्र में युवा व्यंग्य लेखन सत्र में समकालीन युवा व्यंग्य : कितना पारंपरिक कितना नवीन तथा स्त्री व्यंग्य लेखन में इतर चुनौतियां विषय पर आयोजित सत्र हुए।

व्यंग्य पाठ सत्र में देशभर से पधारे व्यंग्यकारों ने व्यंग्य पाठ किया जिनमें सर्वश्री प्रभाशंकर उपाध्याय, सुनील जैन राही, विजी श्रीवास्तव, अनुज खरे, कैलाश मंडलेकर, अर्चना चतुर्वेदी, नीरज शर्मा, इन्द्रजीत कौर, जगदीश ज्वलंत, सौरभ जैन, सुदर्शन सोनी, मृदुल कश्यप, अक्षय नेमा, कमलेश पाण्डेय, सुधीरकुमार चौधरी, मुकेश जोशी, पिलकेन्द्र अरोरा, शांतिलाल जैन, शशांक दुबे, राजेन्द्र देवधरे दर्पण आदि ने व्यंग्य पाठ किया। आयोजन समिति द्वारा ज्ञान चतुर्वेदी का शाल श्रीफल और आभार पत्र प्रदान कर सम्मान किया गया। आयोजन में साहित्यकार सम्पादक श्रीराम दवे, प्रो.हरिमोहन बुधौलिया, अरुण वर्मा, शिव चौरसिया, देवेन्द्र जोशी, शैलेन्द्रकुमार शर्मा, शशिमोहन श्रीवास्तव, यूएस छाबड़ा, राजेन्द्र व्यास, उर्मि शर्मा, प्रकाश रघुवंशी, ओम अमरनाथ, विवेक चौरसिया, आशीष दुबे, संदीप सृजन, चंदर सोनाने, अनिल कुरेल, डॉ.पुष्पा चौरसिया, संतोष सुपेकर, संदीप नाडकर्णी, रमेशचन्द्र शर्मा आदि उपस्थित रहे। स्वागत मुकेश जोशी, शांतिलाल जैन, शशांक दुबे, संजय जोशी सजग, हरीशकुमार सिंह द्वारा किया गया। कार्यक्रम एवं सत्रों का संचालन पिलकेन्द्र अरोरा एवं ईश्वर शर्मा ने किया। आभार हरीशकुमार सिंह ने व्यक्त किया।

प्रस्तुति : पिलकेन्द्र अरोरा एवं हरीश कुमार सिंह

कमर मेवाड़ी को साहित्य प्रतिभा पुरस्कार

राजसमन्द। गत दिनों वरिष्ठ साहित्यकार कमर मेवाड़ी को डूण्डलोद विद्यापीठ (झुन्झुनू) की स्थापना के 23वें वर्ष प्रवेश के अवसर पर श्रीमती शारदा रमाकान्त शर्मा स्मृति साहित्य प्रतिभा पुरस्कार से सम्मानित किया गया। ज्ञातव्य है कि पुरस्कार के अन्तर्गत शाल, चांदी का श्रीफल, अभिनंदन पत्र तथा इक्कीस हजार रूपये नकद राशि भेंट कर कमर मेवाड़ी जी को सम्मानित किया गया। समारोह में स्वागत उद्बोधन रमाकान्त शर्मा, मुख्य सलाहकार डूण्डलोद विद्यापीठ, अध्यक्षता सुप्रसिद्ध कथाकार एवं अक्सर पत्रिका के संपादक हेतु भारद्वाज मुख्य अतिथि रोशन जैन महात्मा, प्रमुख वक्ता सूरज पालीवाल, पूर्व प्रोफेसर महात्मा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय वर्धा थे। धन्यवाद ज्ञापन मुकेश पारी द्वारा किया गया।

प्रस्तुति : राधेश्याम सरावगी मसूदिया

साहित्य के दो नोबेल सम्मान एक साथ

वर्ष 2018 में जब साहित्य का नोबेल सम्मान किसी को नहीं दिया गया था तो सारी दुनिया में आश्चर्य व्यक्त किया गया था। स्वीडिश अकादमी ने 2018 और 2019 के दोनों नोबेल इस वर्ष घोषित किए। वर्ष 2018 के लिए ओल्गा तोकारजुक पोलेंड की लेखिका एवं 2019 के लिए आस्ट्रियायी लेखक पीटर हेंडके को दिया गया। पीटर हेंडके ने तो एक बार नोबेल सम्मान को निरर्थक कहकर मजाक भी उड़ाया था। खैर जो भी हो लेखकीय गुणवत्ता के लिए दोनों सम्मानित साहित्यकारों को समावर्तन की बधाई।

प्रख्यात उपन्यासकार, कवि, समीक्षक और संस्कृतिकर्मी श्री संतोष चौबे के बहुपठित एवं बहुचर्चित उपन्यास 'जलतरंग' का साहित्य जगत में बहुत आदर के साथ स्वागत हुआ और विभिन्न संगोष्ठियों में देश के मूर्धन्य विद्वानों ने सराहना भी की। इसी तारतम्य में अब हम सुपरिचित लेखक और काव्य-संग्रह 'कवि कपूत' से प्रसिद्ध कवि बलराम गुमास्ता के विचारों को जानेंगे जो उन्होंने इस उपन्यास को पढ़ते हुए अपनी टिप्पणी में व्यक्त कीं।

वे कहते हैं कि कवि होने के नाते इस उपन्यास पर दो-चार बातें वे कविता की दृष्टि से कहना चाहेंगे। एक तो यह कि रोम जल रहा है और बाँसुरी बज रही है। यह एक बुनियादी प्रश्न उठता है। जब समाज और देश इतने विखण्डन, इतनी उथल-पुथल से गुजर रहा है, सारी दुनिया भयानक शोर से गुजर रही है- जैसा कि हम सब सार्वजनिक तौर पर अमूमन यही बातें करते हैं कि देश के लोग विस्थापन और पलायन की त्रासदी से गुजर रहे हैं, लोगों की तकलीफें दिनोंदिन बढ़रही हैं और ऐसी ही आत्मघातक प्रवृत्तियाँ और उनको लेकर तमाम किस्म की जटिलताएँ भी तो ऐसे में ये जो बाँसुरी बजाने वाला एक राग- या कहना चाहिए कि- अवसाद का राग है, क्या अर्थ और आशय देता है ?

इन संदर्भो में उपन्यास 'जलतरंग' कहाँ अपना प्रोटेस्ट कैसे कर पा रहा है, कि सामाजिक सरोकार की भूमिका उसकी कैसे बनती है। क्योंकि आपने देखा कि संगीत का अपना महत्त्व है, इतिहास का है, वह हमारे संस्कार और संस्कृति का जीवंत हिस्सा है। लेकिन अन्ततः हमारे सरोकार राजनैतिक और सांस्कृतिक बनने चाहिए, समसामयिक बनने चाहिए, तो प्रश्न बनता है कि अगर आपने उपन्यास लिखा है तो आज अपनी सामाजिक जिम्मेदारी को कैसे निभाते हैं ? एक जागरूक लेखक की हैसियत से इन प्रश्नों पर किस तरह विचार करते हैं ?

बहुत खूबसूरती से संतोष जी ने बेहतर तरीके से इन प्रश्नों के उत्तर देने की कोशिश की है और उसके तीन अन्त देने की कोशिश की है। उसके लगभग तीन उपन्यास बन सकते हैं। क्योंकि एक अन्त के साथ आप पाते हैं कि कथा पूरी हो जाती है। प्रोटेस्ट की बात वहाँ वो सामने रख रहे हैं। एक तो यह कि वह अपना बलिदान देकर प्रोटेस्ट कर सकता है इस पूरे शोर का, इस पूरे विखण्डन का, इस पूरे कब्जे का, इस अराजकता का। न कानून है, न नियम है, न कार्यपालिका है, न न्यायपालिका है। हाथ में उसके हा कोर्ट का जजमेन्ट भी है, उसका कार्यपालन करने वाले लोग, पुलिस कमिश्नर को कहीं नहीं है और अन्ततः उसको भी विस्थापन की त्रासदी से, शहर से बाहर होना पड़ता है। कितनी बड़ी पीड़ा है! एक शान्ति और सुखमय जीवन के कुछ पल भी आदमी अपने जीवन में अगर नहीं बिता सकता, अगर इतना ऊहापोह है तो ये भयानक है। यहाँ एक छोटा-सा रिफरेन्स देकर मैं अपनी बात खत्म करूँगा। समय बहुत बात करने का नहीं है।

कविता की दृष्टि से देखता हूँ, मुझे क बार लगता है, जैसे सूरज से आने वाला प्रकाश है, उसकी किरणें हैं और वो किरणें सिर्फ प्रकाश किरणें नहीं हैं उसमें तापीय किरणें भी हैं। उसमें इन्फोरेट रेडियन्स है, उसमें इलेक्ट्रो मैगनेट वेब्स भी हैं। लेकिन अगर आप उसकी ऊर्जा को घटाते चले जायेंगे तो उसकी फ्रिक्वेन्सी और आवृत्ति जो होगी, वो संगीत में भी होगी, संगीत की तरह भी प्रकाश बरस सकता है धरती पर। मेरा ख्याल है कि कहीं दूरस्थ ऐसे भी ग्रह पिण्ड हो सकते हैं जहाँ सूरज से जाने वाला प्रकाश संगीत की तरह बरसता हो।

तो कवि के नाते, चूँकि एक किताब है और उसके बहाने आप बहुत सारे विमर्शो में जा सकते हैं। आपकी कल्पना बहुत इधर-उधर तक जाती है। मैं उपन्यास को पढ़ता हूँ लेकिन मेरी बाकी प्रज्ञा जो है, उसका अपना क्षेत्र है, उसके लिए उसमें एक बहाना मिलता है। ऐसी तमाम बातें हैं। धरती घूम रही है, उसका भी अपना एक संगीत है। हम जो संगीत बजा रहे हैं, उस परम संगीत में हम अपना योगदान देते हैं, शायद उसकी वजह से हमें वो परम शान्ति मिलती है। आखिर उसका क्या वैज्ञानिक तथ्य है? ये तमाम विषय हैं जो इससे उपजते हैं और एक किस्म का विचार सामने आता है।

एक बहुत सुन्दर बात है, जो हमारे इतिहास में भी है और एक जो जीवन में चलने वाला महाभारत है। मंगलेश जी से बात करते हुए हमने उसका सन्दर्भ भी देखा है। जीवन है, उसमें एक पक्ष है एक विपक्ष है, एक संगीत है एक शोर है, एक जीवन है एक मृत्यु है। इस तरह का एक भयानक संघर्ष है। दोनों सेनाएँ महाभारत के युद्ध में खड़ी हुई हैं। एक तरफ पाण्डवों की सेना है और दूसरी ओर पूरा विपक्ष है। इसमें एक बहुत सुन्दर तथ्य सामने आता है, मैं आपके सामने यहाँ उसको रखना चाहूँगा।

भीष्म शंख बजाते हैं। जरा ध्यान दीजियेगा। भीष्म ने शंख बजाया और उसके बाद ढोल, नगाड़े, मृदंग तमाम किस्म की चीजें एक साथ बजने लगीं और इस तरह मिथ्या सिद्धान्तों पर चलने की घोषणा भीष्म ने की। जो युद्ध की घोषणा की, वो मिथ्या सिद्धान्तों पर चलने की घोषणा थी। आज ये देश जिस मिथ्या सिद्धान्तों पर, जिस मिथ्या विचार पर, जिस मिथ्या प्रोग्रेस पर और उसके तमाम ओर संकेत कर रहा है- ये सारा झूठ है। इस तरह की युद्ध की घोषणा की गयी है। इस तरह के युद्ध से समाज आज निपट रहा है।

दूसरी तरफ देखते हैं, क्या सीन बनता है? एक सेना यहाँ खड़ी है। ये शोर की सेना है और वो हम अपने जीवन में देख रहे हैं। दूसरी तरफ .ष्ण ने पाञ्चजन्य शंख बजाया, अर्जुन ने देवदत्त शंख बजाया, भीम ने पौण्डरू महाशंख बजाया। युधिष्ठिर ने अनन्त विजय, नकुल ने सुघोष और सहदेव ने मणिपुष्पक शंख बजाया। बड़ी भुजाओं वाले अभिमन्यु ने अपना शंख बजाया। ये सात शंख इस सुर में बज रहे हैं और इनका समवेत स्वर- जो ज्ञान का स्वर है, सच्चा का स्वर है, संघर्ष का स्वर है, वो शोर से सामना करने के लिए तैयार खड़ा हुआ है और इस तरह सम्पूर्ण सद्वृत्तियाँ मिलकर दुर्वृत्तियों को ललकारने के लिए खड़ी हो गयीं।

यह जो महाभारत का युद्ध है, ये जीवन का युद्ध है, इसका भी युद्ध है। यह जो उपन्यास है इसका कन्टेन्ट भी है और हमारे जीवन की रोज-रोज की गतियाँ हैं, विसंगतियाँ हैं, इनके बीच के झगड़े, इनकी टूटन। जैसे जोशी जी ने लिखा है- 'ये पुल सा टूट गया है स्वरों के बीच।' उन पुलों को रिपेयर करने का, साधने का इतना खूबसूरत प्रयत्न चौबे जी ने किया है। लम्बे समय तक उनकी प्रक्रिया का, दोस्ती का, मित्रता का साथ हम लोगों का रहा है। बहुत सारी उसकी घटनाओं और उसके साथ हम लोगों की संगत रही है। बहुत गहरे से हमने उसको अनुभव किया है। क्योंकि इसमें कविता का तत्त्व है।

अंत में, मैं अपनी बात खत्म करूँ, कविता का एक टुकड़ा मैं अपना सुना देता हूँ। वह भी संगीत को लेकर है। छोटा-सा टुकड़ा है-

तभी एक लड़की अपना अल्हड़ सौन्दर्य लिये
अचानक गुजर जाती है मेरे बगल से
विश्वास से भरी-भरी छलकाती
पत्थरों पर आदिम संगीत
कुछ इस तरह कि मैं एक अनुगूंज में उतरता हूँ
और कबाड़ में पड़े किसी पुराने वाद्य में
बहुत देर तक बजता हूँ।

तो ये भी कविता है और वह पूरा उपन्यास भी कविता है मेरे लिए।

मुकेश वर्मा
मोबाइलः 94250-14166

प्रतिष्ठित कुसुमांजलि सम्मान से सम्मानित हुए डॉ.भट्टाचार्य

औपन्यासिक कृति 'मगरमुँहा' के लेखन पर मिला यह सम्मान

उज्जैन। विख्यात कथाकार, कवि, रंगकर्मी और शिक्षाविद डॉ.प्रभातकुमार भट्टाचार्य द्वारा रचित औपन्यासिक कृति 'मगरमुँहा' अपनी अभिनव संरचना और सामाजिक क्रांति के माध्यम से जिस आदर्श को प्रस्तुत करता है वह निश्चित ही प्रशंसनीय है और यही कारण है कि प्रतिवर्ष दिये जाने वाले हिन्दी और हिन्दीतर लेखकों के सृजन को सम्मानित करने के लिए प्रतिबद्ध कुसुमांजलि फाउण्डेशन नईदिल्ली द्वारा वर्ष 2019 का प्रतिष्ठित कुसंमांजलि सम्मान उन्हें प्रदान कर फाउण्डेशन गौरवान्वित है।

उपरोक्त विचार देश के जाने-माने पत्रकार श्री आलोक मेहता ने कुसुमांजलि सम्मान चयन समिति के अध्यक्ष के नाते डॉ.भट्टाचार्य के निवास पर रविवार को सुबह नगर के सुधि सृजनधर्मियों की उपस्थिति में वर्ष 2019 का कुसुमांजलि सम्मान प्रदान करते हुए व्यक्त किये। इस अवसर पर कुसुमांजलि फाउण्डेशन के अधिकारी श्री मनोज विजयन और आलोक मेहता ने शाल, स्मृति चिह्न, प्रशस्ति पत्र और पुष्पमाला के साथ-साथ ढाई लाख रूपये का चेक प्रदान कर डॉ. भट्टाचार्य को सम्मानित किया।

कार्यक्रम में विक्रम विश्वविद्यालय के यशस्वी कुलपति डॉ.बालकृष्ण शर्मा तथा कवि, कथाकार प्रो.प्रमोद त्रिवेदी ने डॉ.भट्टाचार्य के साहित्यिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक अवदान का विस्तार से उल्लेख किया तथा कहा कि उज्जैन की पृष्ठभूमि पर आधारित इस उपन्यास में निहित आदर्श चेतना ने यहाँ के एक मोहल्ले को देश दुनिया में स्पन्दित कर सृजन का जो उन्मेष रचा है, उसे तो सम्मानित होना ही था। सर्वथा अनौपचारिक और गरिमामय इस आयोजन का संचालन करते हुए समावर्तन हिन्दी मासिक के संपादक श्री श्रीराम दवे ने अपने प्रारंभिक वक्तव्य में कहा कि प्रतिवर्ष अगस्त माह में नईदिल्ली में दिये जाने वाले इस सम्मान के लिए अपरिहार्य कारणों से डॉ.भट्टाचार्य नईदिल्ली नहीं जा पाये थे। अतः आयोजक संस्था तथा चयन समिति के अध्यक्ष ने यह सम्मान उज्जैन आकर देना उचित समझा जो निश्चित ही स्वागत योग्य और सराहनीय पहल है। अपने सम्मान के प्रत्युत्तर में डॉ.प्रभातकुमार भट्टाचार्य ने अत्यन्त विनम्रता के साथ इस सम्मान को स्वीकार किया तथा कुसुमांजलि फाउण्डेशन की संस्थापक वरिष्ठ कथाकार डॉ.कुसुम अंसल तथा चयन समिति के सभी सदस्यों के प्रति अपनी कृतज्ञता और आभार व्यक्त किया। चूंकि कुसुमांजलि सम्मान समारोह इस बार उज्जैन आकर डॉ.भट्टाचार्य के निवास जो कि समावर्तन हिन्दी मासिक का संपादकीय कार्यालय भी है, के सभाकक्ष में दिया जा रहा है। इसलिए समावर्तन के संपादक श्रीराम दवे, कला संपादक अक्षय आमेरिया, कार्यकारी संपादक हरीशकुमार सिंह, सहायक संपादक हरदीप दायले तथा प्रमुख कम्प्यूटर ऑपरेटर श्री विवेक शर्मा ने कुसुमांजलि फाउण्डेशन से सम्बद्ध पदाधिकारियों श्री आलोक मेहता तथा श्री मनोज विजयन का पुष्पमालाओं से स्वागत किया।

इस अवसर पर कथाकार प्रतापसिंह सोढ़ी (इन्दौर), श्री हरिमोहन बुधौलिया, डॉ.शैलेन्द्र कुमार शर्मा, डॉ.शिव चौरसिया, डॉ.पिलकेन्द्र अरोरा, डॉ.प्रकाश रघुवंशी, डॉ.शैलेन्द्र पाराशर, समीक्षक अशोक वक्त, रंगकर्मी शरद शर्मा एवं सतीश दवे, वरिष्ठ पत्रकार सुनील जैन, डॉ.देवेन्द्र जोशी, समाजसेवी रविप्रकाश लंगर, संतोष सुपेकर, सुरेन्द्र शर्मा, प्रकाश बांठिया, योगेन्द्र पोरवाल, शीतल अक्षय, अमिताभ सुधांशु सहित नगर के कई साहित्यकार और संस्कृति प्रेमी सहित मीडिया के महानुभाव उपस्थित थे। कार्यक्रम के अंत में हरीशकुमार सिंह ने सभी के प्रति आभार व्यक्त किया।

प्रस्तुति - हरदीप दायले व विवेक शर्मा